आधुनिक हिन्दी कविता में हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ

ADHUNIK HINDI KAVITHA MEM HIMALAY KE SANSKRITIK SANDARBH

THESIS SUBMITTED TO
COCHIN UNIVERSITY OF SCIENCE AND TECHNOLOGY
FOR THE DEGREE OF

DOCTOR OF PHILOSOPHY

By
ANURADHA P. K.

Supervising Teacher
Dr. L. SUNEETHA BAI
Professor, Department of Hindi

DEPARTMENT OF HINDI
COCHIN UNIVERSITY OF SCIENCE AND TECHNOLOGY
KOCHI - 682 022

2001

CERTIFICATE

*This is to certify that the thesis entitled "**ADHUNIK HINDI KAVITHA MEM HIMALAY KE SANSKRITIK SANDARBH**" is a bonafide record of work carried out by **Miss. ANURADHA P.K.** for the degree of **DOCTOR OF PHILOSOPHY** in the Department of Hindi under my supervision and guidance. No part of this thesis has hitherto been submitted for a degree in any University.*

29/10/2001

Dr. L. SUNEETHA BAI

Department of Hindi,
Cochin University of Science and Technology,
Kochi-682 022.

ACKNOWLEDGEMENT

This research work was carried out in the Department of Hindi, Cochin University of Science and Technology, Kochi-682 022. I sincerely express my gratitude to the Cochin University of Science and Technology for all help and encouragement given to me.

ANURADHA P. K.

Department of Hindi,
Cochin University of Science and Technology,
Kochi-682 022

Date: 29.10.2001

विषय-सूची

पृष्ठ संख्या

भूमिका I - VI

पहला अध्याय

हिमालय का सांस्कृतिक स्वरूप एवं महत्व 1 - 63

भारतीय संस्कृति का गौरव-स्तम्भ-हिमालय

हिमालय के भौगोलिक एवं प्राकृतिक संदर्भ :

भारत की भौगोलिक स्थित और हिमालय - हिमालय की उत्पत्ति एवं स्वरूप - हिमालय-विस्तार एवं स्वरूप - हिमालय की प्रमुख पर्वत श्रेणियाँ - हिमालय की प्रमुख नदियाँ - हिमालय की खनिज-संपदा-हिमालय की जनजातियाँ - भारतीय कलाओं का पोषक-हिमालय-हिमालय का प्राकृतिक वन-संपदा - हिमालय के रमणीय स्थान

हिमालय के धार्मिक, आध्यात्मिक एवं नैतिक संदर्भ :

हिमालय के प्रमुख तीर्थ स्थान एवं धार्मिक महत्व - हिमालय के प्रमुख त्योहार एवं उत्सवों का धार्मिक महत्व - हिन्दू धर्मावलम्बियों केलिए देवताओं का वासस्थान हिमालय - पौराणिक परिप्रेक्ष्य में हिमालय-(वेदों, उपनिषदों, पुराणों, रामायण, महाभारत के संदर्भ में) - तपस्वियों एवं ऋषियों की तपस्थली - हिमालय (आध्यात्मिक संदर्भ) - नैतिक संदर्भ में हिमालय - अतिथिसत्कार - तपशीलता - करुणा एवं त्याग भाव - मौन का महत्व - राष्ट्ररक्षार्थ आत्मबलिदान

हिमालय के राष्ट्रीय संदर्भ :

हिमालय का राष्ट्रीय महत्व - चीन एवं पाकिस्तान के युद्ध के संदर्भ में हिमालय

हिमालय के पर्यायवाची शब्द और उनका सांस्कृतिक संदर्भ :

भारतीय साहित्य में हिमालय :

कालिदास का हिमालय - (कुमारसंभव, मेघदूत एवं रघुवंश के संदर्भ में) - साहित्यिक विधाओं में हिमालय - आधुनिक हिन्दी काव्यों में हिमालय संक्षिप्त विवरण – निष्कर्ष

दूसरा अध्याय

द्विवेदीयुगीन हिन्दी कविता में हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ 64 - 122

द्विवेदीयुग एवं काव्यगत प्रवृत्तियाँ - परिचय :

द्विवेदीयुगीन प्रमुख कवि और उनकी हिमालय सम्बन्धी कविताएं - एक परिचय :

मैथिलीशरण गुप्तः 'भारत की श्रेष्ठता', 'गन्धमादन', 'मातृभूमि', 'हिमगिरि के उन्नत ललाट हम', 'रहे हिमालय तुम हिन्दी वे' – माखनलाल चतुर्वेदी : 'सीमा ढूँढ रही है', 'वह हिमाद्रि', 'मेरा है हिम शैल', 'वीर पूजा', 'गंगा की विदा', 'बहने दो बलिपंथी धारा' – सोहनलाल द्विवेदीः 'हिमाद्रि का आत्मपरिचय', 'विषपान' – सियाराम शरण गुप्त : 'पूजन', 'रजकण' – हरिकृष्ण प्रेमी : 'हिमालय आज घायल है', 'रक्त-स्नान', 'रण-भेरी', 'यह मेरा काश्मीर', 'शहीदों की आवाज़' – रामनरेश त्रिपाठीः 'काश्मीर', 'द्विविधा', 'देख ली हमने मसूरी' – सुभद्राकुमारी चौहानः 'वीरों का कैसा हो वसन्त' – श्रीधर पाठक : 'काश्मीर सुषमा', 'भारत गीत', 'देहरादून', 'वीर भोग्य वसुन्धरा'

द्विवेदीयुगीन हिन्दी कविता में हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ

द्विवेदीयुगीन हिन्दी कविता में हिमालय के भौगोलिक एवं प्राकृतिक संदर्भ

द्विवेदीयुगीन हिन्दी कविता में हिमालय के धार्मिक संदर्भ

द्विवेदीयुगीन हिन्दी कविता में हिमालय के आध्यात्मिक संदर्भ

द्विवेदीयुगीन हिन्दी कविता में हिमालय के नैतिक संदर्भ

द्विवेदीयुगीन हिन्दी कविता में हिमालय के राष्ट्रीय संदर्भ

द्विवेदीयुग में हिमालय सम्बन्धी काव्यों का सृजन एवं उद्देश्य

निष्कर्ष

तीसरा अध्याय

छायावादी हिन्दी कविता में हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ 123 - 186

छायावाद युग एवं काव्यगत प्रवृतियाँ - परिचय :

छायावादी प्रमुख कवि और उनकी हिमालय सम्बन्धी कविताएं - एक परिचय :

जयशंकर प्रसाद : 'कामायनी', 'भरत', 'प्रयाण गीत' - सुमित्रानन्दन पन्त : 'हिमाद्रि', 'हिम-अंचल', 'रिक्त-मौन', 'हिमाद्रि स्तवन', 'हिमाद्रि और समुद्र-पर्वत प्रदेश में पावस', 'कूर्माचल के प्रति', 'गिरि-प्रांतर', 'प्रकृति स्मृति के वातायन से' - सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला : 'भारती वन्दना', 'कैलाश में शरत्', 'तुम और मैं' - महादेवी वर्मा : 'हे चिर महान', 'तू भू के प्राणों का शतदल', 'वेष धरे', 'हिमालय'

छायावादी हिन्दी कविता में हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ

छायावादी हिन्दी कविता में हिमालय के भौगोलिक एवं प्राकृतिक संदर्भ

छायावादी हिन्दी कविता में हिमालय के धार्मिक संदर्भ

छायावादी हिन्दी कविता में हिमालय के आध्यात्मिक संदर्भ

छायावादी हिन्दी कविता में हिमालय के नैतिक संदर्भ
छायावादी हिन्दी कविता में हिमालय के राष्ट्रीय संदर्भ
छायावादी हिन्दी कविता में हिमालय सम्बन्धी काव्यों का सृजन एवं उद्देश्य
निष्कर्ष

चौथा अध्याय

प्रगतिवादी हिन्दी कविता में हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ 187 - 239

प्रगतिवादी हिन्दी कविता एवं काव्यगत प्रवृत्तियाँ - एक परिचय :
प्रगतिवादी हिन्दी कवि और उनकी हिमालय सम्बन्धी कविताएं - एक परिचय :
नरेन्द्र शर्मा : 'कौसानी', 'कूर्माचल' – शिवमंगल सिंह सुमन : 'वातायन से हिमालय दर्शन', 'काठमण्डू की पहली साँझ', 'आह्वान', 'चित्रकार के प्रति', 'दुर्गम पथ पर गीतों के झरने से', 'आज देश की मिट्टी बोल उठी' – शम्भुनाथ सिंह : 'हिमालय', 'रसमय हिमालय' – नागार्जुन : 'बादल को घिरते देखा है', 'कालिदास', 'हिम कुसुमों का चंचरीक', 'सजीले प्रिय देवदार', 'बर्फ पडी है', 'सिन्धु नद', 'देवदार' 'बलाका', 'सफेद बादल' – केदारनाथ अग्रवाल 'गुरु गौरव गिरि सीमा पर' रामधारी सिंह दिनकर 'हिमालय', 'हिमालय का सन्देश', 'पहाड़ के फटने की आवाज़', 'परशुराम की प्रतीक्षा' - नीरज : 'सैनिकों का प्रयाग गीत', 'मानसरोवर आमुख है', 'कश्मीर के नाम'
प्रगतिवादी हिन्दी कविता में हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ
प्रगतिवादी हिन्दी कविता में हिमालय के भौगोलिक एवं प्राकृतिक संदर्भ
प्रगतिवादी हिन्दी कविता में हिमालय के धार्मिक संदर्भ
प्रगतिवादी हिन्दी कविता में हिमालय के आध्यात्मिक संदर्भ

प्रगतिवादी हिन्दी कविता में हिमालय के नैतिक संदर्भ

प्रगतिवादी हिन्दी कविता में हिमालय के राष्ट्रीय संदर्भ

प्रगतिवादी हिन्दी कविता में हिमालय सम्बन्धी काव्यों का सृजन एवं उद्देश्य — निष्कर्ष

पाँचवाँ अध्याय

प्रयोगवाद और नई कविता में हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ 240 - 290

प्रयोगवाद और नई कविता में काव्यगत प्रवृत्तियाँ - परिचय

प्रयोगवाद और नई कविता में प्रमुख कवि और उनकी हिमालय सम्बन्धी कविताएं - एक परिचय

तार सप्तक - सच्चितानन्द हीरानन्द वात्स्यायन अज्ञेय : 'असाध्यवीणा', 'बर्फ की झील', 'नन्दादेवी', 'दूर्वाचल' - नेमिचन्द्र जैन : 'सुनो, चीड़ के पेड़ सुनोगे' - गिरिजाकुमार माथुर 'बरफ का चिराग', *दूसरा सप्तक* भवानी प्रसाद मिश्र : 'शिखर प्रश्न', 'प्रलय', 'कमल के फूल' धर्मवीर भारती : 'घाटी का बादल' - शमशेर बहादूर सिंह : 'सत्यमेवजयते', 'अमन का राग' नरेश मेहता : 'महाप्रस्थान', 'उषस्', 'उषस 2 अश्व की वल्गा' - *तीसरा सप्तक* - विजयदेवनारायण साही : 'हिमालय की याद में एक पत्र', 'अर्धभस्म देवदार ' 'तीर्थ तो है वहीं', 'हिमालय के आँसू' - केदारनाथ सिंह : 'भारत की सीमा पर एक नेपाली शहर' *चौथा सप्तक* - कैलाश वाजपेयी 'हिमालय पार कर' - बालकृष्ण रावः 'बर्फ की दीवार', 'नीचे तलहाटियों से' - *नए कवि* - जगदीश गुप्तः 'हिम -विद्ध' काव्य संग्रह

प्रयोगवाद और नई कविता में हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ

प्रयोगवाद और नईकाविता में हिमालय के भौगोलिक एवं प्राकृतिक संदर्भ

प्रयोगवाद और नई कविता में हिमालय के धार्मिक संदर्भ

प्रयोगवाद और नई कविता में हिमालय के आध्यात्मिक संदर्भ

प्रयोगवाद और नई कविता में हिमालय के नैतिक संदर्भ

प्रयोगवाद और नई कविता में हिमालय के राष्ट्रीय संदर्भ

प्रयोगवाद और नई कविता में हिमालय संबन्धी काव्यों का सृजन और उद्देश्य

निष्कर्ष

उपसंहार 291 - 302

संदर्भ ग्रन्थ सूची I - XV

भूमिका

हिमालय भारत की उत्तर दिशा में स्थित प्रमुख पर्वत है, जिसने युग-युगों से भारत की सीमाओं को सुरक्षित रखने का भार अपने कन्धों पर उठाया है। भारतीय जीवन एवं संस्कृति से हिमालय का अक्षुण्ण संबन्ध रहा है। खान-पान, आचार-विचार, विश्वास आदि से उसका विशेष संबन्ध रहा है। प्राचीन काल से ही यह भारतीय संस्कृति का गौरव स्तम्भ रहा है। भारतीय संस्कृति को पुष्ट करनेवाले भौगोलिक, प्राकृतिक, धार्मिक, आध्यात्मिक, नैतिक एवं राष्ट्रीय आयाम हिमालय से संबन्धित हैं। हिमालय के भौगोलिक एवं प्राकृतिक स्वरूप के निर्धारण में इसकी असंख्य पर्वतश्रेणियाँ, नादियाँ, सरोवर, वन-संपदा खनिज-संपदा आदि का अपना अलग-अलग स्थान रहा है। कैलास, मैनाक, गन्धमादन, इन्द्रकील, सुमेरू, गौरी शिखर, क्रौंच पर्वत, एवरेस्ट, कारकोरम, कंचनजंघा, लोप्से, अन्नपूर्णा, नन्दादेवी, नन्दाकोट आदि गगनचुम्बी शिखरों; गंगा, यमुना, सरस्वती, तमसा, मन्दाकिनी, अलकनन्दा आदि नदियों; मानसरोवर, ब्रह्मसरोवर, जैसे सरोवरों; महोषाधियों, जड़ी-बूटियों, बाँस, देवदारू, भूर्जपत्र, साल, नमेरू, अखरोट, कुटज, सतौन आदि वृक्षों; कस्तूरी-मृग, सफेद रीछ, चीता, शेर, लंगूर, तेंदुआ आदि जीव-जन्तूओं, तरह-तरह के पत्थरों, धातू, रत्न जैसे मूल्यवान वस्तुओं, रजत, ताम्र, लोहा जैसी खनिज-संपदाओं से सुसंपन्न हिमालय एक सुन्दर प्राकृतिक भण्डार है। बदरीनाथ, केदारनाथ, गंगोत्तरी, यमुनोत्तरी, कैलास-मानसरोवर, हरिद्वार, अमरनाथ, ऋषिकेश, प्रयाग आदि तीर्थ स्थानों से संपन्न हिमालय की सम्पूर्ण भूमि तीर्थ स्वरूपा बन गयी है। हिमालय का हर एक शिखर किसी न किसी देवता को सौंपा हुआ है तथा शिव एवं पार्वती का वास स्थान होने के कारण धार्मिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। भारत के पौराणिक ग्रंथों ने हिमालय के इस धार्मिक महत्व को सर्वथा प्रतिपादित किया है; जैसे वेद, उपनिषद्, पुराण, रामायण, महाभारत आदि। भगवान शिव, हिमवान की पुत्री पार्वती, विष्णु, परशुराम, हनुमान, राजा सगर, शंकराचार्य, अगस्त्य, व्यास, कपिल, गौतम, पराशर, वसिष्ठ, कण्व एवं राम-लक्ष्मण की तपोभूमि बनकर हिमालय ने अपनी

अप्रतिम आध्यात्मिक महिमा दिखाई है। सांसारिक झंझटों से उलझे हुए व्यक्तियों का आश्रय स्थान बनकर, त्याग एवं करुणारूपी नदियों के जल से संपूर्ण उत्तर भारत को हरा-भरा बनाकर, भारतीयों को राष्ट्र रक्षार्थ आत्मबलिदान का उपदेश देनेवाला यह पर्वत अपनी तपः शक्ति एवं दृढ़ संकल्प से लोकमंगल करता आया है। इन सद् गुणों के कारण हिमालय नैतिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण बन जाता है। हिमालय की विशाल पर्वत श्रृंखला लगभग 8 देशों तक व्याप्त है जैसे- इण्डिया, रूस, भूटान, पाकिस्तान, चीन, नेपाल, सिक्किम तथा अफगानिस्तान तक। भारत को पड़ोसी राज्यों के आक्रमण से सुरक्षित करने के कारण हिमालय राष्ट्रीय दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है। अपने इन बहुआयामी महत्व के कारण हिमालय भारतीय कवियों केलिए प्रेरणास्रोत रहा है। हिमालय को *'पृथ्वी का मानदंड'* माननेवाले कवि कालिदास से लेकर आज तक के भारतीय कवि हिमालय के भिन्न-भिन्न पक्षों को लेकर कविता करते आए हैं। कहीं किसी ने उसके भौगोलिक स्वरूप का वर्णन किया है तो ओर कहीं उसका धार्मिक महत्व हमारे सामने खुल जाता है। और कहीं पर राष्ट्र प्रहरी के रूप में हमारी रक्षा करता रहता है। कुल मिलाकर हिमालय भारतीय जीवन से अविच्छिन्न संबन्ध रखता आया है और आज भी इसी कारण से हिमालय का बड़ा महत्व है।

हिन्दी के आधुनिक हिन्दी साहित्य में भारतेन्दु युग से शुरू होकर नई कविता तक हिमालय काव्य का विषय बनता आया है। द्विवेदीयुगीन काव्य में हिमालय का राष्ट्रीय-पक्ष ज़्यादा उभर आया है। जनता को जागृत करने केलिए अतीतवर्णन के वैभव के अन्तर्गत हिमालय का वैभवपूर्ण चित्रण सामने आ जाता है। इस युग के कवि हिमालय को राष्ट्र का प्रहरी एवं रक्षक मानते हैं। राष्ट्रीय सांस्कृतिक काव्य धारा के प्रमुख कवियों ने मातृभूमि पर मर मिटने की बलि भूमि के रूप में हिमालय को माना। छायावाद युग में हिमालय का और एक रूप सामने आता है। इस युग में हिमालय के प्राकृतिक सौन्दर्य का काल्पनिक वैभव ज़्यादातर कविताओं में पाया जाता है। हिमालय की पृष्ठभूमि में चित्रित पौराणिक घटनाओं के ज़रिए इस युग के कवियों ने नयी संस्कृति का आह्वान किया। प्रगतिवादी कवियों तक आकर हिमालय क्रांति एवं आक्रोश का स्वर प्रस्तुत करने लगा। उनकी कविता की यथार्थवादी प्रवृत्ति ने हिमालय को यथार्थ

के धरातल पर ला खड़ा किया। प्रयोगवादी कविता के अन्तर्गत अज्ञेय एवं नरेश मेहता ने हिमालय की पृष्ठभूमि में कई कविताएं रची हैं। हिमालय की सुन्दर प्रकृति यों तो इन्हें आकर्षित करती रही, साथ ही साथ हिमालय के महत्व को प्रकट करनेवाले कई तत्व भी इन कविताओं में मिलते हैं। *'असाध्यवीणा'* का निर्माण ही हिमालय पर उगनेवाले किरीटी तरू से होता है। *'महाप्रस्थान'* में तो कथा का वर्णन हिमालय पर्वत की पृष्ठभूमि में ही होता है। इसके बाद जगदीश गुप्त ने अपने *'हिम-विद्ध'* काव्य-संग्रह में हिमालय को समस्त भारतीय चेतना का प्रतीक चित्रित किया है जो इस बात का प्रमाण है कि कवि हिमालय के महत्व से बड़े ही प्रभावित हैं। कवि ने अन्तर्मन एवं बाहर के वातावरण में रिक्तता के अनुभव को हिमालय के प्राकृतिक संपन्नता से भाव की स्निग्ध समृद्धि से भर दिया है यहाँ पर जीवन के अन्तरंग सत्य की गरिमा भी मिलती है। इस प्रकार भारतेन्दु युग से आज तक हिन्दी कविता हिमालय के चित्रण के बिना अधूरी ही कही जा सकती है।

लेकिन काव्य में हिमालय के इस महत्वचित्रण को लेकर शोध प्रबन्ध अभी तक सामने नहीं आए हैं। यों तो हिमालय की संपन्नता, संस्कृति एवं धार्मिक महत्व का चित्रण चंद चुने हुए शोध प्रबन्धों का विषय बन चुका है फिर भी काव्य में हिमालय के वर्णन को लेकर अभी शोध-प्रबन्ध नहीं निकले हैं। हाँ, महोदवी जी ने *'हिमालय'* में थोडी बहुत कविताओं को संग्रहीत किया है और इस पुस्तक की भूमिका के रूप में उन्होंने हिमालय के कई पक्षों को अनावृत करने का प्रयत्न भी किया है। एम॰फिल की उपाधि केलिए मैं ने महादेवी जी के इसी हिमालय का विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया था और इस लघु प्रबन्ध का नाम *'आधुनिक हिन्दी कविता* में हिमालय-महादेवी वर्मा के *'हिमालय'* के विशेष संदर्भ में रहा था। इसका अध्ययन करते समय मेरे मन में यह इच्छा हुई कि आधुनिक हिन्दी काव्य का अध्ययन हिमालय के संदर्भ में किया जाए तो बहुत अच्छा होगा। चूँकि हिमालय भारतीय संस्कृति का एक अभिन्न अंग रहा है इसलिए मैं ने *'आधुनिक हिन्दी कविता में हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ'* को शोध प्रबन्ध का विषय बनाया और प्रस्तुत शोध प्रबन्ध इसी का सुफल है। आशा है कि मेरा यह शोधकार्य हिन्दी के शोध साहित्य में अपना अलग योगदान प्रस्तुत करेगा। इस शोध प्रबन्ध में मैं ने 1900 से 1965 तक

के प्रमुख कवियों की हिमालय सन्बन्धी कविताओं का विस्तृत अध्ययन करके उनके सांस्कृतिक पक्ष पर प्रकाश डाला है।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध पाँच अध्यायों में विभक्त है। हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ को उद्घाटित करने केलिए संस्कृति को रूपायित करने में सहायक उसके छः सोपानों को इसमें अध्ययन केलिए लिया गया है। भौगोलिक, प्राकृतिक, धार्मिक, आध्यात्मिक, नैतिक एवं राष्ट्रीय स्तर के आधार पर पाँचों अध्यायों का विवेचन हुआ है। प्रत्येक अध्याय के अन्त में उसका निष्कर्ष भी दिया गया है।

पहले अध्याय में - हिमालय के सांस्कृतिक स्वरूप एवं महत्व पर विचार किया गया है। यह अध्याय पाँच उपभागों में विभाजित है। इसमें हिमालय के प्राकृतिक एवं भौगोलिक संदर्भ के अन्तर्गत-भारत की भौगोलिक स्थिति और हिमालय, हिमालय-विस्तार एवं स्वरूप, हिमालय की उत्पति एवं स्वरूप, हिमालय की प्रमुख पर्वत-श्रेणियाँ, नदियाँ, वन- संपदा, खनिज-संपदा, रमणीय स्थान, जनजातियाँ तथा भारतीय कलाओं का पोषक हिमालय आदि पर विचार किया गया है। हिमालय के धार्मिक, आध्यात्मिक, और नैतिक संदर्भ के अन्तर्गत - हिमालय के प्रमुख तीर्थ स्थान एवं उनका धार्मिक महत्व, हिमालय के प्रमुख त्योहार एवं उत्सव, हिमालय देवताओं का वास स्थान, पौराणिक परिप्रेक्ष्य में हिमालय की सार्थकता (वेदों, उपनिषदों, पुराणों, रामायण एवं महाभारत में), तपास्वियों एवं ऋषियों की तपस्थली हिमालय। हिमालय के नैतिक गुण अतिथि सत्कार, तपशीलता, करुणा एवं त्याग भाव, मौन का महत्व, राष्ट्ररक्षार्थ आत्म-बलिदान आदि पर विचार हुआ है। हिमालय के राष्ट्रीय संदर्भ में चीन एवं पाकिस्तान के युद्ध के संदर्भ में हिमालय के राष्ट्ररक्षक रूप दिखाकर उसे भारत का निर्भीक प्रहरी माना गया है। बाद में हिमालय के पयार्यवाची शब्द एवं सांस्कृतिक संदर्भ तथा भारतीय साहित्य में हिमालय जिसमें-कालिदास का हिमालय, साहित्यिक विधाओं में हिमालय तथा आधुनिक हिन्दी काव्यों में हिमालय का संक्षिप्त विवरण दिया गया है।

दूसरा अध्याय - *'द्विवेदीयुगीन हिन्दी कविता में हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ'* रहा है। प्रस्तुत अध्याय में राष्ट्रीय सांस्कृतिक काव्य धारा के कवियों की कवितायें भी संकलित है। इस अध्याय में द्विवेदीयुगीन कवियों तथा राष्ट्रीय सांस्कृतिक काव्य-धारा के प्रमुख कवियों में मैथिलीशरण गुप्त, माखनलाल चतुर्वेदी, सियारामशरण गुप्त, सोहनलाल द्विवेदी, श्रीधर पाठक, रामनरेश त्रिपाठी, हरिकृष्ण प्रेमी, सुभद्राकुमारी चौहान, आदि के हिमालय संबन्धी कविताओं का परिचय कराकर इनके भौगोलिक, प्राकृतिक, धार्मिक, आध्यात्मिक, नैतिक एवं राष्ट्रीय संदर्भ का उद्घाटन करते हुए हिमालय संबन्धी काव्यों के सृजन तथा उद्देश्य पर विचार किया गया है।

तीसरा अध्याय - *'छायावादी हिन्दी कविता में हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ'* रहा है। प्रस्तुत अध्याय में छायावादी कवियों में प्रमुख जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानन्दन पन्त, सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला तथा महादेवी वर्मा की हिमालय संबन्धी कविताओं का परिचय कराकर इनके भौगोलिक, प्राकृतिक, धार्मिक, आध्यात्मिक, नैतिक एवं राष्ट्रीय संदर्भ का उद्घाटन करते हुए हिमालय सन्बन्धी काव्यों के सृजन तथा उद्देश्य पर विचार किया गया है।

'प्रगतिवादी हिन्दी कविता में हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ' नामक चौथे अध्याय में नरेन्द्र शर्मा, शिवमंगल सिंह सुमन, नागार्जुन, केदारनाथ अग्रवाल, दिनकर, नीरज, गंगा प्रसाद पाण्डेय आदि कवियों की हिमालय संबन्धी कविताओं का अध्ययन करके हिमालय के भौगोलिक, प्राकृतिक, धार्मिक, आध्यात्मिक, नैतिक तथा राष्ट्रीय संदर्भ पर विचार करके प्रस्तुत युग में हिमालय सन्बन्धी काव्यों का सृजन एवं उद्देश्य पर प्रकाश डाला गया है।

'प्रयोगवाद और नई कविता में हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ' शीर्षकवाले पाँचवें अध्याय में सप्तकों के कवियों की हिमालय सम्बन्धी कविताएँ जैसे तार सप्तक के कवि अज्ञेय, नेमिचन्द्र जैन, गिरिजाकुमार माथुर; दूसरे सप्तक के कवि भवानी प्रसाद मिश्र, धर्मवीर भारती, शमशेरबहादुर सिंह, नरेश मेहता; तीसरे सप्तक के कवि विजयदेवनारायण साही, केदारनाथ सिंह तथा चौथे सप्तक के कवि कैलाश वाजपेयी, बालकृष्ण राव आदि की कविताओं को अध्यायन

का विषय बनाया है। इसके अलावा अकवि जगदीश गुप्त का *'हिम-विद्ध'* नामक काव्य संकलन भी इस प्रबन्ध का विषय बन गया है। इन सभी कविताओं में हिमालय के भौगोलिक, प्राकृतिक, धार्मिक, आध्यात्मिक नैतिक एवं राष्ट्रीय संदर्भ पर विचार करके हिमालय सम्बन्धी काव्यों का सृजन एवं उद्देश्य पर प्रकाश डाला गया है।

उपसंहार के अन्तर्गत शोध प्रबन्ध के निष्कर्ष दिए गए हैं और साथ ही आधुनिक हिन्दी कविता में हिमालय के सांस्कृतिक महत्व पर विचार करके इन कविताओं की प्रासंगिकता दिखायी गयी है।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध की तैयारी कोच्चिन विश्वविधालय के प्रोफसर डॉ॰ एल. सुनीता बाई के निर्देशन में हुई है। विषय के चुनाव से लेकर उसे एक सुसज्जित, सुत्यवस्थित कलेवर प्रदान करने तक डॉ॰ एल. सुनीता बाई बराबर मेरी सहायता करती रही हैं। उसके लिए मैं उनकी सर्वाधिक कृतज्ञ रही हूँ। समय-समय पर उनके विद्वत्तापूर्ण सुझाव नहीं मिलते तो मैं इसे यों प्रस्तुत न कर पाती। प्रोफसर डॉ॰ एन. मोहनन ने प्रस्तुत शोध प्रबन्ध की तैयारी में विषय-विशेषज्ञ के रूप में काफ़ी मार्ग निर्देशन किया है उनके प्रति मैं अपना आधार प्रकट करती हूँ। हिन्दी विभाग के पुस्तकालय से समय-समय पर पुस्तकों देते हुए पुस्तकालय के कर्मचारियों ने मेरी काफ़ी सहायता की है मैं उनके प्रति भी आभार प्रकट करती हूँ।

इस शोध प्रबन्ध के साथ मैं ने पूरी वफ़ादारी निभाई है - ऐसा मेरा विश्वास है। फिर भी कोई त्रुटि आई है तो क्षमाप्रार्थी हूँ।

अनुराधा पी.के.

हिन्दी विभाग
कोचिन विज्ञान व प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय
कोचिन-22

दिनांक : 29.10.2001

पहला अध्याय

हिमालय का सांस्कृतिक स्वरूप एवं महत्व

हिमालय का सांस्कृतिक स्वरूप एवं महत्व

भारतीय साहित्य में हिमालय का बड़ा महत्व है। कालिदास ने इसे *'देवतात्मा'* कहा है उन्होंने इसे *'नगाधिराज'* भी कहा है, जो भारत की पूर्व और पश्चिम की सीमाओं में फैला पड़ा है। भारतीय साहित्य में चित्रित काम्यक वन, कनकपुरी (अलकापुरी), कैलास, कामाख्या-पीठ और कदली-वन हिमालय के प्रसाद हैं। हिमालय अपनी विविधता में महान है जो बाहरी बनावट में फूलों और जंगलों की समृद्धि, पशु-पक्षियों, खनिज-संपदा, पर्वतों एवं नदियों से संपन्न है तो भीतरी ढाँचे से आत्मचिन्तन, ज्ञान और मुक्ति केलिए साधकों, चिन्तकों और ऋषियों को प्रश्रय देता है। भारत में हिन्दुओं केलिए हिमालय एक पवित्र स्थान है। यह अनेक पर्वत-शिखरों से बना एक विशाल पर्वत है। संसार के सबसे बड़े इस पर्वत को प्रकृति देवी ने बर्फ का चादर उढ़ा कर अनुगृहीत किया है और हिमालय का उच्च शिखर प्रार्थना या श्रद्धा भाव से युक्त होकर उस सृष्टा के सम्मुख खड़ा है।

संस्कृति का मानव जीवन से अटूट सम्बन्ध रहा है। मानव के खान-पान, आचार-विचार, रीति-रिवाज़ आदि सारी बातें संस्कृति के अन्तर्गत आती हैं। संस्कृति भारतीय जीवन से संबन्ध रखती है। हिमालय का तो भारतीय जीवन से अटूट संबन्ध रहा है। भारतीयों के धार्मिक, दार्शनिक, राष्ट्रीय, नैतिक, आध्यात्मिक सभी क्षेत्रों में हिमालय का महत्वपूर्ण स्थान है; अतः हिमालय भारतीय जीवन से अभिन्न संबन्ध रखता है। आधुनिक हिन्दी कविता के परिप्रेक्ष्य में हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ को प्रस्तुत करना ही इस शोध प्रबन्ध का लक्ष्य रहा है।

भारतीय संस्कृति का गौरव स्तम्भ - *'हिमालय'*

हिमालय प्राचीन काल से ही भारतीय संस्कृति का गौरव स्तम्भ रहा है और उसकी सांस्कृतिक महिमा विश्वजनीन है। भारतीय संस्कृति को महिमान्वित करनेवाले

भौगोलिक - प्राकृतिक, धार्मिक, आध्यात्मिक, नैतिक एवं राष्ट्रीय आयाम हिमालय से सम्बन्ध रखते हैं। संस्कृति का शाब्दिक अर्थ है - संस्कार युक्त होना, उन्नत होना, बढ़ना, विकसित होना आदि। पंत ने संस्कृति को इस प्रकार परिभाषित किया है - "*संस्कृति को मैं मानवीय पदार्थ मानता हूँ, जिसमें हमारे जीवन के सूक्ष्म-स्थूल दोनों धरातलों के सत्यों का समावेश तथा हमारे ऊर्ध्व चेतना - शिखर का प्रकाश और सामादिक जीवन की मानसिक उपत्यकाओं की छायाएं गुंफित है। उसके भीतर अध्यात्म, धर्म, नीति से लेकर सामाजिक रूढ़ि, रीति तथा व्यवहारों का सौन्दर्य भी एक अन्तर सामंजस्य ग्रहण कर लेता है।*"[1] किसी भी देश की जीवन-पद्धति उस देश की संस्कृति से सम्बन्ध रखती है। भारत की जीवन-पद्धति प्रारंभ से लेकर आज तक हिमालय से अटूट सम्बन्ध रखती आयी है। धार्मिक विश्वास, समाजगत परम्पराएं, कलाएं, सामाजिक रूढ़ियाँ तथा विधान, लोक मान्यताएँ, त्योहार, उत्सव, रहन-सहन आदि से ही इसका सांस्कृतिक अध्ययन पूर्ण होगा।

हिमालय चिरकाल से भारतीय कला, साहित्य-चिन्तन, धार्मिक एवं आध्यात्मिक परम्पराओं, लोक संस्कृति आदि केलिए पृष्ठभूमि तैयार करता आया है। साने गुरु ने संस्कृति शब्द की तुलना हिमालय से की है। उनका कहना है कि - "हिन्दुस्तान के उत्तर में जिस प्रकार गौरी शंकर का उच्च शिखर स्थित है, उसी प्रकार यहाँ संस्कृति के पीछे भी उच्च और भव्य तत्व एवं विचार है।"[2]

हिमालय के भौगोलिक एवं प्राकृतिक संदर्भ

हिमालय के सांस्कृतिक स्वरूप एवं महत्व को निर्धारित करने केलिए वहाँ के भौगोलिक एवं प्राकृतिक वातावरण का बहुत बड़ा सहयोग रहा है। सबसे पहले भारत की

---

1. 'उत्तरा' - सुमित्रानन्दन पन्त - पृ.सं 19
2. 'आधुनिक हिन्दी साहित्य (1900-1950 ई) की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि'-डॉ॰ भोलानाथ- पृ.सं-1

भौगोलिक स्थिति और उसमें हिमालय के स्थान का निर्धारण करते हुए इसका विस्तार, स्वरूप प्रमुख पर्वत-श्रेणियाँ, नदियाँ, खानिज-संपदा पर विचार किया गया है। हिमालय के भौगोलिक वातावरण में निवास करनेवाली जनजातियाँ तथा भारतीय कलाओं का पोषक हिमालय का अध्ययन भी हुआ है। हिमालय के प्राकृतिक संदर्भ में इसकी वन-संपदा तथा रमणीय स्थानों का संकेत किया गया है।

भारत की भौगोलिक स्थिति और हिमालय

भारत के उत्तर में हिमालय पर्वत पूर्व से पश्चिम की ओर एक विशाल दीवार की तरह फैला हुआ है, जो भारत को शेष एशिया महाद्वीप से अलग करता है। भारत की भौगोलिक सीमाएं यहाँ के भौतिक एवं स्थायी संपत्ति के अस्तित्व का प्रतीक होती है। सांस्कृतिक धारा तभी गतिशील हो सकती है जब राष्ट्र पूर्ण रूप से स्वतन्त्र हो। भौगोलिक दृष्टि से देखा जाए तो भारत के दक्षिण, दक्षिण-पूर्व तथा दक्षिण-पश्चिम तीनों ओर महा समुद्रों से घिरा हुआ है। केवल उत्तर, उत्तर-पूर्व, उत्तर पश्चिम दिशाओं की ओर से शत्रुओं के आने की संभावना है। भारत का सौभाग्य रहा है कि इन दिशाओं में हिमालय ऊँचे-ऊँचे पर्वतशिखरों, बीहड़ वन, चट्टानों तथा असहनीय शीतलता को धारण कर शत्रु के सम्मुख इस प्रकार खड़ा है, मानो वह भारतीयों का ऐसा प्रतिनिधि हो, जो शत्रुओं से सबसे पहले टक्कर लेने केलिए तैयार है। विष्णु पुराण में भारत की भौगोलिक सीमा का निर्धारण इस प्रकार हुआ है जैसे –

उत्तरं यत्समुद्रस्य, हिमाद्रेश्चैव दक्षिणम्
वर्ष तद् भारत नामा, भारतीयत्र सन्ततिः।। [1]

1. 'विष्णु पुराण' - आचार्य श्याम सुन्दर सुमन - 2, 3-1

अर्थात् हिमालय के दक्षिण और समुद्र के उत्तर का समूचा प्रदेश भारत वर्ष है। हिमालय के पावन क्षेत्र में राजा भरत ने जन्म लिया और बचपन भी उन्होंने यहीं पर बिताया। बाद में वे ही भारत के चक्रवर्ती सम्राट बने जिनके नाम पर हमारा देश *'भारत वर्ष'* कहलाता है। भारत के अतिरिक्त इंडिया, हिन्दुस्तान आदि नामों से भी यह देश पुकारा जाता है। अरब, यूरोप आदि राज्यों की ओर से भारत में आने का एक ही रास्ता उत्तर-पश्चिम के हिमालय की दराएँ है। इस ओर से आनेवाले विदेशी यात्रियों, व्यापारियों एवं आक्रमणकारियों को सबसे पहले महासमुद्र के समान सामने बहनेवाली सिन्धु या इंडस को पार करना था। इस नदी ने इनको प्रभावित किया था। इसलिए वे इस देश को 'हिन्दुस्तान' कहलाने लगे।[1] इनके अलावा भारत के प्रारम्भिक आक्रमणकारियों-फारस निवासियों और यूनानियों ने भी इसे हिन्दुस्तान के नाम से संबोधित किया है। सिन्धु नदी हिमालय से निसृत होकर आनेवाली गंगा की सात धाराओं में से एक है। इस प्रकार हिमालय ने प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से इस देश को भारत, इंडिया (इंडस), हिन्दुस्तान (सिन्धु) नाम देने में अपना अनन्य योगदान दिया है।

भारत की भौगोलिक सीमा का निर्धारण इस प्रकार हुआ है - भारत के उत्तर दिशा में हिमालय और उसकी अन्य पर्वत-श्रेणियाँ जैसे-मुशताख, आता, अखिल, कुनलुन जैसे उन्नत पर्वत हैं उस ओर स्थित सीमावर्ती देश है नेपाल, भूटान एवं चीन; उत्तर-पश्चिम में किरथर, सुलेमन और सफ़ेद कोह की पर्वत-श्रेणियाँ हैं अफगानिस्तान, पाकिस्तान एवं रूस इस ओर के सीमावर्ती देश हैं। पूर्व दिशा में पड़काय की पर्वत-श्रेणियाँ है बर्मा और बंगलादेश इस ओर के सीमावर्ती देश हैं। इसके अतिरिक्त पूर्व भाग में बंगाल की खाड़ी और पश्चिम भाग में अरब सागर लहराता है। दक्षिण भाग में भारत के तीनों ओर हिन्द महासागर लहराता है। इस प्रकार भौगोलिक दृष्टि से देखा जाए तो भारत के उत्तर, उत्तर-पूर्व एवं

1. 'भारतेन्दुकालीन हिन्दी साहित्य की सांस्कृतिक पृष्ठ भूमि'-श्रीमती कमला कानोड़िया- पृ.सं-1

उत्तर-पश्चिम दिशाओं में हिमालय या उसकी प्रशाखाएँ फैली हुई हैं। अपनी प्राकृतिक-सुरक्षा सीमाओं से घिरे रहने के कारण अपने विकास में भारत आदिकाल से ही पूर्णतः निरपेक्ष रहा है। इस प्रकार भारत की उत्तर दिशा के सीमा-निर्धारण में हिमालय ने अपनी सशक्त भूमिका निभाई है। भारत के सात महापर्वतों के अन्तर्गत हिमालय के अलावा पड़काय, विन्ध्य, सतपुड़ा, आरावली, सह्याद्रि, पूर्व घाट आदि आते हैं। हिमालय, भारत की उत्तर दिशा में खड़ा होकर भारत को मध्य एशिया के प्रदेशों से पृथक करता है। हिमालय ने भारत की संस्कृति और सभ्यता को मौलिकता प्रदान की है। दूसरी ओर तिब्बत, चीन आदि देशों से भारत के व्यापारिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक सम्बन्ध हिमालय की अभेद्य पर्वत- श्रेणियों के कारण नगण्य से रहे। इनकी सभ्यता और संस्कृति का हम पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा था। इस पृथकत्व से भारतीय संस्कृति स्वयं प्रस्फुटित होती रही। हिमालय की प्राकृतिक परिस्थितियाँ, भौगोलिक दशा और वातावरण यहाँ के इतिहास, सभ्यता और संस्कृति के निर्माण में सहायक है। एक ओर हिमालय की अत्यधिक ऊँची और सदैव बर्फ से आच्छादित चोटियाँ और श्रेणियों के कारण विदेशी लोग उत्तर की ओर से भारत में प्रवेश न कर सके। इस प्रकार हिमालय ने भारत की भौगोलिक सीमाओं को सुरक्षित करते हुए भारतीय संस्कृति को विदेशी आक्रमणकारियों से बचाया और भारतीय संस्कृति को सुरक्षित भी रखा।

इस प्रकार भारत की भौगोलिक स्थिति और उसमें हिमालय के स्थान को निर्धारित करने के उपरान्त हिमालय की उत्पत्ति एवं स्वरूप पर प्रकाश डाला है।

हिमालय की उत्पत्ति एवं स्वरूप

हिमालय की उत्पत्ति के संबन्ध में भिन्न-भिन्न मत प्रचालित है। कुछ वैज्ञानिक मानते हैं कि भू-खण्डों के सरकने से हिमालय की उत्पत्ति हुई है। आस्ट्रेलिया की तस्मानिया विश्वविद्यालय के प्रो. डब्लू करे का मत यह रहा कि भू वैज्ञानिक युगों में पृथ्वी काफ़ी तेज़ी

से फैली है। उनके मतानुसार *'छोटी'* पृथ्वी पर एशिया, भारत, आस्ट्रेलिया, आफ्रिका और एन्टार्टिका इकट्ठे जुड़े हुए थे। पर जब हिन्द सागर बना तब एन्टार्टिका दक्षिण की ओर, भारत उत्तर की ओर, आफ्रिका पश्चिम की ओर धकेल दिया गया। भारत के युरेशिया से टकराव के कारण भूमि में जो सिकुड़नें उत्पन्न हुई वे ही हमारे वर्तमान पर्वत श्रृंखलाएं हैं।

भूखण्डों के सरकने के मत का ही समर्थन करनेवाले दूसरे विभाग की यह धारणा है कि यह महाद्वीप कुछ *'प्लेटें'* पर स्थित है, ये पृथ्वी के क्रोड़ में भरे उबलते हुए लावा पर तिर रहे थे। ये प्लेट अपने भूखंडों सहित कभी एक दूसरे के पास आती हैं तो अक्सर इनमें टक्करें हो जाती हैं। जिनके फलस्वरूप भूमि में सिकुडनें (पर्वत-श्रृंखलायें) उत्पन्न हो जाती हैं। प्लेट विवर्तनिक के सबसे बड़े समर्थक है पीटर मोलनर तथा जे.जी स्कलेटर।[1]

सब भू वैज्ञानिक प्लेट विवर्तन में विश्वास नहीं रखते। इनमें सोवियत भू वैज्ञानिक प्रमुख है। इन्होंने हिमालय के उद्गम को प्लेटों के टकराव का परिणाम मानने से स्पष्ट इंकार कर दिया। उनके मतानुसार आफ्रिका और दक्षिण भारतीय प्रायद्वीप के बीच का (वर्तमान लगभग 8,000 किलो मीटर का) अंतंर विभिन्न प्लेटों के सरकने के फलस्वरूप नहीं आया है। वे मानते हैं कि भू वैज्ञानिक युग में थल के विभिन्न भागों में क्षैतिज संचलन (हारीजेंटल मूवमेंट) हुआ हो पर इतने बड़े पैमाने पर नहीं हो सकता कि महाद्वीपों के बीच में हज़ारों किलोमीटर का अंतर आ जाये। थल खंड़ों का मुख्य संचलन तो उत्थान के फलस्वरूप बना है। उक्त वैज्ञानिकों के अनुसार हिमालय में पायी गयी संस्तरीय चट्टानें यह दर्शाती हैं कि उस क्षेत्र में बहुत बड़ा सागर था। कुछ भूगर्भिय घटनाओं के फलस्वरूप उसके एकदम भर जाने और भूमि के बहुत ऊपर उठ जाने से हिमालय पर्वत श्रृंखलाएं बनीं।

1. विज्ञान प्रगति - भारतीय भाषा यूनिट पत्रिका - पृ.सं 225

कुछ वैज्ञानिक, जिनमें भारतीय भूवैज्ञानिक प्रमुख है, इन का मत है कि हिमालय के जन्म में अनेक भू वैज्ञानिक घटनाएं निहित हैं और पूरी संभावना है कि पृथ्वी के फैलाव और थल के उत्थान दोनों कारणों के सम्मिलित परिणाम स्वरूप ही हिमालय बना है।

हिमालय के उद्गम के बारे में चीनी भू वैज्ञानिकों के मत अन्य देशों के वैज्ञानिकों के मतों से कुछ भिन्न हैं, यद्यपि वे भारतीय और, रूसी भू वैज्ञानिकों के मतों के अधिक निकट हैं। उनके मतानुसार आज से 60 करोड़ वर्ष पूर्व के युग में *'गोंडवानालैंड'* नामक बृहत खण्ड से लगभग 12 प्लेटें बनी थीं, उनमें से भारतीय प्लेट युरेशिया प्लेट से एल्तिन तागी क्षेत्र में टकरायी थी। इसप्रकार भारतीय प्लेट में केवल भारतीय उपमहाद्वीप ही नहीं था वरन् तिब्बत तथा कुछ उत्तर पुर्वी भाग भी सम्मिलित थे। इस मत का समर्थन भारतीय भूवैज्ञानिक डॉ० हरिनारायण तथा के एल कालिया की धारणा का समंथन करता है।[1]

हिमालय की चट्टानें विभिन्न उत्थानों के फलस्वरूप बनी है। ये चट्टानें कहीं विलुप्त हो गई हैं तो कहीं नष्ट भ्रष्ट या विरुपित। हिमालय में अभी भी परिवर्तन हो रहे हैं। इसे वहाँ पर यदा-कदा आनेवाले भूकम्प इंगित करते हैं, इसके अतिरिक्त हिमालय में कई स्थानों पर भूमि क्षरण याने लैंडस्लैड होते हैं, कई स्थान धँस जाते हैं कहीं ऊपर उठ जाते हैं। यह सभी परिवर्तन दर्शाते हैं कि हिमालय अभी भी सक्रिय है।[2] हिमालय की गोद में जहाँ साहित्य और संस्कृति ने जन्म लिया है वहाँ विज्ञान केलिए भी इसने एक अद्भुत प्रयोगशाला बनकर वैज्ञानिकों को आश्रय दिया है। हिमालय की उत्पत्ति एवं स्वरूप पर विचार करने के पश्चात् हिमालय के विस्तार एवं स्वरूप पर भी विचार किया है।

1. विज्ञान प्रगति - भारतीय भाषा यून्टि पत्रिका - पृ.सं - 225
2. 'हिमालय की संपदा' डॉ० प्रेमस्वरूप सकलानी पृ.सं - 17

हिमालय - विस्तार एवं स्वरूप

हिमालय संसार की सबसे बड़ी और श्रेष्ठ पर्वत-श्रृंखला है। हिमालय की ऊँची-ऊँची चोटियाँ और वादियाँ वर्ष भर बर्फ़ से ढकी रहती हैं। इसलिए इसका नाम *'हिम का घर'*-*'हिमालय'* पड़ा है। हिम पर्वत अपनी अनुपम सुन्दरता और पवित्रता के कारण *'आलय'* (हिमालय) की उपाधि से पुरस्कृत है। हिमालय काश्मीर से लेकर बर्मा तक फैली गिरि-श्रृंखला है जो अपनी शाखा - प्रशाखाओं के साथ लगभग 5,000 मील लम्बी और 500 मील चौड़ी है। इस प्रकार पूर्व में बर्मा की सीमा से लेकर पश्चिम में काश्मीर तक अनेक पर्वतमालाओं का समूह है हिमालय; जिसका विस्तार लम्बाई में 2,500 किलोमीटर और चौड़ाई में लगभग 300 किलोमीटर है।[1]

भू-वैज्ञानिक दृष्टि से हिमालय को चार भागों में विभक्त किया गया है जैसे -

1. सिन्धु-गंगा के उत्तरी भाग में क्रमिक रूप से विद्यमान शिवालिक गिरिपाद (Foot Hills)-3,000 फीट
2. बाह्य या निम्न हिमालय (Lesser) - 10,000 फीट
3. केन्द्रवर्ती या मुख्य हिमालय (Main or Higher) - 17,000 फीट
4. तिब्बत हिमालय या पार हिमालय (Trans. Himalaya) हिमालय का अंचल लगभग 1,500 मील लम्बा व 150 से 200 मील चौड़ा है।[2] हिमालय में लगभग 12,000 फुट ऊँचाई पर लगभग 100 से अधिक उच्च-शिखर माने गए हैं। जिनमें से प्रमुख हैं- एवरेस्ट जिसकी ऊँचाई - 29,141 फुट ऊँचा; कंचनजंघा की ऊँचाई 28,146 फुट

1. 'हिमाचल प्रदेश की झाँकी' डॉ० हरिराम जसटा - पृ.स - 11
2. 'हिमालय की संपदा' डॉ० प्रेमस्वरूप सकलानी - पृ.सं - 21

तथा लोप्स 27,890 फुट ऊँचा है। इसके अतिरिक्त मकालू, अन्नपूर्णा, धौलागिरि, मन्सालू, नंगा पर्वत, नन्दाकोट, नन्दादेवी, कैलास आदि पर्वत भी इन पर्वत-शिखरों की कोटि में आ जाते हैं।[1] नेपाल-चीन सीमा पर स्थित माउण्ड एवरेस्ट संसार की सबसे ऊँची पर्वत-श्रेणी है, जिसकी ऊँचाई 8,848 मीटर माना गया है।[2] भारत का सबसे ऊँचा पर्वत शिखर नन्दादेवी समुद्रतल से 7,817 मीटर ऊँचाई पर है।[3] संसार में बहुत कम ही ऐसे पर्वत हैं जो समुद्र तल से लेकर 7,000 मीटर ऊँचाई पर पर्वतों से युक्त है, जबकि हिमालय पर्वत-श्रृंखला समुद्रतल से 8,000 मीटर ऊँचाई पर 14 उच्च शिखरों को और, 7,000 मीटर ऊँचाई पर 100 से अधिक शिखरों से युक्त है। हिमालय के 14 उच्च शिखरों में 7 नेपाल में है एक तिब्बत में। हिमालय पर्वत-श्रृंखला लगभग 8 देशों तक व्याप्त है। जैसे - (1) इण्डिया (2) रूस (3) भूटान (4) रिपब्लिक चीन (5) नेपाल (6) पाकिस्तान (7) सिक्किम और (8) अफगानिस्तान इस क्षेत्र को *'संसार का छत्र'* (Roof of the World) भी कहा जाता है। संसार की प्रमुख नदियाँ जैसे हवांग हो, यांगसे, मेकोंग, ब्रह्मपुत्र, गंगा आदि नदियों का मुख्य उद्गम हिमालय से है।[4] हिमालय कि पर्वत-श्रेणियों को सुविधा की दृष्टि से चार भागों में बाँटा गया है जैसे–

1. *पंजाब - हिमालयः-* इसका विस्तार गिलगित से सतलज तक है इसे काश्मीर-हिमालय भी कहा गया है। भारत और पाकिस्तान आज भी इस ओर के हिस्से को लेकर वाद विवाद करते हैं। नंगा पर्वत पंजाब हिमालय विस्तार में आता है।

1. 'हिमालय में भारतीय संस्कृति' विश्वम्भर सहाय प्रेमी - पृ.सं - 246 - 247
2. Students Brittanica - Part 2 - Mount Everest - p 108
3. Encyclopaedia of the World - Mac Donald - पृ.सं - 137
4. Himalayas - The King of Nepal - Harry N. Abrams

2. *कुमायूँ - हिमालय:-* इसका विस्तार सतलज से काली नदी तक है। इसमें अधिक तीर्थ स्थान और धर्मपूत शिखर हैं। नन्दादेवी, कामेट, त्रिशूल, बदरीनाथ, केदारनाथ, गंगोत्री, जमनोत्री आदि प्रमुख श्रृंखलाएँ हैं।

3. *नेपाल - हिमालय:-* इसका विस्तार सबसे अधिक है। काली नदी से सिक्किम तक इसकी चोटियाँ संसार में सबसे ऊँची है। तिब्बत और नेपाल की सन्धि पर खड़ा एवरेस्ट इसी में है। इसके अतिरिक्त कंचनजंघा, मकालू, धवलगिरि आदि प्रमुख श्रृंखलाएं हैं।

4. *आसाम - हिमालय:-* जिस का विस्तार सिक्किम की तिस्ता नदी से ब्रह्मपुत्रा तक है। इसकी चोटियाँ हैं-धोनकिया, काबरू आदि।[1]

साधारणत: हिमालय को इतना प्राचीन माना जाता है, जितना समय - अनादि। प्रकृति में बहुत कम ही ऐसी वस्तुएं हैं जो हिमालय की तरह अधिक सुदृढ़, स्थायी, ऊँची और अचल हैं। हिमालय का कुल विस्तार 594,400 sq.km है।[2]

हिमालय के भौगोलिक एवं प्राकृतिक स्वरूप को रूपायित करने में यहाँ की असंख्य पर्वत-श्रेणियों, नदियों, सरोवरों, वन-संपदा, खनिज-संपदा का अपना अलग-अलग महत्व रहा है। इस प्रकार प्राकृतिक वैभवों से संपन्न हिमालय में अनेक रमणीय स्थान है। हिमालय असंख्य पर्वत-शिखरों से बना एक विशाल पर्वत है। हिमालय के हर एक पर्वत-शिखर कोई न कोई पौराणिक घटना या आख्यान का साक्षी रहा है। हिमालय के ये अगम्य पर्वत-शिखर हिन्दुओं केलिए तीर्थ है; दैवित्व एवं चेतना का साकार रूप है।

1. सांस्कृतिक निबन्ध - भगवतीशरण उपाध्याय - 'हिमालय की व्यत्पत्ति' पृ.सं - 107
तथा
Himalayas -The King of Nepal - Harry N. Abrams
2. Students Brittanica Vol.2 - Himalayas p - 268
तथा
सर्वविज्ञानकोशं वेल्लायणी अर्जुनन - भाग 3 पृ.सं - 725

हिमालय की प्रमुख पर्वत-श्रेणियाँ

हिमालय के प्रमुख पर्वत-शिखर है - कैलास, मैनाक, गन्धमादन, इन्द्रकील, सुमेरू, क्रौंचपर्वत, एवरेस्ट (गौरी-शंकर), कारकोरम आदि। ये पर्वत अपनी विशालता और विराटता के कारण विदेशी आक्रमणकारियों केलिए अलंघ्य हैं। शैलराज हिमालय का सबसे प्रमुख पर्वत है कैलास। यह पर्वत समुद्र तल से 23,000 फुट ऊँचाई पर स्थित सदा हिम से आच्छादित एक धवलिम शिखर है।[1] हिन्दू पुराणों में कैलास पर्वत को प्रमुख स्थान दिया गया है। कैलास पर्वत को रजतश्रृंग एवं देवाधिदेव महादेव का वास स्थान भी बताया गया है।[2] भारतीयों का विश्वास है कि कैलास पर्वत के उत्तर भाग की ओर स्वर्णमय मेरु पर्वत स्थित है। हिमगिरि के स्वर्णिम वर्ण के कारण ये पर्वत हेमगिरि भी कहलाता है।[3] हिमालय का यह श्रेष्ठ पर्वत कैलास अपनी अनन्त वैभव एवं संपन्नता की दृष्टि से भी अद्वितीय है। कैलास पर्वत पर विश्वकर्मा द्वारा बनायी गयी कुबेर की नगरी है अलकापुरी।[4] हिमालय के इस प्रमुख पर्वत का उल्लेख कालिदास के मेघदूत में मिलता है। जैसे–

"गत्वा चोर्ध्वं दशमुखभुजाच्छ्वासित प्रस्थसन्धेः
कैलासस्य त्रिदशवनितादर्पणस्यातिथिः स्याः
श्रृंगोच्छायै : कुमुदविशदैर्यो वितत्यस्थितः खं
राशीभूतः प्रतिदिनमिव त्र्यम्बकस्याट्टहासः।।"[5]

1. हिमगिरि विहारं - स्वामी तपोवनम् पृ.सं - 265
2. हिमगिरि विहारं - स्वामी तपोवनम् - पृ.सं - 265
3. सर्वविज्ञानकोशं - डॉ० वेल्लायणी अर्जुनन - पृ.सं 623 तथा
   पुराण निघण्डु - वेट्टम माणि- पृ.सं - 311
4. पुराण संदर्भ कोश - पदिमनी मेनन - पृ.सं - 22
5. मेघदूत - पूर्वमेघ ||62|| कालिदास पृ.सं - 62

अर्थात् अपनी अतिशुभ्रता के कारण कैलास देवांगनाओं केलिए दर्पण का काम करता है। इस पर्वत के घाटों के जोड़ रावण की भुजाओं से झकझोरें जाने के कारण ढीले पड़ गये है। वह कुमुद के पुष्प जैसी श्वेत बर्फीली चोटियों की ऊँचाई से आकाश को छाये ऐसा खड़ा रहता है, मानो शिव के प्रतिदिन के अट्ठहास का ढेर लग गया हो। कैलास पर्वत भारतीय दर्शन और हिन्दु धर्म का उज्जवल प्रतीक है। सनातन धर्म के शैव विश्वास से संबन्धित है यह गिरि श्रृंग। ज्ञानयोग एवं तपःशक्ति का मूर्त रूप मानकर पूजा किए जानेवाले भगवान शिव एवं सभी ऐश्वर्यों का उत्भव एवं पार्थिव शक्ति के पर्याय बनने में योग्य पार्वती को वागार्थ के समान मिलानेवाला दिव्य स्थान है कैलास। हिमालय इसलिए *'देवभूमि'* माना जाता है। आर्यों की आराध्यमूर्ति पार्वती और द्रविड़ों के आराध्य मूर्ति शिव के संगम से उत्पन्न एक नूतन दिव्य शक्ति का रूप कार्तिकेय आर्य-द्रविड़ संस्कारों से उत्पन्न एक नूतन संस्कार का प्रतीक है। ब्रह्मा तथा अन्य देवता गण भी मेरू पर्वत पर वास करते हैं।[1] हिमालय के इस प्रमुख पर्वत के संबन्ध में रामायण, महाभारत, पुराणों, बौद्ध एवं जैन ग्रंथों में अवश्य उल्लेख हुआ है। महाभारत में कैलास पर्वत को सबसे उत्तम तपःस्थली माना गया है। ऋषि व्यास[2] तथा कामधेनु[3] ने इसी कैलास पर्वत पर तपस्या की थी। एक बार भगवान शिव की प्रीति केलिए विष्णु ने कैलास पर तपस्या की थी।[4] राजा सगर ने अपनी दोनों पत्नियों के साथ यहीं तप किया था।[5] इन्हीं के वंशज भगीरथ ने भी कैलास पर्वत पर जाकर पतितपावनी भगवती गंगा को भूमि पर लाने केलिए घोर तपस्या की थी।[6] इस प्रकार

1. सर्वविज्ञानकोशं - डॉ० वेल्लायणी अर्जुनन - भाग - 8 पृ.सं - 623
2. महाभारत - सभा पर्व - 43 अध्याय - 17 पद्य पृ.सं - 486
3. पुराण निघण्डु - वेट्टम माणी - पृ.सं. 486
4. महाभारत - आदि पर्व - 222 अध्याय - 40 पद्य - पृ.सं - 275
5. महाभारत - वन पर्व - 108 अध्याय - 3 पद्य - पृ.सं - 540
6. पुराण निघण्डु वेट्टम माणी पृ.सं. 486

हिमालय अपने आध्यात्मिक वातावरण से देवता, ऋषि, राजा आदि की इच्छा पूर्ति करता है और यह रजत श्रृंग तपोभूमि होने की श्रेष्ठता को घोषित करता है। महाभारत में पांडवों ने कैलास की यात्रा की थी।[1] सौगन्धिक पुष्प लाने केलिए भीम कैलास के पास कुबेर के पुष्पोद्यान में पहूँचे थे। कैलास पर्वत पर कुबेर के निवास स्थान के पास यक्ष, राक्षस, किन्नर एवं गन्धर्व रहते हैं।[2] ऐसा विश्वास रहा है कि हनुमान श्रीराम के ध्यान में कैलास पर्वत पर वास करते हैं।[3]

कैलास पर्वत 'त्रिविष्टप' या तिब्बत की ओर हिमालय का उच्च श्रृंग है[4] जो तिब्बती निवासियों केलिए *'कंग्रीनपोच'* है[5] तिब्बती भाषा में लिखित *'कांग्री करछक'* नामक कैलास पुराण में कैलास को भू मण्डल का केन्द्र माना है। इस चोटी के चारों ओर बुद्ध के चार पदचिन्ह है। कैलास पर्वत चतुरनीक (Tetrahedronal) आकार का है। इसलिए कैलास पर्वत की पृथक परिक्रम नहीं की जा सकती। यात्रियों को संपूर्ण कैलास पर्वत की 32 मिल परिक्रमा करनी पड़ती है।[6]

मैनाक पर्वत को हिमालय और मेना का पुत्र माना गया है। पर्वतों को लेकर ऐसी एक पौराणिक मान्यता थी कि कृत युग में पर्वतों के पंख थे, इन पर्वतों के इधर-उधर उठने से ऋषियों एवं मुनियों की तपस्या में विघ्न होने का डर था। इन्द्र ने इनका एक जगह अडिग रहने की चेतावनी दी। पर इनके न माने जाने पर पंख काट डाले। उस समय वायु भगवान

1. महाभारत - वन पर्व - 158 अध्याय - 18 पद्य - पृ.सं - 596
2. सर्वविज्ञानकोशं डॉ० वेल्लायणी अर्जुनन - भाग - 8 पृ.सं - 623
3. सर्वविज्ञानकोशं - डॉ० वेल्लायणी अर्जुनन - भाग - 8 पृ.सं - 623
4. 'कैलास-मानसरोवर' स्वामी प्रणवनन्द - पृ.सं 9
5. 'कैलास-मानसरोवर' स्वामी प्रणवनन्द - पृ.सं - 10
6. 'कैलास-मानसरोवर' स्वामी प्रणवनन्द - पृ.सं 7-8

ने मैनाक पर्वत को उठाकर सागर में छिपा लिया।[1] तब से मैनाक और सागर में बड़ी मित्रता हुई। मैनाक पर्वत हिमालय के उत्तर की तरफ़ बिन्दुसरोवर के पास स्थित है।[2] वाल्मीकी रामायण में बताया गया है कि जब वायु पुत्र हनुमान ने लंका की ओर प्रस्थान किया था उस समय मैनाक पर्वत ने समुद्र के बीच से उठकर उनकी थकावट दूर की थी। वायु भगवान के पुत्र हनुमान की सेवा करके मैनाक पर्वत ने प्रत्युपकार किया था।[3] इस प्रकार पौराणिक कथाओं में हमारा सांस्कृतिक आयाम छिपा रहता है। प्रस्तुत प्रसंग से हिमालय के परोपकारी स्वरूप सामने आ जाता है।

हिमवान के पूर्व इलावृत में स्थित गन्धमादन पर्वत अपनी सुगन्ध से सबको मदमत्त बनानेवाला एक पुराण प्रसिद्ध पर्वत है।[4] इसके ऊपरी तट पर बदरी वृक्ष हैं जहाँ बैठकर कश्यप प्रजापति[5], अनन्त[6] तथा श्री कृष्ण[7] ने तपस्या की। यह क्षेत्र ऋषियों की तपोभूमि है। हिमालय के इस पर्वत की श्रेष्ठता यही रही कि तपःशक्ति से युक्त श्रेष्ठ व्यक्ति ही यहाँ प्रवेश कर सकते हैं।[8]

हिमालय एवं गन्धमादन के सामने स्थित पर्वत है इन्द्रकील यह किरातार्जुनीयम कथा की रंग भूमि है।[9] क्रौंच पर्वत हिमालय में आसाम के उत्तरी तरफ स्थित एक पर्वत है। इस पर्वत के सम्बन्ध में पौराणिक आख्यायन यह है कि कैलास में शिव की तपस्या

1. पुराण निघण्डु - वेट्टम माणि - पृ.सं - 67
2. पुराण संदर्भ कोश - पदिमनी मेनन - पृ.सं 209 तथा 118
3. वाल्मीकीय रामायण - सुन्दर काण्ड 1 सर्ग - पृ.सं - 545
4. सर्व विज्ञानकोशं - डॉ० वेल्लायणी अर्जुनन - भाग 9 - पृ.सं - 741
5. महाभारत - आदि पर्व - 30 अध्याय - 10 पद्य - पृ.सं - 46
6. महाभारत - आदि पर्व 36 अध्याय 3 पद्य - पृ.सं - 51
7. महाभारत सौप्तिक पर्व - 12 अध्याय - 30 पद्य पृ.सं 286
8. महाभारत - वन पर्व 12 अध्याय - 11 पद्य पृ.सं - 424
9. सर्व विज्ञानकोशं - डॉ० वेल्लायणी अर्जुनन - भाग 4

करके अनुग्रह को प्राप्त कर लौट आनेवाले अगस्त्य ऋषि को क्रौंच नामक असुर ने रोका। अगस्त्य ऋषि ने अपने कमण्डलू के जल से उसे पर्वत बनने का शाप दिया, उस दिन से क्रौंचासुर पर्वत बना। कार्तिकेय के बाण से ही इसका मोक्ष होगा ऐसा शाप मोक्ष भी दिया।[1] कार्तिकेय के डर से महाबलि पुत्र बाण क्रौंच पर्वत में जाकर छिपा। कार्तिकेय ने अग्नि द्वारा दिए बाण से क्रौंच पर्वत को भेद लिया।[2] मेघदूत मैं कालिदास ने इसी क्रौंच पर्वत का उल्लेख किया है जैसे "*भृगुपतियशोवर्त्म यत्क्रौञ्चरन्ध्रम*।" महाभारत में इस क्रौंचरन्ध्र को महामेरु पर्वत की ओर हंसों का जाने का मार्ग बताया है। हिमालय देव-असुरों की युद्ध भूमि रही है और साथ ही जिन लोगों ने पाप का प्रायश्चित्त किया उनकेलिए मोक्षदायक भी रहा है। भास के बालचरित नाटक में इसका उल्लेख "*क्रौचं तथा शक्तिधरा : प्ररुष्टाः*" कहकर हुआ है।[3] इस प्रकार हिमालय की देवभूमि में सदैव आसुरी शक्तियों का हनन हुआ है।

मेरु पर्वत को इसके स्वर्णिम आभा के कारण '*सुमेरु*' पर्वत भी कहलाता है। मेरु पर्वत के पूर्व में जठर और देवकूट पर्वत है, पश्चिम में पावन और परियत्र पर्वत, दक्षिण में कैलास और कुरवीर पर्वत और उत्तर में त्रिशंकु और मकर पर्वत हैं। इन पर्वतों से आवृत्त काञ्चन गिरि मेरु पर्वत अग्नि के समान शोभित है। सुमेरु सोना या रत्नों से भरा है। महाभारत में खाण्डव वन की भयंकर आग की तुलना मेरु से की गई है। जम्बु दीप के इलाव्रत के बीचों बीच कुल पर्वतों का राजा सुमेरु स्थित है।[4]

संसार के सबसे ऊँचा पर्वत-शिखर है एवरेस्ट। नेपाल-तिब्बत सीमा के पास नेपाल में स्थित है। भारतीय पुराणों में जिसके बारे में गौरी शंकर कहकर परामर्श किया गया है वही एवरेस्ट है। तिब्बती लोग इसे '*चोमोलुंङ्मा*' (chomolungma) कहते हैं; नेपाली इसे

1. सर्वविज्ञानकोशं - डॉ० वेल्लायणी अर्जुनन - भाग - 9 पृ.सं - 440
2. महाभारत - शल्यपर्व
3. सर्वविज्ञानकोशं - डॉ० वेल्लायणी अर्जुनन - भाग 9 पृ.सं - 440
4. पुराण संदर्भ कोशं पदिमनी मेनन - पृ.सं - 209

'सागरमाता' (sagarmatha) कहते हैं। क्षण-क्षण पर ऊपरी हिस्सों पर पड़नेवाले अवलाचियों से इन हिमानियों की ऊँचाई बढ़ती है। 1954-55 में टेनसिंग तथा हिलारी ने ही सबसे पहले एवरेस्ट पर आरोहण किया था। संसार का सबसे ऊँचा पर्वत माउण्ड एवरेस्ट 29,028 फ़ीट ऊँचा है।[1]

भारत में काश्मीर के उत्तर-भाग में स्थित पर्वत-समूह है कारकोरम। *'कारकोरम'* नामक तुर्की शब्द का अर्थ *'श्याम शिला शैल'* (Black-Rock-Mountain) है। एवरेस्ट के बाद संसार की सबसे ऊँचा पर्वत शिखर k_2 या गोड़विन ओस्टन यहीं है। ध्रुव प्रदेश को छोड़कर संसार में सबसे तीव्र हिम पात इन्हीं कारकोरम पर्वत-समूहों में है।[2]

हिमालय की प्रमुख नदियाँ

हिमालय से निसृत होकर आनेवाली नदियाँ इसके भौगोलिक वातावरण को रूपायित करने तथा भारतीय संस्कृति को प्रवाहमान करने में सक्षम रही हैं। हिमालय से निसृत होकर आनेवाली नदियों में इंडस तथा ब्रह्मपुत्रा सबसे बड़े हैं। इंडस नदी की पाँच उपशाखाएं है, झलम, चिनाब, रवि, बियास और सतलज; गंगा नदी की उपशाखाएं है- गंगा, यमुना, रामगंगा, काली, कर्णली, ताप्ति, गंडक, भगमती और कोसी; ब्रह्मपुत्रा की उपधाराएं हैं - तिस्ता, रैडक और मानस।[3] इसके अतिरिक्त भागीरथी, अलकनन्दा, सरस्वती आदि नदियाँ भी उल्लेखनीय हैं।

हिमालय की नदियों की खासियत यह है कि ग्रीष्म ऋतु में भी ये जल समृद्ध रही हैं। हिमालय की ये नदियाँ एक ओर जीवनदायिनी हैं लेकिन जल की अधिकता के कारण ये कभी-कभी प्रलयकारिणी बन जाती हैं। हिमालय के प्रशंसक स्वामी अखण्डानन्द ने

1. सर्वविज्ञानकोशं - भाग 5 पृ.सं - 315
2. सर्वविज्ञानकोशं - भाग 5 पृ.सं - 171
3. Students Brittanica Part 2 - p - 272

हिमालय की नदियों के प्रलयकारी रूप की शिव के ताण्डव से तुलना की है।[1] हिमालय से निसृत होकर आनेवाली इन नदियों के कारण उत्तर भारत के अधिकांश भू-भाग हरा-भरा रहता है और इस कारण जगह-जगह पर अनुपम सुन्दरता की सृष्टि भी होती है। ये नदियाँ पशु-पक्षी एवं मनुष्य को भी जीवन प्रदान करती हैं। हिमालय से निसृत नदियाँ शिव दर्शन की भाँति पवित्र हैं।

हिमालय की सबसे प्रमुख नदी गंगा का हमारी संस्कृति से गहरा सम्बन्ध रहा है। हिमालय की गहरी घाटी में स्थित गोमुख गंगा का उद्गम स्थान माना जाता है, जो सागर तल से 12,960 फीट की ऊँचाई पर है।[2] अतः गंगा नदी हिमालय के उत्तर काशी जिले के गोमुख नामक स्थान से उद्भूत होकर गंगोत्तरी से नीचे बहकर हरिद्वार की समतल भूमि पर पहूँचकर अन्त में बंगाल की खाड़ी में गिरती है। हिमालय से निसृत गंगा संसार की सबसे महत्वपूर्ण नदी है तथा भारत की सबसे पवित्र नदी मानी जाती है। गंगा नदी का जनक होने के कारण हिमालय का महत्व दुगुना बढ़ जाता है। गंगा नदी हिमालय से समुद्र में विलय होने तक भारत के विशाल भू-भाग का स्पर्श करती हुई अपने आप में सभ्यता और संस्कृति के इतिहास का जीवन्त साक्ष्य है।

हिन्दु पुराणों के अनुसार हिमवान देवता स्वरूप है, और उसकी पुत्री गंगा देवी है। मकरवाहिनी गंगा जग पालनहारी श्री विष्णु के चरण कमलों से होकर ब्रह्मा के कमंडल से अवतरित परम महायोगी शंकर की जटाओं से झर-झरकर हिमालय से होकर पृथ्वी

1. In the Lap of Himalayas - Swamy Akhandananda p 74

2. गोमुख - गंगा की जो पवित्र धारा गंगोत्तरी की हिम गुहा से निकलती है उसके उद्गम स्थान को 'गोमुख' संज्ञा देने का तात्पर्य यह है कि उस कन्दरा का मुख गाय के मुख के समान है। जिस प्रकार गाय के ओष्ठ नीले होते हैं उसी प्रकार गंगा को भूमितल पर अवतीर्ण करनेवाले इस गोमुख की ओष्ठवत् चतुर्दिक हिम-चट्टान भी नीला है। इस शब्द का दूसरा अर्थ गो-पृथ्वी है। अतः गंगा सबसे पहले पृथ्वी के मुख से निकलकर आती है।

'गंगा अतीत एवं वर्तमान' - वरदा वसुन्धरा - पृ.सं - 38

लोक पर जन-जन के कल्याण हेतु प्रवाहित हुई है। पुराणों में गंगा ब्रह्मा, विष्णु और महेश की प्रिय नदी बन गयी है। वैष्णव मानते हैं कि यह विष्णु के चरण धोनेवाली है।[1] हिमवान की पुत्री एवं उमा की बहन गंगा, राजा शन्तनु की पत्नी और भीष्म की माँ थी।

श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण के बालकाण्ड में गंगावतरण की कथा का उल्लेख हुआ है। इसमें भगीरथ की तपस्या से संतुष्ट हुए भगवान शंकर का गंगा को अपने सर धारण करके हिमालय स्थित बिन्दुसरोवर में छोड़ने और उनके सात धाराओं में विभक्त होने का वर्णन मिलता है।[2]

हिमालय और हिम तनया गंगा के सम्बन्ध में कालिदास के काव्यों में उल्लेख हुआ है। कालिदास के मेघदूत में गंगा नदी के सम्बन्ध में यक्ष मेघ से कहता है कि- "*कनखल के पास हिमालय पर उतरना और विश्राम करना जहाँ गंगा बहती है, जो सगर के पुत्रों केलिए स्वर्ग का रास्ता बनकर रहती थी।*"[3] कुमारसंभव के छठा सर्ग में गंगा नदी का वर्णन इस प्रकार हुआ है "जिस तरह तुमसे (हिमालय) निकली हुई निर्मल प्रवाहवाली समुद्र के तरंगों

1. गंगा को 'भगवत्पदी' भी माना जाता है। चतुर्थ मन्वन्तर में विष्णु ने कश्यप और अदिती के पुत्र होकर वामन के नाम से अवतार लिया। राजा बलि की यज्ञशाला में बलि का दर्प हरण करने केलिए उनसे तीन पग भूमि की भिक्षा माँगी। पहले पग से सारी पृथ्वी एवं पाताल नाप लिया। दूसरा पग रखते समय वह अन्तरीक्ष और स्वर्ग को पार कर ब्रह्मलोक तक पहूँचा ब्रह्माण्डकटाह का ऊपर का भाग फट गया। उससे जल की धारा निकल आई। भगवान के पवित्र चरणों को देखकर ब्रह्मा ने अपने कमण्डल के जल से पाद प्रक्षालन किया और वही पानी गंगा के रूप में बहने लगी। बाद में गंगा भगवत्पदी नाम से पुकारी गई। श्रीमद् भगवत महापुराणम् में इसका उल्लेख इस प्रकार है–

   "तत्र भगवतः साक्षाद्यज्ञलिंगस्य विष्णोर्विक्रमतो
   वामपादांगुष्ठनख निर्भिन्नोर्ध्वाण्डकटाह विविरेणान्त ||1||

   श्रीमद्भागवत महापुराणं - महर्षि वेदव्यासप्रणीतं अथसप्तदशोध्याय - पृ.सं 284
2. श्रीमद्वाल्मीकीय-रामायण महर्षि वाल्मीकीप्रणीतं बालकाण्डम् सर्ग 43 पृ.सं. 76
3. मेघदूत - पूर्व भाग - ||54|| कालिदास - पृ.सं - 54

से अनिवारित गंगादि नदियाँ संसार के पाप का नाश करती है, उसी तरह तुम्हारी कीर्ति भी जग के ताप को दूर करेगी। जिस प्रकार गंगा विष्णु के चरण से निकलकर अपने को प्रशंसनीय समझती है, उसी तरह तुम्हारे (हिमालय के) सिर से निकलकर अपने को प्रशंसनीय समझती है।"[1]

मानसरोवर हिमालय का सबसे प्रमुख सरोवर एवं तीर्थस्थान भी है। मानसरोवर के कारण हिमालय का दैवित्व गुण बढ़ गया है। मानसरोवर की महिमा एवं श्रेष्ठता के सम्बन्ध में वाल्मीकीय रामायण में उल्लेख हुआ है। विश्वामित्र ऋषि रामचंद्रजी से इस प्रकार कहते हैं कि–

"कैलास पर्वते राम मनसा निर्मितं परम्।
ब्रह्मणा नरशार्दूल तेनेदं मानसं सरः।।"[2]

अर्थात् - हे राम!, ब्रह्मा के मानस से कैलास पर्वत पर जिस सरोवर की उत्पत्ति हुई है, वही मानसरोवर के नाम से प्रसिद्ध है। हिमालय का हर एक स्थान साधकों की अभीष्ट सिद्धि केलिए योग्य है। भारतीय मतानुसार इस सरोवर के पास निवास करने पर साधक को युग के अन्त में पार्षदों तथा पार्वती साहित इच्छानुसार रूप धारण करनेवाले शंकर का प्रत्यक्ष दर्शन हो जाता है। इस सरोवर में श्रद्धापूर्वक स्थान तथा जल का आचमन करके पुरुष पापमुक्त होता है और शुभ लोक प्राप्त करता है। ब्रह्मा का मानस सृष्टि मानसरोवर तीर्थराज है।

महाभारत में द्रौपदी के प्रार्थनानुसार सौगंधिक पद्म हरण कर लाने केलिए भीमसेन ने कुबेर के घर के पास जिस प्राकृतिक सरोवर में अवगाहन आदि किया था वही

1. कुमारसंभव षष्ठ सर्ग कालिदास पृ.सं 366
2. श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण महर्षि वाल्मीकी प्रणीतं बालकाण्ड 24/8 पृ.सं 54

मानसरोवर है।[1] भारवि ने *'किरातार्जुनीयम'* में हिमालय को गौरवान्वित करनेवाले मानसरोवर के सम्बन्ध में बताया है कि - हिमालय निर्मल जलयुक्त मानसरोवर को धारण किया हुआ है जिसमें कमल खिले हुए हैं और यहीं कलहंसों का निवास है या सम्पूर्ण जाति के हंसों का निवास है। ऐसा हिमालय पार्वती और शंकर भगवान को भी धारण करता है।[2]

इस प्रकार हिमालय से निसृत होकर आनेवाली नदियाँ, सरोवर, झरनें तथा झीलों ने अपनी अमृतवाहिनी जल धाराओं से इस देश को हरा-भरा बनाया तथा जगह-जगह अनुपम सुन्दरता की सृष्टि की है। हिमालय की अनुपम देन है ये नदियाँ। भारत के पौराणिक तथा ऐतिहासिक घटनाओं का धरातल होने से इनमें कोई न कोई सांस्कृतिक आयाम छिपा रहता है।

हिमालय की खनिज-संपदा

हिमालय के भौगोलिक स्वरूप के अन्तर्गत उसकी खनिज-संपदा के महत्व का उद्घाटन भी हुआ है। हिमालय के क्रोड़ में तरह - तरह के पत्थर, धातुएँ, रत्न और बहुमूल्य वस्तुएं पाई जाती हैं। हिमालय रजत, ताम्र, लोह जैसे खनिज पदार्थों को अपने गर्भ में छिपाए हुए है। हिमालय की खनिज - रचना पर संरचनात्मक तत्वों का बहुत बड़ा प्रभाव पड़ा है। हिमालय की खनिज-संपदा का वर्णन भौगोलिक क्षेत्रों (जम्मू-काश्मीर, हिमाचल प्रदेश, उत्तर प्रदेश, अरुणाचल प्रदेश, तथा नेफा) के आधार पर हुआ है।[3] जैसे–

1. सर्वविज्ञानकोशं - डॉ० वेल्लायणी अर्जुनन - भाग - 8 पृ.सं - 623
2. किरातारजुनीयं के पंचम सर्ग में मानसरोवर के सम्बन्ध में कहा गया है कि-
   "विकचवारिरुहं दधतं सरः सकलहंसगणं शुचि मानसम्।"
   किरातार्जुनीयं - पंचम सर्ग - ||13|| भारवी - पृ.सं - 101
3. 'हिमालय की संपदा' डॉ० प्रेमस्वरूप सकलानी - पृ.सं 60

जम्मू-काश्मीर हिमालय : जहाँ ताँबा, क्रोमईट, कोयला, जिप्सम, रत्न, ग्रेफइट, चूना पत्थर, अभ्रक, प्लेटिनम, फोसफोराइट, फ्लोराइट आदि पाए जाते हैं।[1]

हिमाचल प्रदेश में चूना पत्थर, जिप्सम्, कायनाइट, ग्लैस सैण्ड एवं भवन निर्माण के पत्थर पाए जाते हैं।[2]

उत्तर प्रदेश के गढ़वाल हिमालय में फिटकरी, एन्टीमनी, बोराइट, सीसा, जस्ता आदि पाए जाते हैं।[3]

अरुणाचल प्रदेश में ग्रफेइट और चूना पत्थर पाए जाते हैं।[4] और नेफा में कोयला, ताँबा, सीसा, जस्ता, फोस्फोराईट, चूना पत्थर आदि पाए जाते हैं।[5]

पुराणों में भी हिमालय के इस अमूल्य रत्न एवं बहुमूल्य संपदा का यत्रतत्र चित्रण मिलता है। वाल्मीकी रामायण में हिमालय को धातुओं की खान कहा गया है–

"शैलेन्द्रा हिमवान्ताम् धातूनामाकरो महान्।"[6]

इसके अतिरिक्त मत्स्य पुराण में कहा गया है कि-

"गिरि महीनं रत्न सम्पदा।"[7]

महाशिवपुराण के पार्वती खण्ड में *'नाना रत्नाकरों'* कहकर हिमालय को विविध रत्नों का आकार माना है।[8] कालिदास को भी हिमालय की आन्तरिक रचना का परिचय था

---

1. Mineral Wealth of Jammu & Kashmir - G.S.I. Wide - p - 1-17; 1972
2. Mineral Wealth of Himachal Pradesh - G.S.I. Wide - p - 183-200; 1971
3. Mineral Wealth of Uttar Pradesh - G.S.I. Wide - p 1-21; 1973
4. Indian Mineral-Vol. - Dr. A. Santara - p 50-58
5. Mineral Wealth of Nepha - G.S.I. Wide - p 101-118; 1971
6. श्रीमद् वाल्मीकीय रामायण बालकाण्ड 35//45 पृ.सं 68
7. मत्स्य पुराण - अध्याय 117 हिमवत् वर्णन - पृ.सं - 151
8. श्रीमहाशिवपुराण - पार्वती खण्ड - 3/16 पृ.सं - 244

जिसे उन्होंने अपनी रचनाओं में प्रकट किया है। हिमालय के गैरिक धातु की चर्चा के अन्तर्गत हिमालय को *'गैरि'* आदि लाल चट्टानों के होंठवाला बताया है।[1] इसके अलावा हिमालयी भू-गर्भ के विविध खनिज पदार्थों तथा बहुमूल्य पत्थरों का ज्ञान कालिदास को था -जैसे लोहा[2], मरकत शिला[3], वैडूर्यमणि[4], स्फटिक[5], मणि शिला[6], मन:शिला[7] आदि। कालिदास ने *'अनन्तरत्नप्रभवस्य'* कहकर हिमालय के अतुलित वैभव का परिचय कराया है।[8]

महाभारत युद्ध के पश्चात् युधिष्ठिर को अश्वमेध यज्ञ संपन्न कराने का धन एवं संपत्ति हिमालय से ही प्राप्त हुई थी। त्रेता युग में अविक्षित का पुत्र मरुत्त ने हिमालय के उत्तर भाग में सुमेरु के नीचे एक यज्ञ संपन्न कराने के उद्देश्य से सोने के बर्तन, पीठ, दीप और सब सामग्री सोने से बनायी थी। यज्ञ के संपन्न हो जाने के पश्चात् सभी संपत्ति वहीं ढका दी गयी थी। इस धन की तलाश में हिमालय की ओर जाते हुए युधिष्ठिर ने कैलास पर्वत पहुँच कर शिव एवं पार्वती की स्तुति की थी। दूसरे ही दिन निधि की खोज करते हुए इन्हें हिमालय से अमूल्य संपत्ति प्राप्त हुई थी।[9]

भारवि के किरातार्जुनीयम् में हिमालय के रत्न वैभव के संबन्ध में बताया है कि -*"हिमालय के शिखर रत्न राशियों से खालि नहीं है तथा ये शिखर अनेक मणियों की*

1. कुमारसंभव - सर्ग 6/51 कालिदास - पृ.सं - 353
2. कुमारसंभव - सर्ग 2/59 - कालिदास - पृ.सं - 119
3. मेघदूत - पूर्व मेघ - सर्ग 34 - कालिदास - पृ.सं - 34
4. कुमारसंभव - सर्ग 1/24 - कालिदास - पृ.सं - 30
5. मेघदूत - उत्तर मेघ सर्ग 15 कालिदास
6. कुमारसंभव सर्ग 8/81 कालिदास
7. रघुवंश - सर्ग 12/80 कालिदास
8. कुमारसंभव - सर्ग 1/13 कालिदास - पृ.सं 5
9. महाभारत - अश्वमेधिक पर्व - पृ.सं - 450

प्रभा से रंजित रहने के कारण तथा बर्फ से ढके होने के कारण शुभ्र दिखाई देते हैं।"[1] हिमालय की संपदा का अध्ययन करते हुए विद्वानों ने हिमालय में पाए जानेवाले रत्नों के सम्बन्ध में बताया है कि - हिमालय में माणिक्य एवं नीलम, बेरुज, तुरसावा, तुरमली, तामड़ा या गोमेदक, पुखराज, स्फटिक, कार्नग्राम एवं जमुनिया आदि रत्न पाए जाते हैं।[2] हमारे पुराने ग्रंथों में हिमालय के विविध रत्न खानों की चर्चा मिलती है। हिमालय के देहरादून रंगविरंगे संगमरमर केलिए प्रसिद्ध है। इस प्रकार हिमालय के भौगोलिक स्वरूप के निर्धारण में खनिज-संपदा का अपना अलग स्थान रहा है।

हिमालय की जनजातियाँ

हिमालय के भौगोलिक संदर्भ को स्पष्ट करने केलिए वहाँ की जनजातियों पर भी प्रकाश डालना है। पहले हिमालय की पुरातन जनजातियों तथा जनजातियों पर विचार किया गया है। प्रागैतिहासिक काल से ऐतिहासिक काल तक हिमालय विभिन्न मानव जातियों का आवास भूमि एवं कर्मभूमि रहा। यहाँ से अनेक सामाजिक प्रथाओं तथा सांस्कृतिक परम्पराओं का विकास हुआ जो कि इस देश के भिन्न-भिन्न समाजों में पाया जाता है। इन प्रथाओं और परम्पराओं को अस्तित्व में लाने वाली पुरातन जनजातियों के जातीय एवं सांस्कृतिक अवशेष किसी न किसी रूप में हिमालय के प्राकृतिक अभिलेखागार में सुरक्षित है।

हिमालय की पुरातन जनजातियाँ

हिमालय का क्षेत्र प्राचीन काल से अनेक जनजातियों का आवास एवं कर्म भूमि रही है। हिमालय की पुरातन जनजातियों में उल्लेखनीय है–

1. किरातार्जुनीयं - पंचम सर्ग ||10|| भारवि - पृ.सं - 100
2. 'हिमालय की संपदा' डॉ० प्रेम स्वरूप सकलानी पृ.सं 91

(1) यक्ष (2) गन्धर्व (3) किन्नर (4) पिशाच (5) असुर (6) दानव (7) दास-दस्यु (8) दरद (9) तुषार (10) कुलिन्द (11) कोल (12) किरात (13) गुह्यक (14) शक (15) नाग आदि।[1]

यक्ष:- यक्षों का सर्वप्रथम उल्लेख सीता के अन्वेषण के प्रसंग में सुग्रीव के द्वारा वानरों को दिए गए उस निर्देश में मिलता है, जिसमें कैलास के निकटस्थ यक्ष प्रदेश में भी जाने को कहा गया है।[2] कालिदास के मेघदूत काव्य का नायक यक्ष अलकापुरी का निवासी था। कुबेर के अनुचर होने के कारण यह सिद्ध होता है कि यक्षों का मूल स्थान कैलास का निकटवर्ती प्रदेश ही है।[3]

गन्धर्वाप्सरस् :- हिमालय की पुरातन जनजातियों में गन्धर्वाप्सरस् का भी प्रमुख स्थान रहा है। कालिदास के विक्रमोर्वशीयम् के प्रथम अंक में हिमालय के गन्धमादन पर्वत पर पुरूरवा के साथ विहार करनेवाली अप्सरा उर्वशी का संकेत हुआ है।[4]

किन्नर:- हिमालय की प्रमुख जनजाती किन्नरों के सम्बन्ध में महाभारत में उल्लेख पाया जाता है। अर्जुन को गन्धमादन पर्वतीय क्षेत्र में किम्पुरुष, किन्नर,विद्याधर आदि का साक्षात्कार हुआ था।[5]

किरात:- हिमालय की पुरातन जनजातियों में किरातों का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। पशुपतास्त्र की प्राप्ति केलिए शिव की खोज में निकले अर्जुन का किरातों के मध्य में रहकर किरातवेशी शिव के साथ युद्ध यही हुआ था ये तीनों जातियाँ सबसे प्रमुख कही जा सकती है।[6]

1. 'हिमालयी संस्कृति के मूलाधार' प्रो.डी.डी. शर्मा
2. श्रीमद् वाल्मीकीय रामायण किष्किन्धा काण्ड - 43/21-23 पृ.सं 514
3. मेघदूत कालिदास
4. विक्रमोर्वशीयम् - अंक 1 कालिदास
5. महाभारत - वन पर्व - 275/25 (158/38)
6. महाभारत - वन पर्व - 136/42

इसके अतिरिक्त तिब्बती, काश्मीरी, गड्डी, गुजारी, दर्द, चम्पा, लद्दाखी, शेरपा, नेपाली पहारी आदि हिमालय जनजातियों के सम्बन्ध में स्टुडन्टस ब्रिटानिका में उल्लेख हुआ है।[1] हिमालय में भारतीय संस्कृति नामक पुस्तक में हिमालय की जनजातियों में वनराजीव या वनरावत, भोटिया, जाड़ तांगसा, सींगपो का उल्लेख हुआ। वाल्मीकीय रामायण में गन्धर्व, किन्नर, सिद्ध, नाग और विद्याधर को हिमालय के निवासी बताया हैं।[2]

भारतीय कलाओं का पोषक - हिमालय

हिमालय भारतीय संस्कृति का मूल आधार रहा है। हिमालय की संस्कृति गंगा की भाँति पावन और निर्मल है। संस्कृति के अन्तर्गत कला को विशेष स्थान प्राप्त है। कला के माध्यम से कलाकार एक युग विशेष की संस्कृति को भावी युगों केलिए धरोहर बनाता है। भारत की सांस्कृतिक भावनाओं पर हिमालय के लोकगीत, लोकनृत्य, चित्रकला, मूर्तिकला आदि का विशेष प्रभाव रहा है।[3]

भारतीय संस्कृति के पोषण में लोक संस्कृति सदा सहायक रही है। पौराणिक कथाओं देवमंदिरों और तीर्थयात्रियों द्वारा हिमालय के क्षेत्र में भारतीय संस्कृति को विशेष बल मिला। सम्पूर्ण भारत के नर-नारियों ने धार्मिक विश्वास के साथ हिमालय के पुण्य तीर्थस्थानों का भ्रमण करके वहाँ के रहनेवालों के प्रति आत्मिक स्नेह प्रकट किया इससे मैदानी एवं पर्वतीय भागों का एक प्रकार से भेद समाप्त हुआ।

उत्सव, मेले एवं त्योहारों के समय लोकगीत गाया जाता है। *'पाण्डव गीत'* बड़ा लोकप्रिय गीत है जिसमें पुराणों की अनेक कथाओं का उल्लेख किया गया है। महाभारत से

1. Students Brittanica - (D-H) - p - 278
2. श्रीमद् वाल्मीकीय रामायण किष्किन्धा काण्ड - 43 पृ.सं 515
3. भारतीय संस्कृति की महिमा - डॉ०. कृष्ण भावुक - पृ.सं - 170

यह स्पष्ट हो जाता है कि पाँडवों का सम्बन्ध हिमालय से अधिक रहा है। '*कांगड़ा के लोक गीतों*' में देशप्रेम और प्रकृति-प्रेम को विशेष स्थान दिया गया है। काश्मीर के लोकगीतों में कृषकों, श्रमिकों के जीवन, देवपूजन और काश्मीर की दिव्य छटा का वर्णन मिलता है। देवसी गीत, भाइलो गीत आदि विशेष त्योहारों पर गाये जाते हैं। '*कुल्लू का दशहरा*' बड़ा प्रसिद्ध है। इस अवसर पर हिमालय के क्षेत्रों में अनेक जातियाँ अपनी-अपनी पोशाक और अपनी-अपनी भाषा में लोकगीतों का आनन्द लेती हैं।[1]

भारत की नृत्य कला का वास्तविक रूप आध्यात्मिक है। क्योंकि इस कला के अविष्कर्त स्वयं कला निधान शिव ही है। शिव का वास स्थान हिमालय का कैलास पर्वत है। शिवमहापुराण में सती वियोग प्रसंग में ताण्डव नृत्य का उल्लेख हुआ है। पुराणों के अनुसार नृत्य का प्रारम्भ शिव के ताण्डव नृत्य से माना जाता था। शिव ताण्डव नृत्य (या नृत्य के संहारकारक रूप) में प्रवीण थे तो पार्वती कोमल भावों को व्यक्त करनेवाले लास्य नृत्य में। कवि कुलगुरु कालिदास ने भगवान शंकर के इस नटराज रूप का बड़ी कुशलता के साथ चित्रण किया है। कवि कहते हैं कि नृत्य का आदि स्थान हिमालय और प्रवर्तक स्वयं महादेव है।

मेघदूत में यक्ष के मुख से मेघ के प्रति कहलाते हैं–

"*नृत्यारंभे हरपशुपतेरार्द्र नागजिनेच्छा*
शान्तोद्वेगस्तिमित नयनं दृष्ट भक्तिर्भवान्या।।"[2]

अर्थात्-हे मेघ। सायंकाल समय नवीन जवापुष्प की लाली के समान रक्तिम आभा से सम्पन्न अपने मंडल को शिव की भुजाओं पर इसप्रकार तान देना कि अपने नाच के आरंभ में उन्हें गजासुर की गीली खाल की इच्छा न रहे। उस समय पार्वती भी तेरी शिव शक्ति को निश्चलनयन होकर देखेगी।

1. 'हिमालय में भारतीय संस्कृति' डॉ॰ विश्वम्भर सहाय प्रेमी - पृ.सं. 270
2. मेघदूत - पूर्वमेघ ||40|| कालिदास - पृ.सं. 40

प्राचीन साहित्य में हिमालय की किन्नरियों के नृत्य का भी वर्णन मिलता है। थाली नृत्य, थोरा नृत्य, चैती पसारा, छपैली नृत्य, चौफुलों नृत्य आदि यहाँ के जन-जीवन और रीति-रिवाज़ों से संबन्धित है। हिमालय के लोक नृत्यों का हमारी संस्कृति से सीधा सम्बन्ध रहा है। इस पहाड़ी प्रदेश के लोक नृत्य की अन्तरात्मा मानव की सौन्दर्य-चेतना, पर्वतीय लोक जीवन के हास और रुदन की स्वस्थ कला परम्परा, जन-मन में उमंगें, प्रकृति का रंग वैभव, यहाँ का ग्राम जीवन संघर्ष और श्रम प्रतिबिम्बित करती है। प्रत्येक लोकगीत के साथ वाद्य, नरसिंगा, शहनाई, ढोल, बाँसुरी, करताल, खंजरी, डमरू इत्यादि बजाए जाते हैं। ये लोकगीत, लोकवाद्य और लोकनृत्य की त्रिवेणी इस पर्वतीय प्रदेश में अनन्तकाल से प्रवाहित होती रही है।[1]

चित्रकला में काँगड़ा शैली एवं गढ़वाल शैली विख्यात थी। हिमालय की सांस्कृतिक संपदा विविधता में एकता तथा विश्वबन्धुत्व की भावना में निहित है। जो भारतीय संस्कृति का प्राण है। कैलास की चोटी से भारतीय शिल्पकार प्रभावित हुए और मन्दिरों के शिखर उसी आकार में ढाले जाने लगे। हिमालय मानव मात्र की कल्याण भावना से ओतप्रोत है। इसके सुन्दर कलेवर में सत्यं शिवं सुन्दरं का मनोरम समावेश है। वास्तक में भारतीय कला, साहित्य, लोकगीत और धर्म को जितना हिमालय ने प्रभावित किया है, विश्व भर में किसी अन्य पर्वत ने किसी देश के जीवन को इतना प्रभावित नहीं किया।

हिमालय का प्राकृतिक संदर्भ

हिमालय का प्राकृतिक सौंदर्य सदैव आकर्षक रहा है। प्राकृतिक सौन्दर्य के प्रति मानव मन सदैव आकृष्ट होता रहा है। संसार का सबसे बड़ा पर्वत हिमालय को प्रकृति ने बर्फ का चादर देकर अनुग्रहीत किया है। पर्वतों को प्रकृति का एक विशिष्ट उपकरण माना

1. हिमाचल प्रदेश के लोक नृत्य - डॉ० हरिराम जसटा - पृ.सं - 61

जाता है। ये खाली पत्थरों की जड़ता से बने लगते हैं, लेकिन इन जड़ पर्वतों की गोद में हरियाली लहराती है, पेड़-पौधे लहराते रहते हैं, शीतल शुभ्र झरने, तरह-तरह के जानवर, पशु-पक्षी आदि इस जड़ पर्वत को चेतना युक्त बनाते हैं। इस प्रकार पर्वतों का सौन्दर्य चेतन प्रधान बन जाता है। हिमालय भी अपने बर्फिले सौन्दर्य को प्रकृति के चेतन वस्तुओं के संपर्क से चेतनमय बनाता है।

हिमालय ऊँचे-ऊँचे हिमाच्छादित पर्वत-शिखरों, कल-कल रव करती नदियों, नालों और झरनों, स्फटिक शिलाओं, झीलों, मनोहर ढलानों पर बने क्यारीनुमा खेतों, हरी चरागाहों, घने वनों से पूरित रमणीय प्राकृतिक सौन्दर्य की पुण्य पावन धरती है। इस प्रकार हिमालय धरती केलिए अनुपम कोषागार है, जो सदैव प्राकृतिक सुन्दरता और सुषमा से मंडित दिखाई पड़ता है।

प्राचीन काल से आज तक विभिन्न साहित्यकारों एवं कवियों की काव्य रचना केलिए हिमालय का प्राकृतिक सौन्दर्य प्रेरणा स्रोत रहा है। हिमालय के प्राकृतिक सौन्दर्य को दिखाने केलिए हिमालय में बदलकर आनेवाले ऋतुओं का, नदियों का, पर्वतों, सरोवरों, रमणीय स्थानों, पशु-पक्षी, जीव-जन्तु, पुष्प, फल, लता, वृक्ष आदि वनसंपदाओं का सूक्ष्म निरीक्षण किया गया है। हिमालय की इन प्राकृतिक एवं भौगोलिक इकाईयों का वर्णन करते हुए कवियों ने हिमालय की प्रकृति को जड़ न मानकर मानव के सुख-दुःख की सहचारणी बना दिया।

हिमालय की वन-संपदा

हिमालय पर्वतश्रेणियों का दृश्य अत्यन्त रमणीय है इनका ऊपरी भाग बर्फ की धवलिमा से आच्छादित है तो निचला हिस्सा हरी-भरी वनराजियों से संपन्न है। हिमालय की

वनस्पतियाँ यहाँ के प्राकृतिक वैभव एवं भौगोलिक स्वरूप को उद्घाटित करने में सहायक है। भारत की भौगोलिक संस्कृति के अन्तर्गत वनस्पतियों का विशेष महत्व है। वन-संपदा किसी प्रदेश के बहुमूल्य प्राकृतिक संसाधन है।

हिमालय में बहुत उपयोगी वानस्पतिक संपदा है। यहाँ पर औषधि निर्माण हेतु वनस्पति, लिसा, तेल निर्माण हेतु वनस्पति, रेशा एवं रंगाई हेतु वनस्पति एवं फलदार वृक्ष पाया जाता है। हिमालय में उगनेवाली जड़ी-बूटियाँ आयुर्वेद के भण्डार को सदा से पूरित करती रही है। आयुर्वेद के ग्रंथों में हिमालय में पाई जानेवाली जड़ी-बूटियों का वर्णन चरक और शुश्रुत ने दिया है। रामायण की कथा में संजीवनी बूटी का उल्लेख मिलता है। जिस समय मेघनाद की शक्ति ने लक्ष्मण को मूर्छित कर दिया तब उनकेलिए द्रोणगिरि (हिमालय) से राम के भक्त, हनुमान संजीवनी बूटी लाए थे। इसके कारण लक्ष्मण पुनः जीवित हो गए थे।[1] इस प्रकार हिमालय में पाई जानेवाली ये जड़ी-बूटियाँ मानव जीवन केलिए अमोघ औषाधियाँ हैं। इन्हीं जड़ी बूटियों के औषधीय गुण के कारण हिमालय से निःसृत होनेवाले नदियाँ भी औषध गुण से युक्त बनी हैं। हिमालय की इन वनस्पतियों में अनेक रंगों के पुष्प, छोटे-छोटे पौधे, उनकी शाखाएं, बड़े-बड़े वृक्षों की छाल, पत्तियाँ फल एवं अन्य भाग सम्मिलित है।

हिमालय की वनस्पतियाँ दो हज़ार फुट ऊँचाई से सत्रह हज़ार फुट ऊँचाई तक पाई जाती हैं। हिमालय की पुष्पों की घाटी सहस्रों प्रकार के रंग-विरंगे और सुगन्धित पुष्पों केलिए विख्यात हैं। काश्मीर की केसर की क्यारियाँ भी सुविख्यात हैं। हिमालय में पहाड़ी बेर, सेव, अमरूद, छोटी बेल, बादाम आदि फल एवं कन्द मूल पाए जाते हैं। पर्वतों में रहनेवाले साधु महात्मा इन्हीं को शुद्ध एवं सात्विक मानते हैं। वृक्ष एवं लताएं ही पर्वतों की संपत्ति होती है। हिमालय में चीड़, बाँज, बुरांस, देवदारु, भोज, शाल आदि वृक्ष-वल्लियों,

1. श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण - युद्धकाण्ड सर्ग 50 पृ.सं. 1097.

सोमलता, शिवधतूरा, रतन जोति, ममीरा, संजीवनी आदि जड़ी बूटियों की भरमार है।[1] कालिदास ने हिमालय के प्रसंग में देवदार[2], सरल[3], भूर्जपत्र[4], अखरोट[5], सुरपुन्नाग[6], नक्तमाल[7] और सप्तपर्णा[8] वृक्षों का उल्लेख किया है। हिमालय में ही दिखाई देनेवाला एकदम सीधे ऊपर की ओर जानेवाला वृक्ष है देवदारु इसे देवताओं का वक्ष माना गया है। ये वृक्ष हिमालय पर 6,000 फुट से ऊपर ऊँचाई वाले क्षेत्रों में पाए जाते हैं। देवदारु वृक्ष की लकड़ी देवमंदिरों के निर्माण के काम में आती थी।[9] वृक्षों में भी दैवत्व की कल्पना करना हमारी संस्कृति की एक खासियत रही है। हमारी संस्कृति के साथ इस वृक्ष के सम्बन्ध को सुस्पष्ट करते हुए हज़ारी प्रसाद द्विवेदी अपने निबन्ध में लिखते हैं - देवदारु देवताओं का दुलारा पेड़ है; महादेव ने समाधि केलिए देवदारु द्रुम - वेदिका पसन्द की थी। देवदारु वृक्ष पवित्र माना जाता था। जिन देवदारुओं को पार्वती माता अपना तनय मानकर पालती थी उन्हें क्रूर गज जब तोड़कर नष्ट कर देते थे तब पार्वती के वाहन क्रूरतर सिंह उन्हें समुचित दंड देते थे।[10] गज़ों के झुंड जब देवदारुओं को रगड़कर तोड़ देते थे तब वनांत तक उन तरुओं के क्षीर का तेज़ गन्ध फैल जाता था। कालिदास ने *'कुमार संभव'* के प्रथम सर्ग में हिमालय की महानता एवं प्रकृति सौन्दर्य का उल्लेख करते हुए देवदारु वृक्ष की सुगन्ध किस प्रकार

1. संस्कृति पत्रिका - जून 1985 (डॉ॰ स्नेहलता) पृ.सं. 36
2. कुमारसंभव - 1 सर्ग / 15 कालिदास - पृ.सं - 19
3. रघुवंश - 4 सर्ग / 75 - कालिदास - पृ.सं - 55
4. रघुवंश - 4 सर्ग / 73 - कालिदास - पृ.सं - 53
5. रघुवंश - 4 सर्ग / 69 - कालिदास - पृ.सं - 51
6. रघुवंश - 4 सर्ग / 74 - कालिदास - पृ.सं - 54
7. रघुवंश - 5 सर्ग / 42 - कालिदास - पृ.सं - 39
8. रघुवंश - 5 सर्ग / 48 - कालिदास - पृ.सं - 45
9. 'हिमाचल प्रदेश की झाँकी' डॉ॰ हरिराम जसटा - पृ.सं - 34
10. हज़ारी प्रसाद द्विवेदी ग्रंथावली - 9

पर्वतीय प्रदेश में फैल जाती है इसका उल्लेख किया है।[1] महादेवी वर्मा ने कालिदास की इन पंक्तियों का हिन्दी में अनुवाद करते हुए लिखा है कि-

"जब मस्तक खुजलाते हैं गज देवदारु से संघर्षरत
उनसे बहकर क्षीर सुरभिमय कर देता शिखरों को शोभित।"[2]

'रघुवंश' में कालिदास ने इसी देवदारु वृक्ष के सम्बन्ध में पौराणिक आख्यान प्रस्तुत किया है। कुम्भोदर नामक सिंह (जो शिवजी का किंकर है) राजा दिलीप से कहते हैं -सामने जो देवदारु वृक्ष है जिसे शंकर ने पुत्र माना है और पार्वती द्वारा पालित है, उस देवदारु की रक्षा केलिए शिव ने उसे नियुक्त किया था।[3]

हिमालय के घने जंगलों में विभिन्न जाति के वन्य-पशु विचरण करते हैं, जिनमें कस्तूरी मृग, सफ़ेद रीछ, चीता, शेर, लंगूर, तेंदुआ, हिम-तेंदुआ आदि जीव पाए जाते हैं। हिमालय में विचरण करनेवाले कस्तूरी-मृग 9,000 फीट की ऊँचाई पर बर्फीले घने वनों एवं डरावनी पहाड़ी कन्दराओं में पाए जाते हैं। कस्तूरी हिरण के शरीर में सुगन्धित और मूल्यवान् कस्तूरी पायी जाती है।[4] हिमालय की राज्य पक्षी मोनाल है। हिमालय के अजिर में एक प्रकार के चमत्कारित मनुष्य भी पाया जाता है जिसे हिम मानव या यति भी कहते हैं। हिमालय में याक एक ऐसा पशु है जो पर्वतों में बर्फ से ढकी चोटियों तक पहूँचता है।

हिमालय के पर्वतीय प्रदेश में गिरते हुए पवित्र ओस कणों ने हमारी संस्कृति का पालन पोषण किया है। हिमालय की वन-संपदा ने भू-क्षरण को कम किया है, नदी-नालों

1. कुमार संभव - प्रथम सर्ग - कालिदास
2. हिमालय (कुमार संभव अनुवाद) महादेवी वर्मा - पृ.सं - 18
3. रघुवंश - दूसरा सर्ग ||36|| पृ.सं. 32 ||37|| कालिदास - पृ.सं - 32
4. हिमाचल प्रदेश की झाँकी - डॉ० हरिराम जसटा पृ.सं. 34.

के बहाव को नियंत्रित किया है, स्थानीय जलवायु को संयत किया है, बाढ़ कम करके, पशु-पक्षियों के रहने और मनोरंजन के अच्छे साधन प्रदान किया है। इस वनसंपत्ति के कारण हिमालय सदैव विदेशियों एवं पर्यटकों को अपनी ओर आकर्षित करता है। हिमालय की वन-संपत्ति ने भारत की आर्थिक समृद्धि में अवश्य अपना भाग निभाया है।

हमारे पूर्वज वृक्षों की पूजा करते थे तथा हिमालय के वन्य जन्तुओं के सम्बन्ध में यह बात प्रसिद्ध है कि वे तपस्वियों, मुनियों एवं ऋषियों के समीप मित्रवत् विचरण करते थे। (पुराणों में ध्रुव एवं प्रह्लाद की कथाओं में इसका उल्लेख मिलता है)। इससे यह बात स्पष्ट हो उठती है कि मानव की सात्विक वृत्तियों का वन्य जन्तुओं पर भी प्रभाव पड़ता है। हिमालय की उपत्यकाओं को आज भी यह गौरव प्राप्त है कि उनमें सात्विक वृत्ति के योगी और महात्मा चिन्तन में लीन हैं।

हिमालय के रमणीय स्थान

उत्तुंग पर्वत मालाओं; दूर-दूर तक फैले हरे भरे मैदानों; देवदारु, चीड़, बाँज आदि के सघन वन; कलरव करती हुई कल्लोलिनी नदियों, विशाल कुण्ड, ताल-सरोवरों, फूलों की मनोहर घाटियों से युक्त हिमालय प्राकृतिक पर्यावरण के विराट सौन्दर्य को अपने में समेटा हुआ है। हिमालय के रमणीय स्थानों में टिहरी, देहरादून, नैनिताल, भटवाडी, श्रीनगर, काश्मीर, मसूरी, फूलों की घाटी, अल्मोड़ा, कौसानी, कूर्माचल, शिमला, नेफ़ा, लद्दाख आदि स्थानों की प्राकृतिक रमणीयता से प्रभावित होकर देश-विदेश से पर्याटक, तीर्थयात्री एवं पर्वतारोही इसके दर्शन केलिए आते हैं। इसके अतिरिक्त कैलास, मानसरोवर, ऋषिकेश, बदरीनाथ, केदारनाथ आदि तीर्थ स्थान भी रमणीयता से पूरित है। इस प्रकार पर्यटन के द्वारा सांस्कृतिक एकता एवं अखण्डता को कायम रहता है। हिमालय के ये स्थान उसके भौगोलिक एवं प्राकृतिक संदर्भ को उद्घाटित करने में सर्वथा सहायक रहे हैं।

हिमालय के धार्मिक, आध्यात्मिक एवं नैतिक संदर्भ

हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ को स्पष्ट करने केलिए हिमालय के धार्मिक, आध्यात्मिक और नैतिक संदर्भ पर भी विचार किया गया है। मानव जाति को संयमित, नियमित और ऊर्ध्वमुखी बनाने के कारण धर्म एक महत्वपूर्ण सांस्कृतिक पक्ष है। हिन्दू धर्मावलम्बी हिमालय को देवताओं का वास स्थान मानते हैं। अपने इस धार्मिक विश्वास को दृढ़ बनाने केलिए वे पौराणिक ग्रंथों एवं मान्यताओं को आधार बनाते हैं। हिमालय में असंख्य तीर्थ स्थान हैं। यहाँ का हर एक पर्वत प्रत्येक देवता को सौंपा गया है। हिमालय के ये तीर्थ कोई पुराण घटना या इतिहास का साक्षी है। हिमालय के इस धार्मिक महत्व को उद्घाटित करने केलिए पौराणिक (वेदों, पुराणों, उपनिषद, रामायण, महाभारत) प्रसंग को लिया है। जिसे पौराणिक परिप्रेक्ष्य में हिमालय उपशीर्षक में रखा गया है। इस धार्मिक भावना के कारण हिमालय में अनेक उत्सव एवं त्योहार मनाया जाता है। देश के दूर-दूर भाग से लोग यहाँ आते हैं और इसमें भाग लेते हैं। इस प्रकार ये पर्व एवं त्योहार देश की एकता या अखण्डता को कायम करने में सक्षम हैं।

हिमालय के धार्मिक संदर्भ को उद्घाटित करने केलिए सबसे पहले - हिमालय के प्रमुख तीर्थस्थान एवं धार्मिक महत्व पर विचार हुआ है। पौराणिक काल से लेकर हिमालय के पुण्य तीर्थ स्थानों को भक्ति एवं आदर के साथ सम्मानित करनेवाला देश रहा है भारत। ये पुण्य स्थान प्रकृति रमणीय और आध्यात्मिकता के दिव्य स्पन्दनों से परिपूरित भी है। इस प्रकार हिमालय हमारी राष्ट्रीय संस्कृति, धर्म एवं जीवन मूल्यों को गहरे ढंग से प्रभावित करनेवाला स्थान रहा है। हिमालय की सम्पूर्ण भूमि तीर्थ स्वरूपा मानी जाती है। भारत के उत्तर भाग के अधिकांश तीर्थ किसी न किसी तरह हिमालय से जुड़े हुए हैं। हिमालय से बहकर आनेवाली नदियों के तटों पर सैकड़ों तीर्थ बसे हैं। प्राचीन काल से ही

तीर्थों को आध्यात्मिक शुद्धि का स्थान माना जाता है। हिमालय का एक-एक कोना कोई पौराणिक आख्यान को लेकर चलता है। देवताओं की भूमि तथा ऋषि एवं तपस्वियों की तपस्थली होने के कारण हिमालय सदैव पवित्र रहा है। इनके स्मरण दिलाने या इनके द्वारा किए पुनीत कार्यों की याद दिलाने केलिए यहाँ असंख्य मंदिर एवं तीर्थ बने हैं। प्रतिवर्ष यात्री इनके दर्शन केलिए आते हैं। इस प्रकार तीर्थयात्रा अधिभौतिक, अधिदैविक तथा आध्यात्मिक तीनों स्थरों पर संस्कृति की पहचान भी है। हिमालय के तीर्थस्थानों में प्रमुख है कैलास और मानसरोवर। (जिसका विवरण भौगोलिक संदर्भ में दिया है) अब ये तीर्थ भारत के अधिकार में नहीं है।

हिमालय के प्रमुख तीर्थ स्थान एवं धार्मिक महत्व

हिमालय के प्रमुख तीर्थ हिन्दु पुराण कथाओं से जुड़े हैं। हिमालय के प्रमुख तीर्थस्थान है बदरीनाथ, केदारनाथ, गंगोत्तरी और यमुनोत्तरी। इन सभी स्थानों को मिलाकर उत्तर खण्ड कहा जाता है।[1] इनके अतिरिक्त अन्य प्रमुख तीर्थ है - ऋषिकेश, हरिद्वार, अमरनाथ, सप्तसरोवर, काशी, उत्तरकाशी, प्रयाग, शेषनाग, दक्षेश्वर महादेव, नागराज की गद्दी, त्रिजुगी नारायण आदि।

बदरीनाथ - बदरीनाथ (विशालपुरी) हिमालय का सबसे प्रमुख तीर्थ स्थान है। यह नर - नारायण की तपस्थली है। महर्षि व्यास ने बदरीनाथ बदरीकाश्रम में सरस्वती नदी के किनारे बैठकर पुराणों की रचना की। यहाँ पर व्यास गुफा और गणेश गुफ़ा अभी विद्यमान है। इस क्षेत्र में निवास करने के कारण वेद व्यास को बादरायण भी कहते हैं। शंकराचार्य ने बदरी वन में निवास कर सोलह भाष्य वेदों पर लिखे।[2]

1. पुराण संदर्भ कोश - पद्मनी मेनन - पृ.सं - 37

   उत्तर खण्ड को ऋषियों की पुण्य भूमि तथा देवताओं का प्रिय माना जाता है। पुराणों में यह पवित्र भूमि, देव भूमि, केदारखण्ड, बदरीकाश्रम, ब्रह्मऋषि देश आदि नामों से प्रसिद्ध है।

2. पुराणनिघण्डु वेट्टम माणी पृ.सं - 926

गंगोत्तरी और यमुनोत्तरी - गंगोत्तरी और यमुनोत्तरी नाम गंगा और यमुना के उत्तरवाहिनी होने के कारण पड़े हैं। गंगा और यमुना अपने उद्दाम से निकलकर थोड़ी दूर तक उत्तरवाहिनी होकर के बहती है। यहाँ रेणुका देवी का मन्दिर स्थित है।[1]

हरिद्वार हिमालय का प्रमुख तीर्थ स्थान हरिद्वार को हरद्वार, स्वर्गद्वार या गंगाद्वार भी कहा जाता है। हिमालय की उपत्यका में अवस्थित हरिद्वार वैष्णवों के मतानुसार वैकुण्डनाथ का वास स्थान है अर्थात् हरिद्वार है और शैवों के मतानुसार श्रीपरमेश्वर का वास स्थान है अर्थात् हरद्वार है। हिमालय का यह प्रमुख तीर्थ धार्मिक दृष्टि से वैष्णवों और शैवों केलिए पुण्य स्थान बनकर रहता है।[2] हरिद्वार में ही कपिल मुनि का आश्रम है और इसलिए इस स्थान को कपिल स्थान भी कहा जाता है। इसका अन्य नाम मायापुरी भी है। हरिद्वार के प्रमुख स्थान है - हर की पैरी, मृत्युंजय महादेव, नील धारा, ब्रह्मकुण्ड, सप्तसरोवर आदि। यहीं एक शिला पर विष्णु का पदचाप है इसे हर की पैरी माना जाता है। हरिद्वार के प्रमुख मन्दिर है नीलेश्वर, मनसा देवी, चण्डा देवी, माया देवी, बिलवकेश्वर महादेव आदि। कुम्भ मेला मनाए जानेवाले चार स्थानों में एक हरिद्वार है।[3]

ऋषिकेश - ऋषियों की तपस्थली है। ऋषीकेश में लछमन झूला नामक स्थान है। यहाँ से भगवान राम और लक्ष्मण हिमालय की ओर गए थे। रैभ्य नामक एक ऋषि अपने इन्द्रियों (ऋषकों) का दमन कर यहीं तपस्या की थी इसलिए यह ऋषिकेश पुकारा जाता है।[4]

अमरनाथ - हिमालय में अवस्थित अमरनाथ हिन्दुओं का परम पावन तीर्थ है जो काश्मीर के अन्तर्गत है।

1. सरस्वती पत्रिका-अगस्त 1969 - पृ.सं 128
2. 'हिमालय तीर्थङ्ल' दानानन्द स्वामिकल
3. 'हिमालय में भारतीय संस्कृति' विश्वम्भर सहाय प्रेमी
4. In the Lap of Himalayas - Swamy Akhandananda

उत्तर-काशी - पौराणिक काल से ही हिमालय के अति प्रसिद्ध पुण्य स्थान रहा है। यह स्थान धार्मिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। विश्वनाथ मंदिर, मणिकर्णिका घाट, अन्नपूर्ण तथा अन्य देवी-देवताओं का मंदिर यही अवस्थित है। किरातरूपी शिव और अर्जुन की युद्ध की पृष्ठभूमि भी यही उत्तर काशी ही है।

काशी - हिमालय से निसृत होकर आनेवाली गंगा नदी के तट पर स्थित भारत का प्रमुख तीर्थ स्थान है काशी। इनके अतिरिक्त गंगा नदी को सबसे प्रमुख तीर्थ स्थान माना जाता है। हैमवती गंगा के तट पर अनेक प्रमुख तीर्थ स्थान एवं प्रमुख शहर बसे हैं। हरिद्वार, प्रयाग, काशी आदि प्रमुख तीर्थ गंगा तट पर है। इसके अलावा सैकड़ों तीर्थ स्थान इसके चारों ओर बने हैं और तीर्थ जननी के रूप में गंगा की भूमिका सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। गंगोत्तरी मन्दिर से लेकर देवप्रयाग, कर्णप्रयाग आदि बारह प्रयागों हृषिकेश, कनखल, बिठूर, पटना आदि तीर्थ स्थानों को इसी गंगा ने महिमा प्रदान की। हिमतनया विश्वविख्यात गंगा नदी का धार्मिक महत्व असीम है। गंगा ब्रह्मा (कमण्डलु), विष्णु (पदकमल), महेश (जटाजूट) से किसी तरह सम्बन्धित है। विभिन्न त्योहारों पर गंगा स्नान का विशेष महत्व भी है। गंगा जल में स्नान करने से समस्त पाप धुल जाते हैं तो गंगाजल के आचमन से आत्मा पवित्र हो जाती है। कूर्म पुराण में गंगा जल की पवित्रता को इस प्रकार वर्णित किया है-

"तत्र गंगामुपस्पृश्य शुचि र्भावसमान्वित :।
मुच्चते सर्वपापैस्तु ब्रह्मलोक वसेन्नर :।।"[1]

अर्थात् तीर्थ में पवित्र और श्रद्धायुक्त होकर गंगाजल का आचमन करने से मनुष्य को सारे पापों से मुक्ति मिल जाती है और ब्रह्मलोक में उसका वास होता है। मानव जीवन में जन्म से मृत्यु तक विभिन्न संस्कारों में गंगा, गंगाजल, गंगा तटीय तीर्थस्थानों आदि

1. कूर्मपुराण - आचार्य तारिणीश झा - सप्तत्रिशोध्याय - पृ.सं - 823

का विशिष्ट स्थान रहा है। इस प्रकार हिमालय की प्रमुख नदी गंगा भारतीय संस्कृति से अनन्य सम्बन्ध स्थापित करने में सक्षम रही है।

इस प्रकार अनेक तीर्थों से संपन्न हिमालय की तीर्थ भूमि ने भारतीय संस्कृति को पनपने का अवसर प्रदान किया है। आज हिमालय की तीर्थयात्रा का बहुत बड़ा महत्व इसलिए आंका जाता है कि हमारे ये तीर्थ देश के कोने-कोने से लोगों को अपनी पवित्रता का परिचय दिलाकर अपनी ओर आकर्षित करता है। ऐसी यात्राओं से देश की भावात्मक एकता की सीधी पहचान हो जाती है, इसका राष्ट्रीय महत्व भी है। हिमालय भारत के दूसरे प्रदेशों से भौगोलिक दृष्टि से भिन्न है। हिमालय के ये उन्नत गिरि श्रृंगों, जल से संपन्न स्रोतों, विजन गिरि कन्दराओं, भीमाकार हिम-खण्डों निभड घोर अटपियों में ही भक्त एवं तीर्थयात्रियों ने ईश्वर का सान्निध्य पाया है। इन सभी विशेषताओं को समेटते हुए हिमालय की भूमि एक ओर अपनी तपोवनी संस्कृति को प्रकट करता है तो दूसरी ओर अपनी इस रमणीय रूप से मनस्वियों को अपनी ओर खींचता है।

हिन्दु धर्मावलम्बियों केलिए देवताओं का वासस्थान हिमालय

हिमालय देवभूमि है अर्थात् हिन्दुओं के आराध्य देवताओं का वास स्थान रहा है। कैलास हिमालय का सर्वश्रेष्ठ शिखर है जहाँ पर कैलासपति शिव अपने शरीर में व्याघ्रचर्म तथा धूल लगाए अपनी अर्द्धांगिनी पार्वती के साथ निवास करते हैं। देवाधिदेव महादेव का वास स्थान होने के कारण हिमालय का दैवित्व ओर बढ़ जाता है। शिव का वैदिक रूप 'रुद्र' हिमालय क्षेत्र की विशिष्ट संस्कृति का द्योतक है। पुराणों से प्रमाणित हो जाता है कि ऋषि-महर्षियों ने ही नहीं, दैत्य एवं दानवों ने भी भगवान शिव से असाधारण अधिदैनिक, अधिभैतिक, आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त कर विश्व में अद्वितीयता अर्जित की है। रामायण में राम - लक्ष्मण के विरुद्ध युद्ध में रावण और मेघनाद का बार-बार हिमवन्त में

शस्त्र-शास्त्रों के आचार्य शंकर से, युद्ध कला के सम्बन्ध में उचित आदेश निर्देश प्राप्त करने केलिए पधारने का वर्णन है। महाकवि कालिदास ने कैलास पर्वत को शिव का वास स्थान बताया है। अतः यह पवित्र है। इन्होंने शिव एवं कैलास पर्वत में सामान्य धर्म की स्थापना करते हुए दोनों को महानता में समान प्रतिपादित किया है। शंकर अपनी महिमा के कारण सारे आकाश में व्याप्त हैं और कैलास पर्वत के चारों ओर भी आकाश व्याप्त है। वाल्मीकीय रामायण में हिमालय पर्वत के उत्तर भाग में उसी के एक शिखर पर उमादेवी के साथ भगवान महेश्वर का तप करने का वर्णन हुआ है।[1]

हिमालय के प्रमुख त्योहार एवं उत्सवों का धार्मिक महत्व

भारतीय सभ्यता और संस्कृति के प्रतीक है त्योहार और उत्सव। हिमालय के उत्सव शताब्दियों और सहस्राब्दियों से सामाजिक जीवन में नवप्रेरणाओं का सन्देश देता आया है। ये गत ऐतिहासिक स्मृतियों को जागृत करते हुए पिछले गौरव के मंगलमय मंत्र सिखाता है। ये त्योहार एवं उत्सव मानव की सामाजिक चेतना के क्रमिक विकास के ऐतिहासिक संस्मरण है। त्योहार एवं मेले लोक जीवन के सबसे बड़े सांस्कृतिक प्रतिनिधि होते हैं।

गंगा सप्तमी, गंगा दशहरा, निर्जला एकादशी, कुम्भ, हस्तालिका व्रत, कजरी तीज, अनन्त चौदस, शिवरात्री, कार्तिक पूर्णिमा आदि प्रमुख त्योहार है।

शिवरात्रि : फाल्गुन कृष्ण चतुदर्शी को महाशिवरात्रि के नाम से जाना जाता है। इस दिन भगवान् शिव की पूजा पापों का नाश करने और अक्षय मोक्ष की प्राप्ति की कामना से की जाती है। इस दिन उपवास रखकर; जल, बेल पत्र, धतुरा,बेर आदि चढ़ाकर भगवान शिव की पूजा की जाती है।

1. वाल्मीकीयरामायण - छत्तिसवाँ सर्ग ||26|| - पृ.सं - 69

गंगा दशहरा:- ज्येष्ठ शुक्ल दशमी को बुधवार के दिन हस्त नक्षत्र में भागीरथी गंगा का जन्म दिन मनाया जाता है। इसी तिथि को गंगा स्वर्ग से पृथ्वी पर उतरी थी। इस व्रत को गंगा दशहरा कहते हैं। हिम सुता गंगा की महानता एवं उपयोगिता विश्व विख्यात है। गंगा में स्नान करने, दान देने और तर्पण करने से दस पापों का हरण होता है। इसलिए इस पर्व को दशहरा कहते हैं।[1]

हस्तालिका व्रत:- भादों के शुक्ल पक्ष की तृतिया को हस्तालिका व्रत मनाया जाता हैं। यह खास तौर पर स्त्रियों का त्योहार है। शंकर और पार्वती का शास्त्रविधि के अनुसार पार्थिव पूजा इस दिन किया जाता है।[2]

कुंभ - कुंभ पर्व दो संस्कृतियों, विचार धाराओं के संघर्ष और परिणाम की स्मृति है। देवासुर संग्राम में देवताओं द्वारा अमृत ग्रहण करना और असुरों द्वारा उसे हटपकर ले जाने का संकेत हुआ है। दानवों से अमृत कलश बचाने केलिए इंद्र के पुत्र जयन्त अमृत कलश ले कर भागता है। इससे अमृत कुंभ से कुछ सुधा पृथ्वी पर गिरा। ये अमृत बूँदें प्रयाग (त्रिवेणी), हरिद्वार (गंगा), नासिक (गोदावरी) और उज्जैन (क्षिप्रा) में छलकीं। कुंभ पर्व लगभग बारह वर्ष पर लगते हैं।[3]

तपस्वियों एवं ऋषियों की तपस्थली - हिमालय (आध्यात्मिक संदर्भ)

अध्यात्म द्वारा मानव की भक्ति, ज्ञान एवं कर्म का उदात्तीकरण संभव है। हिमालय की भूमि आध्यात्मिक दृष्टि से इसलिए श्रेष्ठ है कि यह सदा शांत, गंभीर, नितान्त निश्चल, ध्यानमग्न होकर तपस्वी के समान खड़ा है जितनी भी दुष्कर या मलिन मन को

1. 'भारतीय मेलों और उत्सवों का दिग्दर्शन' वेदप्रकाश गुप्त
2. 'भारत के त्योहार' - सुशील चन्द्र शर्मा - पृ.सं - 31
3. 'गंगा अतीत एवं वर्तमान' - वरदा वसुन्धरा - 24-28

शुद्ध एवं स्वच्छ बनाकर उसमें आध्यात्मिक एवं सात्विक भाव जगाता है। हिमालय की प्राकृतिक छटा, उसकी गगनचुम्बी पर्वतमाला, उसके कल-कल निनाद करते प्रपात, जलस्रोत, नदियाँ आदि मनन और चिन्तन की स्वतः प्रेरणा देते हैं। इसी कारण भारतीय संस्कृति को विकासोन्मुख बनानेवाले चिन्तकों तथा आचार्यों ने हिमालय की कन्दराओं में बैठकर साधना की अर्थात् हिमालय ज्ञान भूमि है। तपोभूमि के रूप में युग-युगों से हिमालय की पवित्र भूमि ने विभिन्न धर्मावलंबियों तथा तपस्वियों को अपनी ओर आकर्षित किया है। महाभारत जैसे पौराणिक ग्रंथ हिमालय के इस तपोमय स्वरूप को स्पष्ट करने में सक्षम रहे है।(जिसे पौराणिक परिप्रेक्ष्म में हिमालय उपशीर्षक के अन्तर्गत रखा है)

हिमालय में महर्षि गर्ग, कपिल, कश्यप, माण्डव, अगस्त्य, वशिष्ठ, गौतम, परशुराम, पराशर, व्यास, शुकदेव ने तपस्या की है। वशिष्ठ के नाम पर वशिष्ठ गुफा, व्यास के नाम पर व्यास गुफा,परशुराम के नाम पर परशुराम मंदिर, कण्व के नाम पर कण्वाश्रम भी यहीं है। हिमाचल प्रदेश में महर्षि माण्डव के नाम पर बसा मंडी नगर भी अवस्थित है। भगवान विष्णु, अनन्त, श्री कृष्ण जैसे देवताओं की तपोभूमि रहा हिमालय। आज के भौतिकवादी युग में भी प्रतिवर्ष कठिन शीत लम्बे पथ की परवाह किए बिना लाखों यात्री हिमालय के पुनीत स्थानों की वन्दना करने आते हैं। शंकराचार्य, रामानुजार्य, मध्वाचार्य जैसे दार्शनिक संत हिमालय के दर्शन से धन्य हुए। स्वामी विवेकानन्द, दयानन्द, रामतीर्थ आदि महापुरुषों ने हिमालय के आध्यात्मिक वातावरण में लीन होकर विश्व को अमर संदेश दिए। हिमालय को स्वर्गद्वार और हिमालय से निसृत होकर आनेवाली गंगा को मोक्षदायिनी माना जाता है।

पौराणिक परिप्रेक्ष्य में हिमालय

प्राचीन काल से ही भारत के श्रेष्ठ साहित्यिक ग्रंथों में हिमालय का काफ़ी वर्णन मिलता है। जैसे वेद, उपनिषद्, पुराण, रामायण, महाभारत, भगवत् गीता आदि प्राचीन व

श्रेष्ठ पुस्तकों में। हिमालय भारत का मर्यादा पर्वत है इसलिए भारतीय काव्य, पुराण, आख्यान, जीवन-व्यवहार हिमालय की महिमा से ओतप्रोत हैं।

वेदों में हिमालयः

हिमालय की प्राचीनता का सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि विश्व की सबसे प्राचीन पुस्तक ऋग्वेद में हिमालय का वर्णन मिलता है ऋग्वेद में बताया गया है कि-

"यस्येमे हिमवन्तो महित्वा यस्य समुद्रं रसया सहाहु :।"[1]

अर्थात् हिमालय से जो नदियाँ बहती है; वे रस्ती के समान लम्बे, छोटे जल के स्रोत है, जो समुद्र में मिल जाते हैं।

अथर्ववेद में कहा गया है-

"गिरयस्ते पर्वता हिमवन्तोरण्यं ते पृथिवि स्योनमस्तु।"[2]

अर्थात हे पृथिवि। तेरे ये पर्वत, हिमवृत अचल तेरे अरण्य हमारेलिए सुखकर हों।

उपनिषद् में हिमालयः

'केनोपनिषद्' में पार्वती को *'उमा हेमवतीम्'* कहा गया है और उसकी एक गाथा दी गयी है। पार्वती हिमालय से उतरकर देवताओं को उपनिषद् ज्ञान का वरदान देने आई थी, जिससे उपनिषदों का जन्म हुआ। वह पर्वतों के देवता भगवान शंकर की जीवनसंगिनी व पवित्र गंगा की छोटी बहन थी। इसमें निर्धारित कथा से स्पष्ट हो जाता है कि उपनिषदों के ज्ञान का जन्म हिमालय की कन्दराओं में रहनेवाले ऋषि-मुनियों के द्वारा हुआ था।[3]

---

1. ऋग्वेद - 10 121-4
2. अथर्ववेद 12-1-11/पृ.सं 717
3. केनोपनिषद् - भाग - 5 पृ.सं - 259

पुराणों में हिमालयः

शिव महा पुराणम् में हिमवान को पर्वतों का अधिपति, समृद्धि-भाजन, तेजयुक्त एवं महान बनाया है यहाँ हिमालय के स्थावर एवं जंगम रूप चित्रित है। अनेक उग्र आश्चर्यों से युक्त यह तुषारनिधि, सिद्धमुनियों का आश्रम एवं शिव का प्रिय स्थान रहा है। इसे तपस्या का सिद्धिप्रदायक भी कहा गया है।

शिवमहापुराणम् में हिमालय के सम्बन्ध में बताया गया है कि–

"अस्त्युत्तरस्यां दिशि वै गिरीशो हिमवान्महान्।
पर्वतो हि मुनिश्रेष्ठ महातेजा : समृद्धि भाक् ||14||"[1]

विष्णु पुराण में हिमालय को स्थावरों का राजा माना गया है। यज्ञ में भाग लेने केलिए पर्वतों के अधिपति हिमालय की सृष्टि की गई है।

"यज्ञांगार्थ मया स्रष्टो हिमवानचलेश्वर:" ।[2]

कूर्म पुराण में हिमालय वर्णन इस प्रकार हुआ है। दस हज़ार योजन तक फैले, विभिन्न प्रकार की धातुओं से सुसज्जित सिद्धों और चारणों द्वारा व्याप्त देवर्षियों द्वारा सेवित हिमवान नाम का एक पर्वत है। उस पर्वत में सुषुम्ना नामक एक अत्यन्त रमणीय सरोवर है–

"पर्वतो हिमवान्नाम नानाधातुविभूषित :
योजनानां सहस्रणि सशितिस्तवायतो गिरि :।"[3]

हिमवान पर्वत तथा गंगा सर्वत्र पवित्र है-

"सर्वत्र हिमवान् पुण्यो गंगा पुण्या समंतत :।"[4]

1. शिवमहापुराण - भाग 1 पार्वती खण्ड 3 (14-20) - पृ.सं - 244
2. विष्णु पुराण आचार्य श्याम सुन्दर सुमन पृ.सं - 107
3. कूर्मपुराण - अनुवाद आचार्य तरिणीश झा - सप्तोतशोध्याय ||43-46|| - पृ.सं - 828
4. वही - आचार्य तरिणीश झा-सप्तोतशोध्याय ||49|| पृ.सं - 828

मत्स्यपुराण में हिमालय को देवदारु वन, नदियाँ, रत्न-सम्पत्ति आदि से संपन्न बताया गया है। ऐसे महान पर्वत का दर्शन कोई महान व्यक्ति ही कर पाएगा। मद्रराज के सन्दर्भ में हिमवान की श्रेष्ठता स्पष्ट हो जाती है।[1]

भगवद् गीता में योगीराज श्रीकृष्ण ने कहा है कि *"स्थावराणां हिमालय :"* - मैं स्थावरों में हिमालय हूँ।[2] इस प्रकार हिमालय देवता स्वरूपी बन जाती है। हिमालय की स्थिरता पुराण प्रसिद्ध है।

रामायण और महाभारत के संदर्भ में हिमालय

भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति के अक्षय भण्डार रामायण एवं महाभारत में स्थान-स्थान पर हिमालय की चर्चा कई रूपों में देखी जा सकती है। *'रामायण'* के बालकाण्ड में हिमालय की दो कन्याएं - पार्वती और गंगा की ओर संकेत किया गया है। गंगा नदी भारतीय लोगों के जीवन से इतनी जुड़ी हुई है कि उसे किसी भी मूल्य में जीवन से अलग नहीं किया जा सकता। ये मूल्यवान उपहार भारतवर्ष एवं उसकी जनता केलिए हिमवान की देन हैं। सच्चे अर्थों में हिमालय समस्त भारतीय चेतना का महान मन्दिर है।[3]

'रामायण' में युद्ध के संदर्भ में हिमालय का उल्लेख अवश्य हुआ है। युद्ध में जब लक्ष्मण मूर्छित हो जाते हैं तो उसकी मूर्छा को दूर करने केलिए वैद्य सुषेन संजीवनी बूटी लाने केलिए हनुमान को हिमालय पर भेजता है इससे हिमालय के औषधिस्थ रहने का प्रमाण मिल जाता है।[4] उस समय से ही हिमालय कवियों की दृष्टि का केंद्र रहा है। इतिहास के पूर्ण

1. मत्स्यपुराण अध्याय - 116 हिमवत् वर्णन - पृ.सं 117
2. भगवद् गीता - अध्याय - 10 - विभूति योग ||24|| पृ.सं 553
3. श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण - बालकाण्डम् सर्ग 35 पृ.सं 98
4. श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण युद्धकाण्डम सर्ग 50 - पृ.सं - 1097

प्रामाणिक ग्रन्थ *'रामायण'* से विधित होता है कि भारतीय संस्कृति में जो श्रेष्ठ, महान एवं गौरवास्पद है वह हिमालय की ही देन है। भगवान राम की दृढ़ता की तुलना हिमालय के साथ करते हुए कवि वाल्मीकी ने दिखाया है कि उस समय भी हिमालय भारतीय श्रद्धा के केन्द्र रहा था। इस प्रकार *'रामायण'* के बालकाण्ड एवं युद्धकाण्ड में हिमालय का महत्व स्वतः स्पष्ट हो जाता है।

पश्चिम से पूर्व तक फैले हुए हिमालय की चर्चा *'महाभारत'* में कई बार आयी है। *'महाभारत'* के आदि पर्व, वन पर्व, उद्योग पर्व, भीष्म पर्व, शान्ति पर्व, सभा पर्व और महाप्रस्थानिक पर्व में हिमालय का चित्रण हुआ है। हिमवान को महाभारतकार ने पूर्व से पश्चिम की ओर खड़े होनेवाले पर्वतों में एक माना है।[1] हिमालय धन एवं वैभव से मंडित था। इस पर्वतराज ने राजा पृथु को अक्षय धन प्रदान किया था।[2] महाभारत में शेषनाग[3], भगीरथ[4], व्यास ऋषि[5] आदि के हिमालय पर तपस्या करने का उल्लेख मिलता है। उद्योग पर्व में शिव और पार्वती को हिमालय के ऊपरी तट पर निवास करते चित्रित किया है।[6] हिमालय का आध्यात्मिक स्वरूप इस बात से स्पष्ट होता है कि ब्रह्मा[7] ने तथा दक्षप्रजापति[8] ने हिमालय की तराईयों में यज्ञ संपन्न किया था। हिमालय का इतना उदार स्वरूप है कि वह अपनी शरण में आनेवालों को आश्रय देता है। जैसे क्षत्रियों द्वारा भृगुवंश के संहार के

1. महाभारत भीष्मपर्व - 6 अध्याय - 3 पद्य - पृ.स - 303
2. महाभारत शान्ति पर्व - 59 अध्याय - 118 पद्य -पृ.सं 383
3. महाभारत - आदि पर्व 36 अध्याय - 3 पद्य -पृ.सं 51
4. महाभारत - वन पर्व 108 अध्याय - 3 पद्य -पृ.सं - 540
5. महाभारत आदि पर्व 114 अध्याय 24 पद्य पृ.सं 152
6. महाभारत उद्योग पर्व 115 अध्याय 5 पद्य
7. महाभारत शान्ति पर्व 166 अध्याय - 33 पद्य पृ.सं 498
8. महाभारत - शान्ति पर्व 284 अध्याय - 3 पद्य - पृ.सं - 630

अवसर पर भार्गव स्त्रियों को हिमालय ने ही शरण दी थी।[1] नारद ने ब्रह्म सभा को देखने के आग्रह की पूर्ति केलिए हिमालय के शिखर पर सौ वर्षों तक व्रत का अनुष्ठान किया।[2] नारद का आश्रम हिमालय पर है।[3] पराशर मुनि ने असुर दमन केलिए यज्ञ की आग हिमालय पर्वत पर ही निक्षिप्त की थी।[4] इस प्रकार महाभारत के प्रसंगों से यह साबित होता है कि देवताओं की भूमि, धनाढ्य श्रेष्ठ तपस्थली, यज्ञ स्थली, वैभव युक्त हिमालय महाभारत के समय से ही भारतीय जन जीवन से इतना जुड़ा था कि इसे भारतीय संस्कृति से अलग करना असंभव था।

भृगु ऋषि ने हिमवान को शाप दिया था इसका उल्लेख शांति पर्व में है। शिव के मन में हिमवान की पुत्री पार्वती को पत्नी बनाने का आग्रह हुआ। इसी बीच भृगु ऋषि वहाँ पहूँच गए और हिमवान से उमा का हाथ माँगा। हिमवान ने बताया कि उमा और शिव का विवाह तय हुआ है। तब भृगु ऋषि ने हिमवान को शाप दिया कि तुम *'रत्नविहीन'* बन जाओ।[5]

'महाभारत' के कुछ प्रमुख पात्रों का सम्बन्ध किसी न किसी तरह हिमालय से जुड़ा हुआ है। पाण्डवों के पिता महाराज पाण्डु का सम्पूर्ण जीवन हिमालय पर बीता और हिमालय एवं कालकूट पर्वत को लांघकर राजा पाण्डु गन्धमादन पर्वत की ओर गए थे।[6] पाण्डवों के वनवास के संदर्भ में हिमालय का उल्लेख बार-बार आया है। पांडव वनवास

1. महाभारत - आदि पर्व 177 अध्याय - 20 पद्य - पृ.सं - 226
2. महाभारत - सभा पर्व 11 अध्याय - 31 पद्य - पृ.सं - 302
3. महाभारत - शान्ति पर्व 346 अध्याय - 3 पद्य - पृ.सं - 721
4. महाभारत - आदि पर्व 180 अध्याय - 22 पद्य - पृ.सं - 228
5. महाभारत शान्ति पर्व 342 अध्याय - 62 पद्य - पृ.सं - 716
6. महाभारत - आदि पर्व 118 अध्याय - 48 पद्य - पृ.सं - 156

के सत्रहवाँ दिन हिमालय के ऊपर पहूँच गए। वहाँ स्थित वृषपर्व के पुण्याश्रम का दर्शन भी उन्होंने किया था।[1] कुलिन्द राजा सुबाहु का राज्य हिमालय पर है पाण्डव एक रात उनके मित्र बनकर वहाँ ठहरे थे और दूसरे दिन हिमालय की ओर प्रस्थान किया था।[2] भीमसेन ने हिमालय की ओर जाकर इस प्रकार खड़ा होने का संकेत किया मानो वह भू लोक का चक्रवर्ती हो।[3] मेरुसार्वणी द्वारा युधिष्ठिर को ज्ञानोपदेश हिमालय पर हुआ था।[4]

हिमालय को प्राचीन काल से ही स्वर्ग की सीढ़ी बताया गया है। हिमालय में जाकर तपस्या करने से सभी को मोक्ष प्राप्त हो जाता है। धृतराष्ट्र एवं गान्धारी का दावाग्नि में मरने के बाद संजय हिमालय की ओर प्रस्थान करते हैं। महाभारत युद्ध के पश्चात् पाण्डवों का हिमालय के मार्ग से स्वर्ग की ओर प्रस्थान करने का उल्लेख मिलता है।[5] पाण्डवों के महाप्रस्थान के समय युधिष्ठिर का हिमशिखरों से होकर स्वर्ग में प्रवेश करने का उल्लेख मिलता है। हिमालय इतना पवित्र और श्रेष्ठ है कि धर्म, सत्य एवं सदाचार से युक्त धर्मराज को ही स्वर्ग प्राप्त हुआ था। अपने पुनीत स्वरूप के कारण स्वर्ग की उपाधि से युक्त हिमालय महाभारत में हमारी संस्कृति के आध्यात्मिक एवं धार्मिक पक्ष लेता है।

हिमालय का नैतिक संदर्भ

भारतीय संस्कृति में मानव या व्यक्ति उन्नति केलिए व्यावहारिक नियम बनाए हैं। ऐसे सद् व्यवहार से ही समाज की उन्नति संभव है। नैतिक आयाम में (भारतीय संस्कृति) अतिथिसत्कार, तपशीलता, मौन का महत्व, राष्ट्ररक्षार्थ आत्मबलिदान, जनमंगल तथा

1. महाभारत वन पर्व 158 अध्याय 18 पद्य - पृ.सं - 596
2. महाभारत - वन पर्व 140 अध्याय - 24 पद्य पृ.सं - 575
3. महाभारत - सभा पर्व 30 अध्याय - 4 पद्य पृ.सं - 325
4. महाभारत - सभा पर्व 78 अध्याय - 14 पद्य - पृ.सं - 401
5. महाभारत - महाप्रस्थान पर्व 22 अध्याय - 1 पद्य

करुणा एवं त्याग को महत्व दिया है। हिमालय जड़ पर्वत है लेकिन पुराणों में हिमालय को जड़ नहीं चेतन प्राणी माना जाता था।

हिमालय का सद् व्यवहार पुराण विदित है। हिमालय स्वयं इन आदर्शों का पालन करते हुए भारतीयों के सम्मुख खड़ा है। शिवपुराण में शिव और पार्वती के विवाह के प्रसंग में हिमालय का यह चेतन स्वरूप स्पष्ट होता है। हिमवान की पुत्री पार्वती ने शिव को पति के रूप में प्राप्त करने केलिए घोर तपस्या की। शिव की स्वीकृति मिलने पर विवाह का प्रबन्ध किया गया। निश्चित समय पर शिव बारात लेकर हिमालय के गृह पर आए। इसके पश्चात् उन्होंने पार्वती का विवाह शिव के साथ किया।

भारतीय संस्कृति में अतिथिसत्कार को विशेष महत्व दिया गया है। हिमालय के अतिथिसत्कार करने का चित्रण करते हुए गोस्वामी तुलसीदासजी रामचरित मानस में हिमालय की श्रेष्ठता को स्पष्ट करते हैं– *"पर्वतराज हिमालय तुरन्त घर आए तथा पार्वती के विवाह में आए हुए सब पर्वतों और सरोवरों को आदर से दान विनय से मानपूर्वक विदा किया।"*[1] पार्वती विवाह प्रसंग में हिमालय द्वारा शिव को रत्नादि हर प्रकार का धन, द्रव्य, दहेज में दिया जाने का चित्रण है। प्राचीन काल से आज तक अनेक अच्छी बुरी प्रथाएं एवं रीति रिवाज़ भारतीय संस्कृति का अंग रहा है। इनमें एक है दहेज प्रथा जो धन या उपहार लड़की के माता-पिता विवाह के उपलक्ष में अपनी इच्छा से वर पक्ष को देते हैं। हिमवान धातु एवं रत्नों से संपन्न है और धनपति कुबेर का वासस्थान हिमालय में ही है। हिमालय ने दहेज में अनेक प्रकार के द्रव्य, रत्नपात्र, एक लाख सुसज्जित गौएं, एक लाख सजे सजाए घोड़े, करोड़ हाथी और उतने ही स्वर्णजटित रथ आदि वस्तुएं दी। इस प्रकार परमात्मा शिव को अपनी पुत्री पार्वती का कन्या दान करके हिमालय कृतार्थ हो गए थे।

1. रामचरितमानस - गोस्वामी तुलसीदास

हिमालय का राष्ट्रीय संदर्भ

अनादि काल से ही मनुष्य के भाव-जगत में माता और मातृ-भूमि का सर्वोच्च स्थान रहा है इसलिए भारतीय संस्कृति में जननी और जन्म-भूमि को स्वर्ग से भी उत्कृष्ट माना गया है तथा देश की सुरक्षा के प्रति एवं उसके प्राकृतिक पदार्थों के प्रति श्रद्धा भाव की अभिव्यक्ति भी हुई है। भारत के उत्तर के सीमा निर्धारण में अनन्य भूमिका निभानेवाले हिमालय पर्वत का राष्ट्रीय महत्व अनन्य रहा है। भारत की राष्ट्रीय एकता और अखण्डता को कायम करने में हिमालय ने अनन्य भूमिका निभाई है। सन् 1962 ई तथा सन् 1965 ई में हिमालय पर हुए आक्रमणों ने भारत की उत्तरी सीमाओं की युद्ध भूमि की ओर जनता का ध्यान आकृष्ट कराया। चीनी एवं पाकिस्तानी आक्रमणों ने एक बार फिर भारतीय जनमानस को झकझोर दिया।

चीन एवं पाकिस्तान के युद्ध के संदर्भ में हिमालय:तिब्बत उत्तर भारत के निकटतम पड़ोसी देश है। चीन जाने का मार्ग तिब्बत से होकर जाता था अतः इस देश के साथ भी भारत का अत्यन्त प्राचीन सम्बन्ध मिलता है। आरम्भ में तिब्बत भारत का ही तरह एक शांतिप्रिय देश रहा है। सन् 1950 ई में चीन ने उसे हड़पने का प्रयत्न किया अतः चीन तथा भारत के मध्य के सम्बन्धों में तनाव उत्पन्न हुआ। 1958 में तिब्बत में चीन के विरोध में आन्दोलन प्रारम्भ हुआ। जिसका चीन ने निर्दयतापूर्वक दमन किया, फलतः तिब्बत के लामा प्राण रक्षार्थ बचकर भारत में आ गए। इसे चीन ने भारत की शत्रुतापूर्ण कार्यवाही निरूपित किया। सन् 1958 ई में चीन ने एक नक्शा प्रकाशित किया जिसमें भारत का कुछ भाग चीन में दिखाया। चीन की यह विस्तारवादी नीति सन् 1963 ई में भारत-चीन युद्ध का एक प्रमुख कारण बन गया। सन् 1962 ई को चीन ने मैकमोहन रेखा पार कर भारतीय क्षेत्र पर आक्रमण कर दिया। हिमालय के नेफा तथा लद्दाख में चीनी सेनाओं

के साथ भयानक युद्ध हुआ। इस युद्ध में भारत की पराजय हुई बाद में एक समझौते से युद्ध समाप्त हो गया। भारत-पाकिस्तान युद्धों के समय चीन ने खुलकर पाकिस्तान का समर्थन किया तथा उसे सैनिक सहायता दी थी। हज़ार पाकिस्तानी सशस्त्र घुसपैठिए युद्ध-विराम-रेखा के पार तोड़-फोड़ कर प्रशासन को पंगु बनाने केलिए भेजे गए। सोवियत रूस ने सीमा विवाद के निपटारे केलिए सन् 1966 ई में ताशकंद में भारत और पाक के बीच सीधी वार्ता आयोजित की। इस प्रकार भारत की सीमाओं पर होनेवाले आक्रमणों ने हिमालय के राष्ट्रीय महत्व को प्रधानता दी।

कवि एवं साहित्यकारों ने हिमालय संबन्धी राष्ट्रीय कविताओं में युगीन परिस्थितियों से जनता को अवगत कराया। साथ ही उनकी हिमालय संबन्धी राष्ट्रीय कविताओं में मातृभूमि की स्तुति, अतीत का गौरव गान, सैनिकों एवं देशवासियों को बलिदान देने की प्रेरणा, उद्बोधन की शैली, देश की प्रकृति पर प्रेम, राष्ट्र की संस्कृति पर गौरव, राष्ट्र सुरक्षा केलिए उद्बोधन, क्रांति आदि प्रवृतियाँ देखी जा सकती हैं।

हिमालय के पर्यायवाची शब्द तथा उनका सांस्कृतिक महत्व

हिम से आच्छादित रहने के कारण हिमालय का नाम हिमाचल, हिमवंत, हिमाद्रि, हिमवान, हिमप्रस्थ, हिमशैल आदि रहे हैं। हिमालय हिम या बर्फ़ का स्थान है।[1] हिमालय में यह बर्फ मुख्यत : तीन रूपों में मिलता हैं। पिघला हुआ हिम (हिम नदियाँ, झील, सरोवर) भाप के रूप में - (कोहरा), बरफ़ के रूप में साधारणः बरफ़ के फाहे नरम और हल्के होते हैं किन्तु अधिक बर्फ गिरने से बरफ़ का एक बड़ा ढ़ेर इकट्ठा होता रहता है और बरफ़ की ऊपरी परत का भार निचली परत पर पड़ता रहता है तब वह कठोर बरफ़ में बदल जाता है। बर्फ के इस रूप ने ही हिमालय का नाम सार्थक बनाया है। मत्स्य पुराण में *'हिमच्छत्रमहाश्रृंग'*

1. बृहत हिन्दी पर्यायवाची शब्द कोश - गोविन्द चातक - पृ.सं - 319

कहा है[1] अर्थात् हिमालय का महा श्रृंग हिम से आच्छादित हैं। भारत की उत्तरी दिशा में प्रहरी समान खड़े हिमालय की ऊँची-ऊँची चोटियाँ और वादियाँ वर्ष भर बर्फ से ढकी रहती है। इसलिए शत्रु लोग जो भारत पर आक्रमण करना चाहते हैं अपने उद्यम में असफल हो जाते हैं। हिमालय का हिम उनकेलिए अड़चन पैदा करता है। अपने रूप एवं भाव से, आकार की महानता से, हिमालय उत्तरी दिशा में रहकर भारत वर्ष की रक्षा हमेशा करता आया है। हिमालय को गिरिराज, नगराज, नगपति, नगेंद्र, गिरीश, पर्वतराज, शैलेंद्र आदि पर्यायों से भी जाना जाता है।[2] इन सारी संज्ञाओं में हिमालय के महान आकार की सूचना मिलती है और राज एवं ईश शब्द में पर्वतों में श्रेष्ठ रहने की और संकेत मिलता है। अपने पर्वतीय रूप में हिमालय भारतीय संस्कृति एवं जनजीवन से प्राचीनकाल से ही इतना जुड़ा हुआ है कि उसके सांस्कृतिक महत्व के कारण उपर्युक्त पर्यायवाची शब्द हिमालय केलिए प्रयुक्त किए जाते हैं। इसके अतिरिक्त *'हिन्दी विश्व कोश'* में हिमालय के लिए प्रयुक्त पर्यायवाची शब्द है-मेनाधव, उमागुरु, उदगद्रि, अद्रिराज, मेनकाप्राणेश, भवानीगुरु आदि।[3] बृहत पर्यायवाची कोश में हिमालय के पर्यायवाची शब्द दिए गए हैं-अद्रिपति, गिरींद्र, पर्वतेश्वर प्रालेयाद्रि, हिमखंड, हिमेश आदि।[4]

हिमालय केलिए प्रयुक्त ये पर्यायवाची शब्द एक ओर हिम की अधिकता के सूचक हैं तो दूसरी ओर पर्वतों में उसकी श्रेष्ठता का द्योतक हैं।

भारतीय साहित्य में हिमालय

हिमालय अपने वैविध्यपूर्ण सांस्कृतिक आयामों के कारण सदैव ही साहित्यकारों केलिए प्रेरणा स्रोत रहा है। भारतीय साहित्य में हिमालय के स्थान को निर्धारित करने केलिए सबसे पहले कालिदास के काव्यों में हिमालय, साहित्यिक विधाओं में हिमालय तथा आधुनिक हिन्दी काव्यों में हिमालय के स्थान को अंकित किया गया है।

1. मत्स्यपुराण अध्याय 116
2. बृहत हिन्दी पर्यायवाची शब्द कोश - गोविन्द चातक - पृ.सं 319
3. हिन्दी विश्व कोश - नगेन्द्रनाथ वसु - पृ.सं - 86
4. बृहत पर्यायवाची कोश - डॉ॰ भोलानाथ तिवारी पृ.सं - 165

कालिदास का हिमालय

हिमालय भारतीय संस्कृति का मूर्धन्य प्रतीक रहा है। कालिदास ने अपने काव्यों में पर्वतराज हिमालय को विशेष स्थान दिया है। भारतीय कवियों में अग्रणी कविकुलगुरु कालिदास ने रघुवंश, मेघदूत और कुमारसंभव इन तीन काव्यों में तथा अभिज्ञानशाकुन्तल, विक्रमोर्वशीयम् में इसी पर्वतराज हिमालय को आधार भूमि बनाया है। हिमालय की महिमा अपार है और कालिदास इसके प्रशंसक रहे हैं।

कुमारसंभव का समूचा काव्य विन्यास इसी गिरिराज के शिखरों पर, उपत्यकाओं में हुआ है, मेघदूत का उत्तर भाग कनखल की पर्वतीय ढलान से चढ़कर कैलास और मानसरोवर तक जा पहुँचता है, रघुवंश के पहले, दूसरे और चौथे सर्गों की भावभूमि भी हिमालय की छाया में ही रही है। अभिज्ञानशाकुन्तल का सातवाँ अंक और विक्रमोर्वशीय के चौथे अंक की घटनाएं इसी नगाधिराज हिमालय की उच्च भूमि पर घटित होती हैं।

'कुमारसंभव' में हिमालय

'कुमारसंभव' की पृष्ठभूमि हिमालय ही है, जो महाकवि के हिमालय संबन्धी व्यापक ज्ञान का सुन्दर परिचय देता है। प्रथम सर्ग का आरंभ हिमालय के वर्णन से शुरू होता है। पार्वती पर्वतों के राजा हिमालय और मेना की पुत्री है। पार्वती के बड़ी होने पर एक दिन नारदजी हिमालय के घर आते हैं। वे पार्वती को देखकर कहते हैं कि तुम एक दिन शिवजी की पत्नी होंगी। उसके कुछ दिन बाद शिव हिमालय पर आकर तपस्या करते हैं। इस प्रकार स्वयं महादेव की तपस्थली बन गया है हिमालय। पार्वती शिव की सेवा करती है। तारकासुर से पीड़ित देवतागण ब्रह्मा के पास पहुँचते हैं। वे पार्वती के द्वारा शिव के मन को आकर्षित कराने की सलाह देते हैं। कामदेव को सहायता केलिए बुलाते हैं। लेकिन इस उद्यम कामदेव को शिव के कोप से भस्म होना पड़ता है। पार्वती हिमालय की आज्ञा पाकर तप करने केलिए

जाती है छद्मवेश में आकर भगवान शंकर उसकी परीक्षा लेते हैं और उसके दृढ़ एवं अटल व्यवहार से संतुष्ट होते हैं। शिवजी सप्तर्षियों को बुलाकर हिमवान की राजधानी औषधिप्रस्थ भिजवाते हैं और हिमालय शिव-पार्वती विवाह को संपन्न करा देते हैं।

'कुमारसंभव' में महाकवि ने हिमालय की स्थिति एवं विस्तार पर सर्वप्रथम काव्यात्मक प्रकाश डाला है। भारत के उत्तर में पूर्व सागर (बंगाल की खाड़ी) और पश्चिम अरब सागर के मध्य में पृथ्वी के मानदण्ड जैसा देवतात्मा हिमालय स्थित है।[1] कालिदास ने अपने महाकाव्य कुमारसंभव में हिमालय का वर्णन किया है वहाँ उसे देवताओं की आत्मा एवं विधि द्वारा पूर्व से पश्चिम तक पृथ्वी को नापने का मानदण्ड कहा है।

"अस्त्युत्तरस्याँ दिशि देवतात्मा हिमालयो नाम नगाधिराजः।
पूर्वापरौतोयनिधि वगाहय स्थितः पृथिव्य इव मानदण्डः।।"[2]

इस प्रकार कालिदास ने हिमालय को पृथ्वी का मानदण्ड समान स्थित कहा है। पूर्व और पश्चिम समुद्र - महोदधि और रत्नाकर का दोनों किनारों का अवगाहन करके विराजमान है हिमालय। हिमालय भारत वर्ष की उत्तर सीमा पर छाया हुआ है। एक ओर वह अरब सागर या रत्नाकर के उत्तरी तट को स्पर्श करता है और दूसरी ओर आसाम, मणिपुर और त्रिपुरा को अपनी छत्रछाया में समेटता हुआ पूर्व को दो टुकड़ों में बाँट देता है। हिमालय के इस विराट मानदंड ने मनुष्य के शील, आचार-विचार का भी स्पष्ट भेद कर डाला है। हिमालय रूपी मानदण्ड को आधार मान लिया जाए, तो भारत एक त्रिकोण महादेश बनता

1. Swamy Akhandananda Praises The Himalayas, 'The measuring rod of the Earth', appeared before me in all their snow white Grandeur.

   In the Lap of Himalayas - Swamy Akhandananda - P-7

2. कुमारसंभव - प्रथम सर्ग - कालिदास - पृ.सं - 1

है, जिसका शीर्ष बिन्दु कुमारिका अन्तरीप है। इस त्रिकोण भू-खण्ड को कुमारिका खण्ड कहते हैं। जब हिमालय पर्वत की कन्या पार्वती शिव को वर रूप में प्राप्त करने केलिए कैलास पर तपस्या कर रही थीं, उस समय सुदूर दक्षिण से अगस्त्य मुनि उसके पास पहूँचे और प्रार्थना की कि देवी! आपके पवित्र पद संचार से हिमालय की यह देवभूमि पवित्र हो गई है परन्तु मैदान और विन्ध्यश्रृंखला के दक्षिण के प्रदेश इन चरणों के स्पर्श से वंचित रह गए हैं। तपोनिरत पार्वती ने अगस्त्य की प्रार्थना स्वीकार की और नीचे की भूमि में उतर आयी और सारी भूमि पवित्र हो गई। इस कथा से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि हिमालय की ही देन है कि यह देश संसार के अन्य देशों की तुलना में शील और आचार के मामले में विशिष्ट हो गया है। इस प्रकार हिमालय ने भारत को संसार के अन्य देशों की तुलना में अपनी एक खास एवं उच्च संस्कृति प्रदान की है।

'*कुमारसंभव*' का प्रथम सर्ग हिमालय की महिमा से मंडित है। कालिदास ने हिमालय की वनस्पतियों का चित्रण करते हुए वहाँ के सभी महौषधियाँ, जड़ी-बूटियाँ, बाँस, देवदारु, भुर्जपत्र आदि वृक्ष तथा हाथी, सिंह, चमरी हरिणियाँ, नील गाय, मयूर आदि जीवजन्तुओं को पाए जाने का संकेत किया है। किरात, किन्नर, विद्याधर वनचर, सिद्ध आदि जातियाँ हिमालय के क्षेत्र में निवास करती हैं। हिमालय में अनेक गुहाएँ है जो सूर्य की किरणों से वांछित होने के कारण अन्धकारमय होते हैं। हिमालय चमकीले रत्न एवं जड़ी-बूटियों से संपन्न है। औषधियों के प्रकाश से गहन गुहाओं का प्रकाशित हो उठना, लम्बी गुफाओं में रात में अन्धकार छाया रहना, कस्तूरी से बसी हिमालय की भूमि, हिमानी पवन की सरसराहट, हेमन्त में हिम वर्षा, वनस्पति में पतझड़ आदि का चित्रात्मक वर्णन किया है। भारत भूमि के उत्तर दिशा की सुरक्षा करनेवाला महिमामय हिमालय असंख्य उत्तम वस्तुओं का खान है। इस महाकाव्य में हिमालय को देवपुरुष, राजा एवं गृहस्थ इन तीनों दृष्टियों से देखा गया है।

पार्वती का जनक, पितृओं की मानस पुत्रि मेना के पति, शिव एवं पार्वती की तपस्थली, मदन-दहन का साक्षी, शिव-पार्वती की क्रीड़ा-स्थली आदि रूपों में हिमालय का वर्णन हुआ है।[1] भारत में इतना पवित्र पर्वत दूसरा है ही नहीं।

संसार में अन्याय, अत्याचार एवं अशान्ति फैल जाती है तो उसको दूर करने केलिए कोई दैवी शक्ति का जन्म होता है। तारकासुर का वध करने केलिए सुब्रह्मण्य का जन्म हुआ था। हिमालय के समान ही उसके पौत्र सुब्रह्मण्य का जन्म भी लोकमंगल केलिए हुआ है। पार्वती अपने पिता हिमालय की आज्ञा पाकर जिस पर्वत पर जाकर तपस्या करने लगी वह गौरी शिखर नाम से प्रसिद्ध हुआ। कालिदास ने हिमालय की इस भूमि को अन्य क्षत्रों से विलक्षण बताया है। भारतीय संस्कृति में धर्म का विशिष्ट स्थान है। हिमालय पर वास करनेवाले शिव एवं पार्वती देवता हैं; जो हिन्दुओं द्वारा पूजनीय हैं इनकी उपस्थिति एवं बन्धुत्व से स्वयं हिमवान भी देवतुल्य बन गया है।

मेघदूत में हिमालय

कालिदास का अत्यधिक लोकप्रिय काव्य मेघदूत में कर्तव्य से च्युत एवं स्वामी कुबेर द्वारा अभिशप्त यक्ष रामगिरि पर आश्रय लेता है। एक साल तक निर्वासित रहने के बाद उत्तर दिशा की ओर जाते हुए मेघ को देखकर उसे दूत बनाकर अपनी प्रिया के पास संदेश भिजवाता है जो अलकापुरी में रहती है। रेवा नदी, विदिशा, उज्जयिनी, गंगा को पार कर हिमालय पर्वत पर पहूँचने पर विश्राम करने की आज्ञा भी दी है। हिमालय में जितने रम्य

1. जवाहरलाल नेहरु ने 'दि डिस्कवरी आफ इन्डिया' नामक पुस्तक में कुमारसंभव की इस कथा को मिथक माना है - The adventure of Kama, the God of Love and his wife Rati with their friend Vasantha the God of spring, greatly daring Kama shoots his flowery arrow at Shiva himself and is reduced to ashes by the fire that flashed out of Shiva's third eye. This instance took place in Himalayas.

The Discovery of India - Jawaharlal Nehru - P - 108.

स्थल हैं उन्हें देखते हुए क्रौंच-रन्ध्र में से उत्तर की ओर जाना जिनमें से होकर हंस मानसरोवर की ओर जाते हैं-

"प्रालेयाद्रेरुपतटमतिक्रम्य तांस्तान्विशेषान् -

हंसद्वारं भृगुपतियशोवर्त्म यत्क्रौञ्चरन्ध्रम्।।"[1]

यक्ष मेघ से कहते हैं कि-है मेघ तुम धवल नगराज हिमालय पर विचरण करना, मानसरोवर के स्वर्ण कमलों की शोभा का आस्वाद लेते हुए उसमें उतरकर जल पीना। मेघदूत में कवि ने हिमालय के प्रमुख नगर अलकापुरी का मोहन प्राकृतिक दृश्य, समृद्धि, वृक्ष, लता, सरोवर, देवालय आदि का परिचय देकर यक्ष एवं यक्ष प्रिया के दुःख में हिमालय की प्रकृति को भी भागीदार बनाया है।

'रघुवंश' में हिमालय

'रघुवंश' में रघुकुल के कई सूर्यवंशी राजाओं का वृत्त है। सन्तान से वंछित दिलीप और उसकी पत्नी सुदक्षिणा, कामधेनु की पुत्री नन्दिनी गौ की सेवा करते हैं। बाईसवें दिन वसिष्ठ की होम सम्बन्धी धेनु सेवक राजा दिलीप की दृढ भक्ति को जानने की इच्छा रखती हुई गंगा के वारि प्रवाह के समीप हिमालय की गुफा में घुस जाती है।[2] वहाँ कुम्भोदर

1. मेघदूत में क्रौंच एवं क्रौंचरन्ध्र पर्वत का उल्लेख हुआ है। इस पर्वत पर क्रौंच नामक एक राक्षस रहता था जिनका वध कार्तिकेय ने किया। बाद में उस असुर के नाम पर यह पर्वत जानने लगा।

   क्रौंच - रन्ध्र - क्रौंच पर्वत का एक सुराख वर्षा के समय हंस की पाँती इसी से होकर मानसरोवर की ओर जाते हैं। पौराणिक मान्यता के आधार पर क्रौंच पर्वत को भेदने के बाद कार्तिकेय घमण्ड करने लगा तब उनके घमंड तोड़ने केलिए शिव के शिष्य परशुराम ने उस पर्वत को भेदने केलिए बाण भेजा इसके बाद इसका नाम क्रौंचरन्ध्र रखा गया।

   मेघदूत - पूर्व मेघ - 61 पद्य - कालिदास पृ.सं - 61

2. रघुवंशम् - दूसरा सर्ग - ।।26।। पद्य - कालिदास - पृ.सं - 28

नामक सिंह एवं दिलीप का गाय को लेकर जो विवाद होता है अन्त में इस परीक्षा में दिलीप विजयी निकलते हैं और रघु नामक पुत्र प्राप्त करते हैं। रघु बड़ा होकर दिग्विजय केलिए निकलते हैं, बहुत सारे राज्यों को पराजित करते हुए काम्बोज पहूँच जाते हैं। फिर हिमालय की पार्वत्य जातियों का दमन करते हुए वे उत्तर के हिमालय मार्ग से ही पूर्व की ओर बढ़ते हैं और लोहित्य या ब्रह्मपुत्र नदी को पार कर कामरूप तक पहूँच जाते हैं।[1] रघु अपने पुत्र को अज को सौंपता है और अज का पुत्र है दशरथ। बाद में रामायण की कथा है। रघुवंश में कालिदास ने लिखा है कि राजा रघु ने हिमालय के ऊपर हेमकूट (कैलाश) से लेकर कामरूप (आसाम) तक का क्षेत्र पर विजय की थी। रघु का राज्य हिमालय से भी आगे फैला हुआ था। कालिदास के साहित्य में हिमालय का सजीव चित्रण व विस्तृत वर्णन प्रामाणित करता है कि उस समय हिमालय जन-जीवन के बहुत निकट था। कालिदास ने राजा रघु एवं हिमालय की महिमा की तुलना कर दोनों को परस्पर आदर भाव व्यक्त करते हुए दिखाया है।[2] रघु ने पर्वतीय उत्सवसंकेत नामक म्लेच्छजाति को पराजित किया तो वे रत्नादि को लेकर रघु की शरण में उपस्थित हुए तब महाराज रघु और हिमालय ने परस्पर एक दूसरे के सार को जाना अर्थात् उपहार स्वरूप इन बहुमूल्य रत्नों को देखकर महाराज रघु ने हिमालय के धनरूपी सार को और हिमालय ने पर्वतीय उन वीरों को पराजित देखकर रघु के पराक्रम रूपी सार को जाना। हिमालय का इतिहास इस बात को स्पष्ट करता है कि उसका अतीत कितना संपन्न एवं वैभव से युक्त था।

इस प्रकार कुमारसंभव, मेघदूत एवं रघुवंश में कालिदास ने जिस भाव-गरिमा से हिमालय का उल्लेख किया है, वैसा उल्लेख किसी कवि ने किसी गिरि का नहीं किया होगा।

1. रघुवंशम् - चतुर्थ सर्ग ||71|| पद्य - कालिदास - पृ.सं - 52
2. रघुवंशम् - चतुर्थ सर्ग ||79|| पद्य - कालिदास - पृ.सं - 52

साहित्यिक विधाओं में हिमालय

काव्य के अतिरिक्त अंग्रेजी, मलयालम तथा हिन्दी भाषा में हिमालय सम्बन्धी पुस्तकों प्रकाशित हुए है। इनमें प्रमुख पुस्तकों का विवरण नीचे दिया गया है।

हिमालय के यात्रा विवरण से संबन्धित पुस्तकों में स्वामी अखण्डानन्दा (जो श्री रामकृष्णा के शिष्य थे) का *'इन दि लाप आफ हिमालयास'*[1] (In the Lap of Himalayas) नामक पुस्तक स्वामी जी के हिमालय तीर्थाटन के अनुभवों को लेकर चलता है। यह पुस्तक हिमालय के ऋषिकेश, तेहरी, जम्नोत्तरी, गंगोत्तरी, श्रीनगर, रुद्रप्रयाग, गुप्तकाशी, ऊखीमठ, गौरीकुण्ड, प्रयाग तथा केदारनाथ आदि तीर्थस्थानों का धार्मिक एवं आध्यात्मिक महत्व प्रतिपादित करने में सक्षम रहा है। पर्वतों के राजा हिमालय के सामने खड़े स्वामीजी अपने आप को अर्जुन तथा हिमालय के उस विशाल स्वरूप को साक्षात् भगवान कृष्ण मानते हैं। हिमालय को साक्षात् भगवान का प्रतीक या विश्व नियंता का प्रतीक माना गया है।[2]

(Himalayas - The King of Nepal) 'हिमालयास् - दि किंग ओफ नेपाल' नामक पुस्तक में हिमालय के भौगोलिक महत्व पर विचार किया गया है। आमुख में अरनोल्ड टोयनबी लिखते हैं कि - "वास्तव में हिमालय अपने शरण में आनेवाले सभी जीव-जन्तुओं को आश्रय देता है तथा वेद, पुराण, उपनिषद और महाभारत जैसे श्रेष्ठ ग्रंथ हिमालय की महिमा को साबित करनेवाले श्रेष्ठ ग्रंथ है।"[3]

1. 'In the Lap of Himalayas' - Preface - Swami Akhandananda.

   'The intrepid pilgrim that he was, he crossed the Himalayas, and visited Tibet thrice besides stopping at almost all the important Himalayas Pilgrim Centres. This book gives the Swami's experiences and reflections on the Himalayas and the great pilgrimage centres located on the holy mountain.

2. 'In the Lap of Himalayas' - Preface - Swami Akhandananda.

   'The show clad mountain spreading before me from east to west reminded me of the eternal Brahman.'

3. 'Himalayas - The King of Nepal' - Arnold Toynbee

(The Discovery of India) *'दि डिस्कवरी आफ इण्डिया'* नामक पुस्तक में जवाहरलाल नेहरु ने हिमालय को भारत के मिथक तथा पौराणिक कथाओं से जुड़े रहने के कारण हमारे विचार एवं साहित्य को प्रभावित करनेवाला माना है।[1] इस पुस्तक में हिमालय की प्रमुख नदियों, हरिद्वार में मनाया जानेवाला कुम्भ मेला, मिथक के रूप में हिमालय (मदन दहन) तथा भारतीय नक्शे में हिमालय के स्थान का निर्धारण हुआ है।

हिमालय के यात्रा विवरण से संबन्धित मलयालम पुस्तकों में स्वामी तपोवनम्‌जी का *"हिमगिरि- विहारम"* *(ഹിമഗിരി വിഹാരം)* जो हिमालय के प्रमुख तीर्थों का चित्रण करते हुए स्वामीजी अपने दार्शनिक एवं आध्यात्मिक विचार प्रस्तुत करता है। आमुख में स्वामीजी हिमालय के प्रति अपनी अगाद प्रेम को व्यक्त करते हुए लिखते हैं कि - भारत की आज की स्थिति शोचनीय है; ऐसी आपात्‌ स्थिति में भी हमारे साथ हिमालय पर्वत, गंगा नदी मंदिर तीर्थ एवं हमारी आर्ष संस्कृति है।

हिमालय तीर्थों के यात्रा विवरण तथा तीर्थों के महत्व का प्रतिपादन करनेवाला पुस्तक है दानानन्द स्वामिकल का *'हिमालय तीर्थङ्ङल।'* *(ഹിമാലയ തീർത്ഥങ്ങൾ)* हरिद्वार, ऋषिकेश, बदरी-केदार उत्तर काशी, अमरनाथ, गंगा नदी तथा उत्तर खण्ड के तीर्थों का विवरण देकर स्वामी जी ने हिमालय को भारत की सबसे प्रमुख तपोभूमि घोषित की है।

हिमालय के प्रशंसक विदेशी विद्वानों में श्री. ई. वी. हेवेल (E.V. Havail) का हिमालय इन इंडियन आर्ट (Himalay in Indian Art) निकोलास रोरिक का (Nicholas

1. 'The Discovery of India' - Sri Jawaharlal Nehru.

   'I wandered over the Himalayas, which are closely connected with old myth & Legand, and which have influenced so much our thought and literature. My love of mountains and my kinship with Kashmir especially drew me to them, and I saw there not only the life and vigour and beauty of the present, but the memorised loveliness of the ages past.

Rorik) हिमालय एबोड आफ लाईट (Himalay Abode of Light), सर फान्सीस यंग हसबैन्ड (Sir Francis Young Husband) का वण्डर्स आफ दी हिमालयास (Wonders of the Himalayas) आदि प्रमुख पुस्तकें हैं।

हिमालय संबन्धी फुटकल रचनाएं

काव्य के क्षेत्र में ही नहीं साहित्य की अन्य विधाओं में भी रचनाकारों ने हिमालय को विषय बनाया है। डॉ० हरिराम जसटा ने *'हिमाचल प्रदेश की झाँकी'* में हिमालय के भौगोलिक महत्व जैसे इसका विस्तार, वनसंपदा प्रमुख पर्वत एवं नदियों का उल्लेख किया है।

'हिमालयी संस्कृति के मूलाधार' नामक पुस्तक में प्रोफसर डी.डी. शर्मा ने हिमालय की पुरातन जनजातियों का ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक विवेचन किया है। इस पुस्तक में हिमालय को प्राचीन काल से ही अनेक जनजातियों की आवास भूमि माना गया है। इनमें यक्ष, गन्धर्वाप्सरस्, किन्नर, पिशाच, असुर, दानव, दास, दस्यु, कोल, किरात, नाग और कुलिन्द प्रमुख रहे हैं। ऋग्वेद, रामायण, महाभारत जैसे प्राचीन पुस्तकों से पौराणिक घटनाओं को उद्धत कराते हुए रचनाकार ने हिमालय को पौराणिक जनजातियों की आधार भूमि माना है। वरदा वसुन्धरा ने हिमालय से निसृत गंगा नदी का आध्यात्मिक, भौगोलिक एवं राष्ट्रीय महत्व का प्रतिपादन *'गंगा अतीत एवं वर्तमान'* नामक पुस्तक में किया है। गंगा से संबन्धित पर्व एवं व्रत, गंगाजल का औषधीय गुण तथा गंगा तट के तीर्थस्थान और उनका माहात्म्य का चित्रण करते हुए गंगा का स्वर्ग से पृथ्वी तल पर आने का संदर्भ भी दिया गया है। डॉ प्रेमस्वरुप सकलानी ने हिमालय का वैज्ञानिक दृष्टि से अध्ययन *'हिमालय की संपदा'* नामक पुस्तक में किया है। इसमें हिमालय की उत्पत्ति, संरचना, खनिज-संपदा एवं रत्नों पर प्रकाश डाला है। वे हिमालय को वैज्ञानिकों केलिए प्रयोगशाली मानते हैं। हंसराज दर्शक का *'कैलाश मानसरोवर की कहानी'* एक यात्रा विवरण है। जहाँ हिमालय के प्रमुख पर्वत कैलास

एवं प्रमुख सरोवर के भौगोलिक एवं धार्मिक महत्व पर प्रकाश डाला गया है। डॉ विश्वम्भरसहाय प्रेमी ने '*हिमालय में भारतीय संस्कृति*' नामक अपने शोध-प्रबन्ध में भारतीय परिप्रेक्ष्य में हिमालय के स्थान का निर्धारण किया है। श्री सुशीलचन्द्र भट्टाचार्य ने '*मानसरोवर और कैलास*' नामक पुस्तक लिखा। मौलूराम ठाकुर का '*हिमालय में पूजित देवी-देवता*', हरिराम जसटा का '*हिमाचल गौरव*' आदि पुस्तकें भी हिमालय से संबन्धित है। राहुल संस्कृत्यायन का हिमाचल नामक के दो भागों में हिमालय के प्रमुख स्थानों का विवरण दिया गया है। प्रबोध कुमार सन्याल का '*उत्तर हिमालय चरित*' यात्रा वृत्त है। इस प्रकार साहित्यिक विधाओं में हिमालय का अपना एक विशेष स्थान रहा है।

आधुनिक हिन्दी कविता में हिमालय-संक्षिप्त विवरण

भारतेन्दु से आधुनिक हिन्दी कविता का आरंभ माना जाता है। लेकिन इस युग में व्रजभाषा में ही अधिकांश कविताएं लिखी गयी थी। द्विवेदी युग में खड़ीबोली हिन्दी का शुद्ध रूप पाया जाता है। प्रस्तुत युग में हिमालय सम्बन्धी कविताएं मुख्य रूप से देश की स्वतन्त्रता के आकांक्षी कवियों की देश प्रेम की कविताएं है। मैथिलीशरण गुप्त की '*भारत की श्रेष्ठता*' (भारत-भारती), '*गन्धमादन*', '*हिमगिरि के उन्नत ललाट हम*', '*रहे हिमालय तुम हिन्दी के*' आदि कविताएं, माखनलाल चतुर्वेदी की '*मेरा है हिमशैल*', '*सीमा ढूँढ रही*' (मरण ज्वार-काव्य संग्रह), '*वह हिमाद्रि*' '*पर्वत की अभिलाषा*', '*वीर पूजा*', '*गंगा की विदा*' आदि कविताएं, सोहनलाल द्विवेदी की '*हिमाद्रि का आत्मपरिचय*', '*विषपान*'; सियाराम शरण गुप्त की '*पूजन*' (पाथेय) '*रजकण*' (मृणमयी); श्रीधर पाठक की '*काश्मीर सुषमा*' '*वीर भोग्य वसुन्धरा*', '*देहारादून*', रामनरेश त्रिपाठी की '*कश्मीर*', '*देख ली हमने मसूरी*'; हरिकृष्ण प्रेमी की '*हिमालय आज घायल है*', '*रण भेरी*', '*शहीदों की आवाज़*', '*रक्त स्नान*' आदि द्विवेदीयुगीन राष्ट्रीय संस्कृतिक काव्य धारा के कवियों की कविताएं है। छायावादी युगीन हिमालय

सम्बन्धी कविताओं में प्रकृति-चित्रण में एक प्रकार काल्पनिकता पाया जाता है। जयशंकर प्रसाद की *'कामायनी'*, *'भरत'*, *'गंगा सागर'*, *'प्रयाण गीत'*; निराला की *'भारती-वन्दना'* (अपरा), *'कैलाश में शरद्'* (नये पत्ते), *'तुम और मैं'* (अपरा), महादेवी वर्मा की *'हे चिर महान'* (सान्ध्यगीत) *'तू भू के प्राणों का शतदल'* (दीपशिखा), *'वेष धरे'* (परिधि) तथा *'हिमालय'* काव्य-संकलन आदि हिमालय संबन्धी कविताओं से पूर्ण है। सुमित्रानन्दन पन्त ने *'हिमाद्रि'* (तारापथ) *'हिम अंचल'*, *'रिक्त मौन'* (शंखध्वनि) *'कूर्माचल के प्रति'*, *'गिरि-प्रान्तर'* (अतिमा) *'हिमाद्रि-स्तवन'* (गन्धवीथी) *'हिमाद्रि और समुद्र'*, *'पर्वत प्रदेश में पावस'* (अभिषेकता) आदि कविताएं छायावादी युग की प्रमुख कविताएं है। प्रगतिवादी कविता में नरेन्द्र शर्मा *'कौसानी'*, *'कूर्माचल'* (पलाश वन) शिवमंगल सिंह सुमन का *'वातायन से हिमालय दर्शन'*, *'काठमण्डू की पहली साँझ'*, *'आज देश की मिट्ठी बोल उठी है'* (विन्ध्य-हिमालय) शम्भूनाथ सिंह का *'हिमालय'* (व्यक्ति और सृष्टा) तथा *'रसमय हिमालय'*, (खण्डित सेतु); नागार्जुन *'बादल को घिरते देखा है'*, *'सजील प्रिय देवदार'*, *'सिन्धु नद'*, *'बर्फ पड़ी है'* तथा *'भस्मांकुर'* नीरज का *'सैनिकों का प्रयाण गीत'*, *'मानसरोवर आमुख है'* (गीत भी अगीत भी) *'कश्मीर के नाम'* (नीरज की पाती) रामधारी सिंह दिनकर का *'हिमालय'* (रेणुका) *'हिमालय का सन्देश'*, *'पहाड़ के फटने की आवाज़'*, *'परशुराम क प्रतीक्षा'* आदि हिमालय सम्बन्धी कविताएं है। नई कविता एवं प्रयोगवादी कविता में तार सप्तक के कविता में अज्ञेय का *'असाध्यवीणा'*, *'दूर्वाचल'*, *'बर्फ की झील'*, *'नन्दादेवी'* आदि कविताएं नेमिचन्द्र जैन ने *'सुनो चीड़ के पेड़ सुनोग'* (एकान्त) गिरिजाकुमार माथुर ने *'बरफ का चिराग'* (धूप के धान) दूसरा सप्तक के कवियों में भवानी प्रसाद मिश्र ने *'शिखर-प्रश्न'*, *'प्रलय'*, *'कमल के फूल'* धर्मवीर भारती ने *'घाटी का बादल'*, शमशेरबहादूर सिंह ने *'सत्यमेवजयते'*, *'अमन का राग'* नरेश मेहता ने *'उषस्'*, *'अश्व की वल्गा'* (दूसरा सप्तक) *'महाप्रस्थान'*, तीसरे सप्तक के कवियों में विजयदेवनारायण साही ने (मछली घर), *'हिमालय की याद में एक*

पत्र', *'अर्धभस्म देवदारू'*, *'तीर्थ तो है वहीं'*, *'हिमालय के आँसू'* (संवाद तुमसे) केदारनाथ सिंह ने *'भारत की सीमा पर एक नेपाली शहर'* (उत्तर कबीर) कैलाश वाजपेयी ने *'हिमालय पार कर'* (तीसरा अंधेरा) (चौथा सप्तक) बालकृष्ण राव ने *'नीचे तलहटियों'* से *'बर्फ की दीवार'* आदि कविताएं हिमालय से संबन्धित है। जगदीश गुप्त का हिमविद्ध में हिमालय सम्बन्धी कविताएं है।

श्रीधर पाठक ने *'The Cloudy Himalayas'*, दिनकर ने *'The Voice of Himalayas'* (काव्य संकलन) नीरज ने *'Rise up! Rise up! O Love incarnate Glory of Everest'* आदि आधुनिक हिन्दी कवियों की हिमालय सम्बन्धी अंग्रेजी कविताएं है। उर्दू कवि इकबाल ने हिमालय की स्तुति इस प्रकार की है-

"परबत वो सबसे ऊँचा, हमसाया आसमाँ का!
वह सन्तरी हमारा, वह पासबाँ हमारा!"

तथा

"ए हिमाला! ए फ़सीले (दीवार) - किस्वेर (देश) - हिन्दोस्ताँ!
चूमता है तेरी पेशानी (माथा) को झक कर आसमां।"

इस प्रकार आधुनिक काल में हिमालय सम्बन्धित अनेक कविताएं पाई गयी है। आधुनिक काल के प्रमुख हिन्दी कवियों की हिमालय सम्बन्धी कविताओं के सांस्कृतिक संदर्भ का उद्घाटन आगे के अध्यायों में किया गया है।

निष्कर्ष

भौगोलिक दृष्टि से भारत के उत्तर में स्थित हिमालय ने सदैव ही हमारी सीमाओं की रक्षा का गुरुतर भार अपने कन्धे पर उठाया है। भारत में ही नहीं विश्व में भी अपने

अद्वितीय स्थान को कायम करनेवाला यह विशाल पर्वत भौगोलिक दृष्टि से असंख्य पर्वतों, नदियों, वन-संपदा तथा खनिजों को अपने में समेटकर हमारे सम्मुख खड़ा है। देश-विदेश से तीर्थ यात्री एवं पर्यटक इसके दर्शन केलिए आते हैं। हिमालय के रमणीय स्थान, यहाँ मनाए जानेवाले पर्व एवं त्योहार आदि रंग-विरंगे दृश्य अवश्य ही इन्हें खींच लाते हैं। हिमालय असंख्य तीर्थों को धारण कर एक ओर धार्मिक महत्व का प्रतिपादन करता है तो दूसरी ओर तपस्वियों की साधना भूमि होकर आध्यात्मिक महत्व पर बल देता है। पौराणिक घटनाओं का साक्षी हिमालय स्वयं सच्चरित्र या सुपात्र बनकर हमारी संस्कृति की रक्षा करता है। वेद, पुराण, उपनिषद, रामायण एवं महाभारत में इसके उदाहरण पाए जाते हैं। किसी राष्ट्र की उन्नति तभी होगी जब राष्ट्र पूर्ण रूप से स्वतन्त्र हो। भारत का निर्भीक प्रहरी हिमालय ने राष्ट्र रक्षक के रूप में हमारी सीमा को सुरक्षित रखा है। हिमालय के सांस्कृतिक स्वरूप को स्पष्ट करने केलिए उसके भौगोलिक, प्राकृतिक, आध्यात्मिक, धार्मिक, नैतिक, राष्ट्रीय संदर्भ का उद्घाटन हुआ है।

दूसरा अध्याय

द्विवेदीयुगीन हिन्दी कविता में हिमालय के सांस्कृतिक सन्दर्भ

द्विवेदीयुगीन हिन्दी कविता में हिमालय के सांस्कृतिक सन्दर्भ

हिन्दी साहित्य का आधुनिक काल 19 वीं. शताब्दी के उत्तरार्द्ध से प्रारंभ होता है। इस काल का ले आने का श्रेय अंग्रेज़ी उपनिवेशवाद को जाता है। मध्यकाल में पारलौकिक दृष्टि से मनुष्य इतना अधिक आच्छन्न था कि उसे अपने परिवेश की सुध नहीं थी, पर आधुनिक युग में लोग पर्यावरण के प्रति अधिक सतर्क हो गए।

आधुनिक काल की हिन्दी कविता साहित्य के विभिन्न रूपों में अपना विशिष्ट महत्व रखती है। वह आज के युग की समस्याओं तथा विचार धाराओं से प्रभावित होकर वर्तमान जनता तथा भावाभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम बन रही है। इस प्रकार आधुनिक युग की काव्य-धारा रूढ़िवादी विचारों और इतिवृत्तात्मकता का परित्याग करती हुई नवीन एवं स्वस्थ भाव-धारा के रूप में उपस्थित है।

हिन्दी कविता का आधुनिक-युग साहित्य के प्रांगण में भारतेन्दु के आविर्भाव से प्रारंभ होता है। भारतेन्दु युग में जिस विचार-सूत्र का प्रारंभ हुआ वह द्विवेदी युग में क्रमिक रूप से विकसित होता हुआ छायावाद में विस्तृती प्राप्त करने लगा बाद में प्रगतिवाद, प्रयोगवाद एवं नई कविता का प्रादुर्भाव हुआ।

भारतेन्दु काल को आधुनिक हिन्दी साहित्य का दिशा निर्देश करनेवाला युग अवश्य कहा जा सकता है। क्योंकि इस काल में धर्म, समाज, शिक्षा, राजनीति सभी क्षेत्रों में आन्दोलन के लक्षण दृष्टिगोचर होते हैं। भारत अंग्रेजों के अधीन में था। ब्रिटीश राज्य की स्थापना के कारण भारतीय साहित्य को पाश्चात्य साहित्य एवं संस्कृति के सम्पर्क में आने का अवसर मिला। अंग्रेज़ों की शिक्षा का उद्देश्य था कि देशवासियों का ऐसा वर्ग खड़ा करना जो शरीर से भारतीय हो लेकिन मन से अंग्रेजों का गुलाम हो। लेकिन इसका फल उलटा हुआ। अंग्रेज़ी शिक्षा के फलस्वरूप भारतीय; बर्क, स्पेंसर, रूसो आदि विचारकों

के संपर्क में आए जिससे राष्ट्रीयता और स्वतन्त्रता प्राप्ति की भावना को बल मिला। इस काल में सिपाही विद्रोह हुआ, इंडियन नाशनल कोंग्रेस की स्थापना हुई, आर्य समाज की नींव पड़ी, विश्वविद्यालय खुले, यातायात की सुविधाएं बढ़ी रेल, तार, ड़ाक तथा सड़कों का निर्माण हुआ, बाल-विवाह, विधवा-विवाह और स्त्री शिक्षा पर गंभीरता से विचार हुआ। इन परिस्थितियों का प्रभाव इस युग के कवियों में विशेषकर भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, बदरी नारायण चौधरी प्रेमधन, राधाचरण गोस्वामी, बालमुकुन्द गुप्त, प्रताप नारायण मिश्र आदि की कविताओं पर पड़ा। भारतेन्दु युग (1850-1900) में नए तथा पुरातन विषयों की गंगा समान्तर स्थिति में प्रवाहित होती रही। इन्हीं समान्तर प्रवृत्तियों को देखते हुए कुछ आलोचकों ने इसे संक्रान्ति काल कहा है।[1]

भारतेन्दु युगीन कवियों का विषय समाज सुधार, देश-भक्ति और भारतीय संस्कृति के गौरव की ओर जनता का ध्यान आकृष्ट कराना रहा है। इस समय देश में नवीन सांस्कृतिक चेतना की लहर व्याप्त हो गई, इसका आभास इस युग के काव्य में स्पष्टतः मिलता है। मातृभूमि के प्रति प्रेम और राष्ट्रीय भावना का उदय इस युग की विशेषता रही है। भारतीय मानस की पुनःसृष्टि करना और भारतीयों को सुप्तावस्था से जगाना ही उनका प्रमुख लक्ष्य था। भारतेन्दु युग के कुछ इनी -गिनी कविताओं में ही हिमालय क उल्लेख मिलता है। यदि मिलता है तो वह मातृ भूमि के स्तवन के संदर्भ में। प्रस्तुत युग में हिमालय का चित्रण केवल भारत की भौगोलिक एकता को स्पष्ट करने के उद्देश्य से करते थे। भारतेन्दु युगीन कवि राधा चरण गोस्वामी लिखते हैं–

"हमारौ उत्तम भारत देश।
जाके तीन ओर सागर हैं, उत हिमगिरि अतिवेष
श्री गंगा यमुनादि नदी हैं, विंध्यादि परिवेश।"[2]

1. 'भारतेन्दु साहित्य' - रामगोपाल सिंह - पृ.सं - 100
2. 'पूर्व स्वतन्त्रता कविता में राष्ट्रीय एकता' - डॉ० कृष्ण भावुक - पृ.सं - 25

इन पंक्तियों के द्वारा कवि ने भारत को उत्तम देश बताया है, जिसके तीनों ओर सागर है, उत्तर में हिमगिरि बहुत विशेषताओं को धारण किए हुए खड़ा है। संसार में ऐसा कोई भी देश नहीं जहाँ प्राकृतिक सौन्दर्य का ऐसा अनन्त कोष लुटाया गया हो। एक ओर हिमगिरि के ये उत्तुंग शिखर अपनी वन-संपदा और रत्न-राशि से भारत का सम्मान बढ़ाते हैं तो दूसरी ओर उसके अन्तःकरण की स्नेह धाराओं के रूप में प्रवाहित होनेवाली सरिताएं इसका अभिषेक करती है। यह पार्वत्य प्रदेश निर्लंध्य दृढ़ता का प्रतीक है। संक्षेप में भारतेन्दुयुगीन राष्ट्रीय काव्य में प्राचीन गौरव की स्मृति, देश प्रेम तथा भारतीय धर्म और संस्कृति के प्रति श्रद्धा भाव ही दिखाई देता है।

द्विवेदी युग (1900-1918) एवं काव्यगत प्रवृतियाँ - एक परिचय

आधुनिक हिन्दी साहित्य के इतिहास में द्विवेदी युग का महत्वपूर्ण स्थान है। बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में महावीरप्रसाद द्विवेदी ने *'सरस्वती'* के संपादक बनकर हिन्दी के शासन की बागड़ोर अपने हाथ में ले ली और कवियों को इस बात केलिए प्रेरित किया कि वे मातृभूमि को स्वर्ग से भी बढ़कर मान ले और उसकी स्वतन्त्रता केलिए जी-जान से प्रयत्न करें। *'जननी जन्म भूमिरच स्वर्गदपिगरियसी'* यही इन कवियों का मूल मन्त्र था। सरस्वती का प्रश्रय पाकर कवियों की एक टोली ही योगदान केलिए तैयार हो गई। जिसमें मैथिलिशरण गुप्त सबसे प्रमुख रहे। महावीर प्रसाद द्विवेदी ने हिन्दी की अविस्मरणीय सेवा की; इससे यह युग द्विवेदी युग कहलाया। द्विवेदी युग की सबसे बड़ी विशेषता काव्य जगत में खड़ीबोली को ग्रहण करना है। राजनीति के क्षेत्र में बंग-भंग के कारण स्वदेशी आन्दोलन ने ज़ोर पकड़ा। इस युग में प्रथम महायुद्ध (1914) का आरंभ हुआ। धार्मिक क्षेत्र में आर्यसमाज, तियोसफिकल सोसाइटी, और रामकृष्ण मिशन क्रियाशील रहे। भारतीय इतिहास में यह समय ब्रिटीश शासन व्यवस्था के दमन चक एवं कूटनीति का समय था।

द्विवेदीयुगीन कविता में राष्ट्रीयता, प्रकृति-चित्रण, अतीत का गौरव गान, देश की वर्तमान स्थिति, भाषा परिवर्तन एवं इतिवृत्तात्मकता प्रमुख विषय रहे। द्विवेदी युगीन प्रमुख प्रवृत्ति है राष्ट्रीयता। राष्ट्रीयता में देश-प्रेम एवं मातृ भूमि की स्तुति प्रमुख है। इस युग के कवियों ने हिमालय को काव्य विषय बनाते हुए अंग्रेजों की जञ्जीरों से जकड़े हुए भारतीयों में एक नयी स्फूर्ति, ओज एवं प्रेरणा जगाई। प्रकृति-चित्रण के संदर्भ में हिमालय के वन, नदियाँ, पर्वत, खनिज, जीव-जन्तु आदि प्राकृतिक उपादानों को लेकर काव्य सृजन किया गया है। इनके प्रकृति-चित्रण में हिमालय द्वारा मातृ भूमि की स्तुति एवं वन्दना हुई है। भारत के भू संपदा को वैभव से मंडित करनेवाले उन्नत, विशाल एवं बर्फीले पहाड़ हिमालय को प्रकृति का वरदान माना है। भारत के कण-कण में पवित्रता का आभास पानेवाले इन कवियों ने अवश्य ही हिमालय को भी पुनीत माना है। द्विवेदी युगीन कविताओं में उपदेशात्मकता की जो प्रकृत्ति है वह हिमालय से सम्बन्धित कविताओं में भी पाई जाती है। हिमालय को आधार बनाकर लिखी गई कविताओं में नौजवानों को प्रेरणा देने एवं देशवासियों को जगाने के हेतु एक प्रकार की उपदेशात्मकता पाई जाती है। अपने वैयक्तिक सुख-दुःख को त्यागकर देश की सेवा केलिए हिमालय की उन्नत चोटियों पर जाकर सदा केलिए उसकी सुरक्षा में जागरूक नौजवानों की स्तुति एवं प्रशंसा इस युग के काव्य में पायी जाती है। इस युग के कवियों ने नवीन मानवतावादी दृष्टिकोण अपनाया। सामान्य मानव (आम सैनिक) के गौरव की प्रतिष्ठा पहली बार हुई। अतीत के महत्व निर्धारण में हिमालय का स्थान विशेष रहा है। अतीत ही वर्तमान को पैदा करता है और भविष्य निर्माण में अपना सहयोग देता है। इस युग के कवियों ने प्रस्तुत युग की सांस्कृतिक दुर्दशा को देखकर हिमालय के माध्यम से देश के स्वर्णिम अतीत एवं ऐतिहासिक गौरव का बार-बार स्मरण दिलाया है। अतीत का महत्व निर्धारण तब आता है जब वर्तमान में कुछ विसंगतियाँ आ पड़ें।

इस प्रकार द्विवेदी युग की प्रमुख प्रवृत्तियों राष्ट्रीयता, प्रकृति-चित्रण, उपदेशात्मकता मानवतावाद एवं अतीत के महत्व के निधरिण में हिमालय से संबन्धित कविताओं का एक अलग स्थान रहा है जिनका विश्लेषण आगे किया जायेगा।

द्विवेदीयुगीन प्रमुख कवि और उनकी हिमालय सम्बन्धी कविताएं - एक परिचय

द्विवेदीयुगीन प्रमुख कवियों की कोटि में मैथिलीशरण गुप्त, श्रीधर पाठक, रामनरेश त्रिपाठी, गोपालशरण सिंह आदि आते हैं। इस युग के राष्ट्रीय-सांस्कृतिक काव्य-धारा के कवियों में माखनलाल चतुर्वेदी, बालकृष्ण शर्मा नवीन, हरिकृष्ण प्रेमी, सियारामशरण गुप्त, सोहनलाल द्विवेदी, सुभद्राकुमारी चौहान आदि कवियों ने युगीन समस्याओं एवं विचार धाराओं से सचेत होकर हिमालय से सम्बन्धित कविताओं का सृजन किया है।

भारत के उत्तर दिशा में प्रहरी समान खड़े हिमालय पर्वत ने हर युग के साहित्यकारों को प्रभावित किया है। द्विवेदी युग में भारत अंग्रेज़ों का गुलाम रहा था। इसलिए भारतीय जनता को इन परिस्थितियों से अवगत कराने केलिए कवियों ने हिमालय को भारत भूमि का अभिन्न अंग मानकर हिमालय संबन्धी कविताओं का सृजन किया। द्विवेदीयुगीन कवियों ने हिमालय को भारतीय संस्कृति का ज्वलन्त प्रतीक स्वीकार कर जनता को यह चेतावनी दी कि यदि भारत को पहले के समान वैभव से पूर्ण एवं संपन्न बनना है तो उसे सबसे पहले अंग्रेज़ी शासन से मुक्त होकर स्वतंत्र बनना है।

मैथिलीशरण गुप्त - द्विवेदीयुग के प्रतिनिधि कवि मैथिलीशरण गुप्त ने ही सर्वप्रथम मातृभूमि और देश प्रेम की कविताएं लिखीं। राष्ट्रकवि के रूप में उनकी ख्याति प्रसिद्ध थी। सांस्कृतिक स्तर के होने के कारण उनकी राष्ट्रीयता प्रज्वल भी थी। आधुनिक काल में जनसाधारण के बीच देश-भक्ति की भावना उत्प्रेरित करने में कविवर मैथिलीशरण गुप्त प्रसिद्ध हैं। सांस्कृतिक पुनरुत्थान और देश के जागरण से सीधे जुड़े हुए गुप्तजी ने कहीं-कहीं हिमालय को भी अपनी राष्ट्रभक्ति और सांस्कृतिक जागरण का आधार बनाया।

मैथिलीशरण गुप्त ने *'भारत की श्रेष्ठता'* (भारत-भारती से); *'गन्धमादन'*, *'मातृभूमि'*, *'हिमगिरि के उन्नत ललाट हम'*, *'रहे हिमालय तुम हिन्दी के'* आदि कविताएँ हिमालय के प्राकृतिक, राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक गरिमा को लेकर रची हैं।

'भारत की श्रेष्ठता' नामक कविता में भारत के गौरव का वर्णन करते हुए इसके सौन्दर्य का मूल कारण मनोहर हिमालय तथा उससे निकलनेवाली नदियों को माना है। हिमालय और गंगाजल से भारत की भूमि पवित्र बन गयी है इस ओर इशारा करते हुए कवि लिखते हैं कि-

"भू-लोक का गौरव, प्रकृति का पुण्य लीला स्थल कहाँ?
फैला मनोहर गिरि हिमालय और गंगाजल जहाँ।"[1]

उत्तर प्रदेश के प्रति' कविता में उत्तरप्रदेश को राम, कृष्णा जैसे देवताओं की भूमि मानते हुए हिमालय जैसे पर्वत को इस देश का प्रहरी माना है। धवल हिमालय शिव एवं पार्वती से युक्त है देवताओं को धारण करनेवाला यह पर्वत श्रेष्ठ है। इसलिए इसे पर्वतों का राजा (भूधरेश) भी माना जाता है। कवि कहते हैं कि -

"तेरा प्रहरी हर - गौरी का धवल हिमालय भूधरेश
उत्तर दे, हे उत्तर प्रदेश।"[2]

'गन्धमादन' कविता में हिमालय के गन्धमादन पर्वत की ऊँचाई, विशेषता और प्राकृतिक वैभवों का चित्रण करते हुए गुप्तजी स्वयं इस पर्वत को तपस्वी मानते हैं। कवि ने हिमालय में स्थित गन्धमादन को धरती का आध्यात्मिक स्थल माना है। आध्यात्मिक वातावरण का चित्रण करते हुए हिमालय को तपस्या एवं साधना का स्थान बताया है।

1. 'भारत-भारती' - भारत की श्रेष्ठता - मैथिलीशरण गुप्त - पृ.सं - 11
2. 'भूमि-भाग' - उत्तर प्रदेश के प्रति - मैथिलीशरण गुप्त - पृ.सं 33

'हिमगिरि के उन्नत ललाट हम' कविता लिखने की पृष्ठ भूमि अंग्रेज़ों की गुलामी व्यवस्था से पीड़ित जनता को सचेत कराना था। कवि का कहना हैं -

"अब न करेंगे मन उचाट हम, दिव्य विभा युत नभ विराट हम
प्रकृति प्रभा का रूप समन्वित हिमगिरि के उन्नत ललाट हम"।[1]

अतः हमें चिन्ता से पीड़ित होने की तनिक भी आवश्यकता नहीं है क्योंकि हम भारतवासी हिमालय के उन्नत ललाट पर विराजमान करनेवाले हैं। भारतीय संस्कृति को एक शब्द में परिभाषित करना असंभव है इसका स्वरूप हिमालय के समान उन्नत, विराट और स्वच्छ है। प्रकृति हमें जितनी अच्छाइयाँ देती है ये सारी अच्छाइयाँ इस धरती से पाई जाती हैं।

'रहे हिमालय तुम हिन्दी के' नामक कविता में भारत के खोए हुए वैभव की याद दिलाते हुए हिमालय को हमेशा ही कवियों केलिए प्रेरणादायक माना है। मैथिलीशरण गुप्त ने हिमालय को उच्च एवं उन्नत स्थान दिया है। हिमालय केलिए *'सिरमौर'* (सिर का मौर या किरीट) कहा है अर्थात् हिमालय को भारत माता के सिर का किरीट माना है। राजा के सिर का भूषण करनेवाला है उसका किरीट या मुकुट। इसी प्रकार हमारी संस्कृति ने भी हिमालय को उच्च एवं श्रेष्ठ स्थान दिया है। कवि मैथिलीशरण गुप्त कहते हैं कि -

"मिली प्रेरणा इस धरती को जब जब छटा निहारी
कहाँ मिलेगा तुमसा संबल बोलो सतव्रत धारी
भारत के कण-कण ने तुमसे अपनत्व पाया था और
यहाँ के कविगणों ने हिमालय को सिरमौर बनाया था।"[2]

1. राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त अभिनन्दन ग्रंथ पृ.सं 85
2. राष्ट्र कवि मैथिलीशरण गुप्त अभिनन्दन ग्रन्थ - रहे हिमालय तुम हिन्दी के - पृ.सं - 61

अतः मैथिलीशरण गुप्त की हिमालय सम्बन्धी कविताओं में राष्ट्रीय स्वर गूँज उठता है।

रामनरेश त्रिपाठी

द्विवेदीयुगीन इतिवृत्तात्मकता और छायावाद की लाक्षणिकता से युक्त त्रिपाठी की कविताएं प्रकृति, देश-भक्ति और रोमांटिक तत्वों से संपन्न है। रामनरेश त्रिपाठी ने '*काश्मीर*', '*देख ली हमने मसूरी*', '*स्वदेश-गौरव*', '*आश्चर्यमय जगत्*', '*द्विविधा*' आदि कविताओं में हिमालय की प्राकृतिक धर्म को उद्घाटित किया है। त्रिपाठी सन् 1928-29 ई. में काश्मीर गए थे। रामनरेश त्रिपाठी ने '*काश्मीर*' कविता में व्यंग्यात्मक ढंग से कहा है कि-'*काश्मीर पृथ्वी का स्वर्ग*' ही है। साधारणतः कविताओं में सरिता, पहाड़, झील, झरने, वन आदि से युत्त काश्मीर को इन्द्रपुरी से भी हज़ार गुनी सुषमा से युक्त माना है। कवि लिखते हैं कि यहाँ की अप्सराएं आज घास छीलती है, धान कूटती है, परी, किन्नरी, मनोरमा, रति, रम्भा आदि सड़कें बुहारती हैं, मेनका, तिलोत्तमा आदि गोबर बटोरती हैं। कवियों ने काश्मीर की सुषमा को देखकर बहुत कुछ लिख डाला उसे '*भारत का स्वर्ग*' कहने से संतुष्ट न होकर '*पृथ्वी का स्वर्ग*' ही कह डाला। लेकिन त्रिपाठीजी काश्मीर की रमणियों की सुन्दरता तथा उनकी फ़कीरी पर व्यंग्य करते हुए कहते हैं कि -

> "*सड़कें बुहारती धृताची रति रम्भा कहाँ*
> *गोबर बटोरती है मेनका तिलोत्तमा।*"[1]

काश्मीर की घाटी एक ज़माने में अप्सराओं एवं किन्नरियों से युक्त रम्य स्थली थी।

'*द्विविधा*' नामक कविता में रामनरेश त्रिपाठी ने हिमालय की उपत्यका, वन-संपदा एवं हिमालय से निसृत होकर आनेवाली नदियों का चित्रण करते हुए वहाँ के चिडियों

1. आधुनिक कवि रामनरेश त्रिपाठी (काश्मीर) गोपाल चन्द्र सिंह - पृ.सं - 68

की चहचहाहट, निनाद युक्त झरनों के होते हुए भी वहाँ का एक-एक क्षण शान्ति, स्वस्थता और आनन्द से पूर्ण कहा है।

द्विवेदीयुग के अन्य प्रमुख कवि श्रीधर पाठक ने *'काश्मीर सुषमा' 'देहरादून' 'भारत गीत', 'वीर-भोग्या वसुन्धरा'* आदि कविताओं में हिमालय के सौन्दर्य पर मुग्ध कवि की अनुभूतियों का चित्र प्रस्तुत किया है। पाठक जी का काव्य काल भारतेन्दु के जीवन काल से प्रारम्भ होकर द्विवेदी युग को पार करता हुआ छायावादी युग में प्रवेश करता है इसलिए इन युगों की प्रवृत्तियों के अनुकूल ही पाठक जी का काव्य सृजन हुआ है। हिमालय की अनुपम छटा को दर्शाते हुए प्रकृति के वास्तविक रूप को दिखाने की प्रवृत्ति भी उपलब्ध होती है। प्रकृति को प्रगति का रूप देने का प्रयास पाठक ने किया है।

"'उत्तर-दिशि नगराज' अटल छवि सहित विराजत
लसत स्वेत सिर मुकुट झलक हिम शोभा भ्राजत
प्रकृति परम - चातुर्य अनुपम अचरज आलय
श्रीधर दृग छकि रहत अटल छवि निरखी हिमालय।"[1]

प्रकति के सूक्ष्म निरीक्षण की दृष्टि से पाठक जी की *'काश्मीर सुषमा'* अमर रचना है। हिमाच्छादित श्रेणियाँ, जलप्लावित सरिताओं से युक्त काश्मीर का प्राकृतिक सौन्दर्य महामहिम और आकर्षण से पूर्ण है। प्रकृति के रम्य अंक में स्थित कुटीरों, राजमहलों तथा तीर्थस्थानों सर्वत्र दिव्यता की छटा छाई हुई है। क्षण-क्षण और पग-पग पर सौन्दर्य की इस अमर विभूति के प्रसरित होने के कारण ही काश्मीर भारत का स्वर्ग है।

'देहरादून' कविता में कवि ने गंगा स्तवन गिरि मार्ग, मसूरी, शिमला आदि स्थानों को चित्रित किया है। देहरादून से मसूरी शहर अत्यधिक दूर होते हुए भी दर्शनीय है।

1. मनोविनोद - श्रीधर पाठक - हिमालय प्रथम आवृत्ति - पृ.सं - 52-53

मध्य में हिम की श्रेणियाँ, वन आदि सभी प्रकार से शोभित हैं। द्विवेदी युग में प्रकृति को उसके वास्तविक रूप में देखने की प्रवृत्ति उपलब्ध होती है। हिमालय के संबन्ध में वे लिखते हैं - यदि मैं यहाँ हिमालय की इन प्राचीन शिखरों पर जहाँ निनादित पवन चलते हैं और बिजली कड़कती है होता जहाँ विशद आकाशीय मण्डल अन्धकार में विलीन रहते हैं जहाँ केवल भाप, आँधी के झकोरे एवं ध्वनि आदि का ही साम्राज्य है, जहाँ प्रधानतः पंचतत्व उन्मुक्त रूप से खिलवाड़ करते हैं, तथा जहाँ पर अन्य चीज़ गौण है और जहाँ प्रकृति की क्रीड़ा द्वारा दूर गहराई से वे धुँधले दैत्य चढ़ते, एकत्रित होते और तीव्र ध्वनि करते दौड़ते हैं और आधात खाकर टुकड़े होकर शान्तिपूर्वक चक्कर काटते हैं और बर्फ के ढ़ेर, नदी तथा ग्लेशियर बन जाते हैं।[1] हिन्दी काव्य जगत् में प्रकृति-चित्रण के कवि और यश में श्रीवृद्धि करनेवाले श्रीधर पाठक हिमालय से अभ्यर्थना करते हुए कहते हैं–

"जय जय शुभ्र हिमालय श्रृंग
कलरव निरत कलोलिनी गंगा
भानु प्रताप चमत्कृत अंगा।"[2]

श्रीधर पाठक के काव्यों में देश-भक्ति, मातृभूमि के प्रति प्रेम आदि राष्ट्रीय भाव हिमालय के परिवेश में पाए जाते हैं। द्विवेदीयुगीन कविताओं में राष्ट्रीय सांस्कृतिक काव्य धारा के कवियों की कविताओं को भी अंकित किया गया है।

सियारामशरण गुप्त

आधुनिक हिन्दी कविता में गाँधीवाद के सैद्धान्तिक पक्ष को उसकी पूर्ण समग्रता में प्रस्तुत करनेवाले कवियों में सियारामशरण गुप्त का प्रमुख स्थान है। वे राष्ट्रीय-सांस्कृतिक काव्य धारा के कवि हैं। सियारामशरण गुप्त की हिमालय सम्बन्धी कविताओं की

1. मनोविनोद श्रीधर पाठक - The cloudy Himalayas - पृ.सं - 195
2. हिमालय - महादेवी वर्मा - श्रीधर पाठक - भारत गीत - पृ.सं - 11

विशेषता यह रही है कि वे हिमालय को उच्च आदर्श का प्रतीक मानते हैं। गुप्त जी ने *'पूजन'* कविता में हिमालय की महानता एवं विराटता को देखते हुए उसे उत्तुंग काय, गौख गिरि, अमल-धवल, अविचल मानकर अपने आप को तृण समान तुच्छ एवं चंचल माना है।[1] *'रजकण'*[2] और *अखंडित*[3] में भी हिमालय की दृढ़ता एवं अचंचलता को दिखाते हुए हिमालय के शान्त वातावरण से प्रभावित कवि मन के विविध भाव एवं भावनाओं का अंकन हुआ है।

हिन्दी के राष्ट्रीय काव्य धारा के कवि सोहनलाल द्विवेदी की हिमालय सम्बन्धी कविताएं हैं- *'हिमाद्रि का आत्मपरिचय,' 'विषपान'* और, *'गढ़वाल के प्रति'* आदि।

'हिमाद्रि का आत्मपरिचय कविता' में हिमालय स्वयं अपना परिचय प्रस्तुत करता है। हिमालय अपने आप को गगनचुंबी, उच्च मस्तक से युक्त, शुभ्र हिम-मंडित कलेवर से युक्त, पग-पग पर कमनीयता को धारण किया हुआ; तरु तृण, लता, वाटिका से संपन्न बताता है।[4] *'विषपान'* कविता पौराणिक घटना को आधार बनाकर चित्रित है। समुद्र मंथन में एक ओर अमृत का कुंभ मिला तो दूसरी ओर कालकूट जैसे भयानक विष भी निकल आया था। (समुद्र मंथन के संदर्भ में रस्सी के रूप में वासुकी नाग को लिया था तथा उसके मुँह से विष निकल आया) हरेक वस्तु के दो रुख होते हैं एक ओर अच्छाई है तो दूसरी ओर बुराई। हिमालय के शिखरों में विराजमान भगवान शिव संसार का मंगल करनेवाले हैं। शिव ने इस घोर विष का पान करते हुए संसार को बचाया उसी शिव की वास भूमि हिमालय भी भव केलिए कल्याणकारी है।[5]

1. सियारामशरण गुप्त रचनावली - पूजन - ललित शुक्ल - पृ.सं - 266
2. सियारामशरण गुप्त रचनावली - रजकण - ललित शुक्ल - पृ.सं - 324
3. सियारामशरण गुप्त रचनावली - अखंडित - ललित शुक्ल - पृ.सं - 415
4. सोहनलाल द्विवेदी रचनावली हिमाद्रि का आत्मपरिचय - राकेश गुप्त - पृ.सं - 298
5. सोहनलाल द्विवेदी रचनावली विषपान - राकेश गुप्त - पृ.सं - 373

'गढवाल के प्रति' नामक कविता में सोहनलाल द्विवेदी राष्ट्रीय सुरक्षा पर बल देकर हिमालय के सुन्दर पहाड़ी प्रदेश गढ़वाल को जगने का आह्वान देते हैं। कवि गढ़वाल को हिमाचल का प्यारा प्रदेश मानते हैं। इसलिए गढ़वाल से आह्वान् करते हैं कि हिमाचल के शुभ्र अंचल में लगे दाग को अपनी विशाल भुजाओं से पोंछ डालें।[1]

हरिकृष्ण प्रेमी की गणना राष्ट्रीय कवियों की कोटि में की जाती है। इनमें राष्ट्रीय भावावेश की प्रखरता है। इन्होंने अपने राष्ट्र प्रेम को हिमालय के माध्यम से तीव्रतर किया है। इनकी राष्ट्रीय एवं क्रांतिकारी कविताओं का संग्रह है - *'संघर्ष के स्वर'*, जो हिमालय सम्बन्धी कविताओं से संपन्न है। प्रस्तुत काव्य - संग्रह में *'रण-भेरी', 'हिमालय आज घायल है'*, *'यह मेरा काश्मीर'*, *'शहीदों की आवाज़'*, *'रक्त-स्नान'*, *'शहीद की माँ'* *'तथा मुंडों की मालावाली'* आदि हिमालय सम्बन्धी कविताएं राष्ट्रीय महत्व रखती हैं।

'रण-भेरी' - नामक कविता में भारतीय इतिहास के महापुरुषों के चरित्र एवं ऐतिहासिक घटनाओं को उजागर करते हुए हिमालय ने आज भारत की रण-भूमि की ओर जनता का ध्यान आकृष्ट कराया है। हिमालय की पावन धरती से भगवान शंकर, भगीरथ, बुद्ध आदि के संबन्ध को दिखाते हुए कवि ने इसे महापुरुषों का देश बताया है। चीन जैसे आसुरी शक्तियों ने जब भारत को चुनौती दी तो अपनी मातृभूमि की रक्षा केलिए भारत के वीर जवानों को पर्वतशिखरों की ओर प्रस्थान करके मातृभूमि का अभिमान कायम करने केलिए आत्मबलिदान देना पडता है। अपने प्राण को भी लुटाना है। जब हिमालय में रण-भेरी सुनाई दे रही है तब हर भारतवासी को सधैर्य इन शत्रुओं का सामना करना चाहिए।[2]

'हिमालय आज घायल है' - भारत के मस्तक हिमालय शत्रुओं के शस्त्र प्रहार से घायल हो उठा है। चीन जैसे शत्रु ने हम पर अत्याचार किया है। कवि चीन को निर्ल्लज देश

1. सोहनलाल द्विवेदी रचनावली - गढ़वाल के प्रति - राकेश गुप्त - पृ.सं - 194
2. 'संघर्ष के स्वर' - रण-भेरी - हरिकृष्ण प्रेमी - पृ.सं - 5-6

मानते हैं क्योंकि चीन जैसे अंधकार से आच्छादित देश को भगवान बुद्ध ने ज्ञान का उपदेश देकर जगाया था वही देश आज गुरु का केश खींच रहा है। कविगण जिस हिमालय की भूमि को शोभा, शक्ति और प्रेम का प्रतिनिधि मानते थे उस पर आज घोर अत्याचार हो रहा है। शत्रु के अत्याचार पूर्ण व्यवहार से हिमालय घायल हो उठा है।[1]

'यह मेरा काश्मीर' कविता में हिमालय के सुन्दर वरदान काश्मीर को भारत केलिए वरदान मानते हैं। काश्मीर की भूमि स्वर्ग समान है जिसके कारण सारी दुनिया उस पर कुर्बान है। ऊँची पर्वतमालाओं से भरी इस भूमि पर हर कहीं हरियाली है। कवि काश्मीर की सुषमा का चित्रण करते हुए काश्मीर को केशर की क्यारियों की खुशबू से युक्त, रंग-विरंगे फूलों से संपन्न मानते हैं। काश्मीर को भारत का अभिन्न अंग मानते हुए देश की सुरक्षा की ओर इशारा किया गया है।[2]

'शहीदों की आवाज़' कविता में कवि ने हिमालय को एक ओर शान्त और सुन्दर बताया तो दूसरी ओर युद्ध के कारण भयानक भी माना है। हिमालय की श्रेष्ठ भूमि पर मर मिटनेवाले वीरजवानों को महान मानते हैं क्योंकि हिमालय की समर भूमि पर अपने आप को देश की सुरक्षा हेतु बलिदान देकर ये वीर युवक शहीद बन जाते हैं और ये अपने परिवार से नाता तोड़कर देश से नाता जोड़ते हैं[3] *'रक्त-स्नान'* कविता में कवि ने युद्ध की विभीषिका को चित्रित करने के साथ-साथ किस प्रकार धवल हिमालय रक्त की तप्त धाराओं से स्नान कर रहा है? इसका चित्रण भी किया है।[4]

---

1. 'संघर्ष के स्वर' - हिमालय आज घायल है - हरिकृष्ण प्रेमी - पृ.सं - 13-14
2. 'संघर्ष के स्वर' - यह मेरा काश्मीर - हरिकृष्ण प्रेमी - पृ. सं - 74-77
3. 'संघर्ष के स्वर' - शहीदों की आवाज़ - हरिकृष्ण प्रेमी - पृ.सं - 41-44
4. 'संघर्ष के स्वर' - रक्त-स्नान - हरिकृष्ण प्रेमी - पृ.सं - 21-24

हरिकृष्ण प्रेमी ने इन कविताओं के माध्यम से प्राचीन वीर योद्धा, महापुरुषों और प्रमुख घटनाओं को दिखाकर युगीन समस्याओं का डटकर सामना करने का आदेश दिया है। उन्होने हिमालय की रण-भूमि को चित्रित करते हुए भारतीय वीर युवकों से देश केलिए बलिदान बनने की चाह की है।

माखनलाल चतुर्वेदी

माखनलाल चतुर्वेदी द्विवेदीयुगीन राष्ट्रीय कवियों में प्रमुख रहे। इनकी सर्जनात्मव प्रतिभा उच्चकोटि के देश-प्रेम और भारतीय संस्कृति के प्रति अद्वितीय प्रेम से समृद्ध है। चतुर्वेदी का काव्य व्यक्तित्व दिवेदी युग से लेकर छायावाद, प्रगतिवाद और प्रयोगशील प्रवृत्तियों को भी अधिकांश रूप से स्पर्श करता हुआ आगे बढ़ा है। इनके काव्य की एक प्रमुख प्रवृत्ती देश-प्रेम है, जिसमें सांस्कृतिक निष्ठा और आध्यात्मिक चिन्तन को प्रमुख स्थान दिया जा सकता है। इस काल की दूसरी प्रमुख प्रवृत्ति सांस्कृतिक चेतना के जागरण की है।

'एक भारतीय आत्मा का काव्य जगत्' में दिनकर सोनवलकर लिखते हैं कि *"प्रत्येक कवि का अपना एक मानसिक जगत् होता है जहाँ से वह अपने प्रतीक, बिंब, चित्र उपमाएं आदि लाया करता है। चतुर्वेदी जी के काव्य में पहला प्रतीक आता है वह कृष्ण चरित्र का है। दूसरा प्रतीक बार-बार आता है वह है हिमालय का। 'एक भारतीय आत्मा' को अपने हिमगिरि पर बड़ा गर्व है, उसके सौन्दर्य पर वह मुग्ध है और हिमालय पर किया गया आघात कवि को इतना पीड़ित करता है मानो किसी ने उसके सिर पर चोट की हो, उसकी प्रतिष्ठा को चुनौती दी हो।"*[1] संस्कृत काव्य हिमालय के उल्लेखों से भरा पड़ा है पर हिन्दी कवियों में इतनी आत्मीयता और व्याकुलता से हिमालय का उल्लेख शायद माखनलाल

1. माखनलाल चतुर्वेदी यात्रा पुरुष (एक भारतीय आत्मा का काव्य जगत् दिनकर सोनवलकर)- पृ. सं - 389

जी ने ही किया है। *"यदि उन्हें 'हिमालय का कवि' कहा जाय तो अत्युक्ति नहीं होगी। उनकी प्रारंभिक रचनाओं से लेकर अब अन्त तक हिमालय उनके काव्य में व्याप्त है। उनका कवि मन हिमालय का गौरव, उसकी भव्यता, उसके अलौकिक सौन्दर्य और भारतीय राष्ट्र में हिमालय के महत्व आदि से ओतप्रोत है। हिमालय से इतनी दूर रहकर उससे इतनी आत्मीयता का अनुभव करना साहित्य क्षेत्र का एक आश्चर्य ही कहा जाएगा। हिन्दी के बड़े-बड़े कवियों को हिमालय की सुध तभी आयी जब चीन ने हम पर आक्रमण किया। माखनलाल चतुर्वेदी के काव्य में हिमालय, सामायिक कृत्रिम लेखन की आवश्यकता नहीं, प्रेरणा की शाश्वत केन्द्र हैं। हिमालय ही नहीं काश्मीर भी उनकी कविताओं में बहुत पहले से अपनी समस्त सुषमा के साथ विराजमान है।"*[1] इस प्रकार चतुर्वेदी के हिमालय संबन्धी कविताओं में राष्ट्रीय भावना से युक्त काव्यों में राष्ट्र के प्रति अत्यधिक अनुराग, राष्ट्र सेवक ओर नेताओं के प्रति श्रद्धा, देश की आकांक्षाओं एवं स्पन्दनों से रागात्मक सम्बन्ध, देश में जागरण का संदेश और राष्ट्र हित केलिए बलिदान की भावना अभिव्यक्त हुई है। माखनलाल चतुर्वेदी की *'सीमा दूँढ रहीं'*, *'वह हिमाद्रि'*, *'हिमालय पर उजाला'*, *'बहने दो बलिपंथी धारा'*, *'हाज़िर है प्राण हमारा'*, *'विन्ध्य को ले हिमालय को मापा करता हूँ'* आदि कविताएं हिमालय की महिमा से मंडित है।

माखनलाल चतुर्वेदी ने द्विवेदी युग में ही काव्य रचना प्रारंभ की थी। भारतीय संस्कृति के अनन्य उपासक इस कवि में राष्ट्रीय भाव की प्रखरता को देखकर इन्हें राष्ट्रीय सांस्कृतिक काव्य धारा के कवियों की कोटि में रखा गया है। इनकी हिमालय सम्बन्धी कुछ कविताएं प्रगतिवादी विचार धारा को लेकर चलती है। *'मरण-ज्वार'* काव्य-संग्रह में 'सीमा दूँढ रहीं' कविता में यह बताया है कि हिमालय का वातावरण यद्यपि शान्त एवं सुन्दर है, फिर

1. माखनलाल चतुर्वेदी यात्रा पुरुष (एक भारतीय आत्मा का काव्य जगत् दिनकर सोनवलकर)- पु. सं - 389

भी यह भीषण रूप धारण कर सकता है। सृष्टि का नाश करनेवाले प्रलयंकर भगवान शंकर यही विराजमान है उनकी डमरू की धुन आज भी सुनाई देती है। सन् 1857 ई. में क्रांति की ज्वाला भटकी थी उसी को आगे ये जाने का आग्रह वे करते हैं। आज हिमालय की भूमि वीरों के सिर माँग रही है।[1] मेरा है हिमशैल कविता में भारत का परम पुरातन पुरुष हिमवान को इस अचला का सौन्दर्य धाम माना है। भारत के आँगन में स्थित हिमालय के प्रत्येक कोने में भारतीयों के अरमान है, कैलाश धाम पर देवाधिदेव महादेव विचरते हैं। हमारी संस्कृति का मूल स्थान इस पर्वत पर आज विवश होकर हमें भी शस्त्र चलाना पड़ता है। जो लोग अपनी ताकत को दिखाकर भारतवासियों पर हमला करने केलिए आ रहे हैं, हमें अपने प्राण को देकर उन्हें यही सिखाना चाहिए कि हम सब कुछ इस पुण्य शैल के सामने अर्पण करने केलिए तैयार है। हिमालय के ज़रिए कवि ने राष्ट्रीय एकता का महत्व एवं भारतीय संस्कृति को सुरक्षित रखने केलिए सीमा सुरक्षा के महत्व के बारे में याद दिलाया है। हिमालय की पावन भूमि आज रण क्षेत्र बन गयी है। कालिदास का वह प्रकृति वर्णन अब नहीं रहा। भारतीय संस्कृति का मूल स्थान हिमालय हरियाली से संपन्न, इतिहास का साक्षी, साहित्य का प्रेरणा-स्रोत, राष्ट्र-प्रहरी, प्रेम की क्रीड़ा भूमि, गंगा का जनक, तीर्थ राज, त्यागमूर्ति, नदियों के स्रोतों का संचारक एवं भारत माता केलिए मुकुट बनकर विराजमान रहनेवाले हैं।[2] 'झंकार कर दो' कविता में कवि हिमशिखरों पर जाकर देश की भलाई केलिए प्राण त्याग देनेवालों को ही पीढ़ियों से पीढ़ियाँ गुज़र जाने पर बलिदान के कारण पहचाने जाएंगे। जो लोग बिस्तर पर सोकर एशो आराम कर रहे हैं कवि इनकी निन्दा करते हैं। हिमालय की चोटियों की रक्षा में लड़नेवाले ये नवजवानों को अनेक साल बीत जाने के बाद भी लोग याद करेंगे। हिमालय के शिखरों ने इन्हें अमरत्व प्रदान किया है यहाँ की खाइयाँ, खंदकें,

1. 'मरण-ज्वार' - सीमा ढूँढ रही - माखनलाल चतुर्वेदी - पृ.सं - 54
2. 'मरण-ज्वार' - मेरा है हिमशैल - माखनलाल चतुर्वेदी - पृ.सं - 55-59

घाटियाँ, पगडंडियाँ इन्हीं वीरों के आवाज़ से भर पड़ा है। कवि कहते हैं कि ये ही भारत के सच्चे वीर है इसलिए भारत की स्त्रियाँ इन्हें भाई मानकर इनके हाथों में राखी बाँध दें ताकि ये उनकी रक्षा कर सकें।[1] *'वह हिमाद्रि'* नामक कविता में हिमालय के प्राचीन एवं आधुनिक (वैज्ञानिक युग) स्वरूप पर अवलोकन कर यह बताया है कि कालिदास जैसे कवि ने जिसे नगों का राजा माना था यदि उसके वैभव संपन्नता को कायम रखना है तो हर भारतीय को भारत सीमा पर लड़कर शहीद होना है।[2] माखनलाल चतुर्वेदी ने *'वीर पूजा'* नामक कविता में भारत भूमि को मनुष्य रूप में चित्रित करके उसके श्री चरणों पर अपने आप को अर्पित करने केलिए तैयार वीर जवानों की पूजा के वक्त अर्ध्य दान केलिए हिमालय को सबसे आगे खड़ा करके कवि ने हिमालय की प्रमुखता घोषित की है। हमारी संस्कृति को कायम करने में हिमालय ने जो भूमिका निभाई है इसका चित्रण ही इस कविता में हुआ है।[3] *'गंगा की विदा'* नामक कविता में भारत की विवाह पद्धतियों के रिस्म को पुनः लाया है। इसकेलिए हिम्वान द्वारा अपनी पुत्री गंगा को विदा करने का आग्रह किया है। सागर को गंगा का प्रियतम बताया गया है। हिमवान से निःसृत गंगा को सागर तक पहुँचने केलिए अनेक मुशिकल राहों से बहना पड़ता है। हिमालय पानी से बना पत्थर है अर्थात् पानी जैसी तरल वस्तु को भी अपनी साधना से सघन बनाता है या दृढ़ बनाता है। गंगा को इतनी शक्तिशाली बताया है कि वह पानी से बना पत्थर (हिमालय) का पानी है। हिमालय को द्रविद कर यह अपनी प्रबलता दिखाती है। हिमालय की मेहरबानी है इसका जल। हिमालय का तपःस्थान वेद मंत्रों से गुंजित है। गंगा भी इसी आध्यात्मिक गरिमा को बहाकर समस्त भारत भूमि को नहाती है। गंगा के तट पर खेती योग्य भूमि, व्यापारिक शहर, प्रमुख तीर्थ आदि का चित्रण

1. माखनलाल चतुर्वेदी रचनावली - 6 - झंकार कर दे - पृ.सं - 289
2. माखनलाल चतुर्वेदी रचनावली भाग 7 वह हिमाद्रि - पृ.सं - 221
3. हिमालय-महादेवी वर्मा - माखनलाल चतुर्वेदी - वीर पूजा - पृ.सं - 76

करना वास्तव में हिमवान की महिमा का उद्घाटन करना ही है। गंगा हिमवान की बेटी है इसलिए उसके द्वारा प्रदत्त संस्कृति केलिए हम हिमालय के आभारी है। गंगा का कन्यादान करने केलिए हिमालय को आह्वान देना तथा भगवान शंकर को डमरू बजाते तथा पार्वती को थाल लेकर विदाई के रस्म कराते कवि ने भारतीय संस्कृति में विवाह के संदर्भ में की जानेवाले कुछ सामाजिक प्रथाओं को प्रदर्शित किया है।[1]

द्विविदीयुगीन कवि माखनलाल चतुर्वेदी एवं हरिकृष्ण प्रेमी जैसे कवि स्वतन्त्रता के पूर्व तथा स्वतन्त्रता के पश्चात् काव्य रचना में प्रवृत्त रहे थे। राष्ट्रीय सांस्कृतिक काव्य धारा के अन्तर्गत आनेवाले कवियों (सुभद्राकुमारी चौहान, बालकृष्णशर्मा नवीन, सोहनलाल द्विवेदी, सियारामशरण गुप्त आदि) की हिमालय सम्बन्धी कविताओं में द्विवेदीयुगीन राष्ट्रीय चेतना पायी जाती है। यद्यपि माखनलाल चतुर्वेदी एवं हरिकृष्ण प्रेमी ने 1942 के चीन आक्रमण से सचेत होने तथा हिमालय की रक्षा केलिए भारतवासियों को आह्वान दिया था फिर भी इन कविताओं में देश प्रेम, बलिदान एवं अतीत स्मरण जैसी द्विवेदीयुगीन राष्ट्रीय प्रवृत्तियों को पाने के कारण 1947 के पश्चात् लिखित इन कविताओं को भी दूसरा अध्याय में ही स्थान दिया गया है।

द्विवेदी युग के अन्य कवियों की कविताओं में भी हिमालय का उल्लेख पाया जाता है जैसे गुरु भक्त सिंह की *'शैलबाला'*, गोपालशरण सिंह की *'हिमालय के प्रति'* रायदेवी पूर्ण की *'रजत गिरि कैलास'*, श्यामनारायण पाण्डेय का *'पर्वत तटी'*, केदारनाथ मिश्र प्रभात की *'पृथ्वी'* आदि कविताएं। राष्ट्रीय सांस्कृतिक काव्य धारा की कवयित्रि सुभद्राकुमारी चौहान ने *'वीरों का कैसा हो वसन्त'* कविता में तथा बालकृष्ण शर्मा नवीन ने हिन्दुस्तान हमारा है कविता में भी हिमालय को काव्य वस्तु बनाया है।

1. माखनलाल चतुर्वेदी रचनावली भाग 7 - गंगा की विदा - पृ.सं - 74

द्विवेदीयुगीन हिन्दी कविता में हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ

द्विवेदीयुगीन हिन्दी कविताओं में से हिमालय सम्बन्धी कविताओं के सांस्कृतिक संदर्भ का अध्ययन करने केलिए इनके भौगोलिक एवं प्राकृतिक, धार्मिक, आध्यात्मिक, नैतिक एवं राष्ट्रीय संदर्भों का विस्तृत अध्ययन किया गया है। उपर्युक्त छः संदर्भों के आधार पर प्रस्तुत अध्याय के सांस्कृतिक पक्ष का उद्घाटन हुआ है।

द्विवेदीयुगीन हिन्दी कविता में हिमालय के भौगोलिक एवं प्राकृतिक संदर्भ

द्विवेदीयुगीन हिन्दी कविता में हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ को उद्घाटित करने केलिए सबसे पहले उसके भौगोलिक एवं प्राकृतिक परिवेश पर विचार किया गया है। देश की भौगोलिक सीमाएं, देश के संस्कृति के निर्माण में सहायक होती हैं। भौगोलिक दृष्टि से भारत के उत्तर में स्थित हिमालय ने भारत को एक विशिष्ट संस्कृति प्रदान की है। द्विवेदीयुगीन हिन्दी कविता में हिमालय के भौगोलिक उपादान जैसे प्रमुख पर्वत, प्रमुख नदियाँ, वनसंपदा तथा खनिज-संपदा पर विचार किया गया है। इस युग के कवियों ने प्रकृति द्वारा प्रदत्त सुन्दरता को धारण करनेवाले हिमालय के रमणीय स्थानों को भी अपनी कविताओं में स्थान दिया है। द्विवेदीयुगीन हिन्दी कविता में हिमालय के प्रमुख पर्वत - कैलास[1], गन्धमादन[2]; प्रमुख नदियाँ - गंगा[3], यमुना[4], ब्रह्मपुत्रा[5], झेलम[6], अलव नन्दा[7], सिन्धु[8], डल झील[9]; मानसरोवर[10] आदि

1. 'संघर्ष के स्वर' - मुंड़ों की मालावाली - हरिकृष्ण प्रेमी - पृ.सं - 9
2. हिमालय - महादेवी वर्मा - मैथिलीशरण गुप्त - गन्धमादन - पृ.सं - 74
3. माखनलाल चतुर्वेदी रचनावली भाग 7 - गंगा की विदा - पृ.सं - 74
4. माखनलाल चतुर्वेदी रचनावली भाग 7 - गंगा की विदा - पृ.सं 221
5. माखनलाल चतुर्वेदी रचनावली भाग 7 - गंगा की विदा - पृ.सं - 221
6. 'संघर्ष के स्वर' मुंड़ों की मालावाली - हरिकृष्ण प्रेमी - पृ.सं - 9
7. 'मरण-ज्वार' - मेरा है हिमशैल - माखनलाल चतुर्वेदी - पृ.सं - 56
8. 'संघर्ष के स्वर' - मुंड़ों की मालावाली - हरिकृष्ण प्रेमी - पृ.सं - 9
9. आधुनिक कवि रामनरेश त्रिपाठी पृ.सं 78
10. सोहनलाल द्विवेदी ग्रंथावली - विषपान - पृ.सं - 373

का संकेत हुआ है। यहाँ की वन-संपदा - देवदार [1], चीनार[2] जैसे वृक्ष, केशर की क्यारी[3]; जीव-जन्तुओं में हंस[4], हाथी[5], का चित्रण मिलता है। हिमालय के प्राकृतिक सौन्दर्य से संपन्न कुछ स्थानों का जैसे काश्मीर[6], मसूरी[7], बदरीनाथ[8], हरिद्वार[9] आदि का उल्लेख भी हुआ है।

मैथिलीशरण गुप्त ने *'गन्धमादन'* कविता के माध्यम से हिमालय के एक प्रमुख पर्वत गन्धमादन की ऊँचाई, विशेषता और स्वरूप पर प्रकाश डाला है। हिमालय के अन्य पर्वतों के समान पुराण प्रसिद्ध पर्वत है गन्धमादन। इस पर्वत के स्वरूप पर कवि इस प्रकार प्रकाश डालते हैं-

"बाहु नभ में और पद पाताल में है
प्रकट क.टि-पट विटपियों के जाल में हैं।
शैलराज सहस्र शीर्षोपम बड़ा है,
वरत विभु सा अभय मुद्रा में खड़ा है।"[10]

गन्धमादन पर्वत इतना ऊँचा है कि उसे देखने पर ऐसा लगता है कि उसकी बाहुएँ नभ तक पहूँच गई है और पैर पाताल तक फैल हुए हैं। शैलराज कहकर कवि ने इसे अन्य पर्वतों से श्रेष्ठ माना है। देवदारू जैसे लम्बे वृक्ष भी इसके सामने छत्रक समान छोटे लगते हैं।

1. 'संघर्ष के स्वर' - हिमालय आज घायल है - हरिकृष्ण प्रेमी - पृ.सं - 14
2. 'संघर्ष के स्वर' - हिमालय आज घायल है - हरिकृष्ण प्रेमी - पृ.सं - 14
3. 'संघर्ष के स्वर' - हिमालय आज घायल है - हरिकृष्ण प्रेमी - पृ.सं - 15
4. 'मरण-ज्वार'- मेरा है हिमशैल - माखनलाल चतुर्वेदी - पृ.सं - 56
5. 'मरण-ज्वार'- मेरा है हिमशैल - माखनलाल चतुर्वेदी - पृ.सं 56
6. 'संघर्ष के स्वर' - यह मेरा काश्मीर - हरिकृष्ण प्रेमी - पृ.सं - 74
7. आधुनिक कवि रामनरेश त्रिपाठी - देख ली हम ने मसूरी
8. 'संघर्ष के स्वर' - मुंड़ों की मालावाली - हरिकृष्ण प्रेमी - पृ.सं - 9
9. माखनलाल चतुर्वेदी रचनावली भाग 7 - गंगा की विदा - पृ.सं - 78
10. हिमालय - महादेवी वर्मा - मैथिलीशरण गुप्त - गन्धमादन - पृ.सं - 74

द्विवेदीयुगीन हिन्दी कविता में हिमालय से निसृत होकर आनेवाली नदियों का उल्लेख मिलता है। नदियों को संस्कृति की वाहिकाएं इसलिए माना जाता हैं कि इनके तटों पर लोग बसते हैं, खेती-बारी करते हैं, नई संस्कृति को जन्म देते हैं। हिमालय की प्रमुख नदी गंगा का उल्लेख करते हुए कवि माखनलाल चतुर्वेदी कहते हैं कि-

"यह हिमगिरि की जटा शंकरी
यह खेतीहर की महरानी
यह भक्तों की अभय देवता,
यह जन जीवन का पानी
इसकी लहरों से गर्वित 'भू'
ओढ़ नयी चूनर धानी
देख रही है, आज अमित
नौकाओं की आनी जानी
इसका तट धन लिए तरणियाँ
गिरा उठाए पाल चली।"[1]

गंगा नदी हिमालय की जटा रूपी शंकरी है। पार्वती की बहन, सहेली और सौत भी है गंगा। हरेक किसान इसे *'महारानी'* मानते हैं। क्योंकि गंगा के तटीय प्रदेशों के अन्न ही इसकी उपजीविका का आधार है। गंगा को मैया, पतितपावनी तथा तीर्थजननी माननेवाले भक्तों केलिए यह अभय देवता हैं। इसका पानी जनता के जीवन को कायम रखता है। यहाँ नौकायें आते-जाते हैं। गंगा नदी के सांस्कृतिक महिमा को उजागर करते हुए कवि कहते हैं कि-

1. माखनलाल चतुर्वेदी रचनावली भाग 7 - गंगा की विदा - पृ.सं 75

"हरे हरे अपने अंचल कर
तट पर वैभव डाल चली

हरिद्वार से प्रागराज तक
काशी - पटना डेरे डाल
चली दौड़ती सागर - रुख पर
कर देशों को मालामाल।"[1]

हिमतनया गंगा अपने दोनों किनारों को हरा भरा बनाती हुई चलती है। काशी, बनारस, प्रयाग, पटना, मगध, कलकत्ता आदि शहरों में जीनेवाले भारतवासी गंगा को माता मानते हैं, जिसका वास्तविक श्रेय हिमवान को है। कवि माखनलाल चतुर्वेदी कहते हैं–

"वैभव, ज्ञान, श्रेष्ठता, साहस
उभय किनारे डाल चली,
प्रबल नगधिराज मत रोको
बिटिया अब ससुराल चली।"[2]

इस प्रकार हिमालय से बहकर आनेवाली गंगा नदी हमारी संस्कृति को गौरवान्वित व रती है। इसके संबन्ध में कवि कहते हैं कि *"हिमालय से बहकर आनेवाले झरने अनेक बातें कर रहे हैं उनकी बातों में अतीत की स्मृतियाँ, गतियाँ, कृतियाँ तथा वृत्तियाँ झलकती हैं, भारतीय संस्कृति को आगे बढ़ानेवाली ये नदियाँ भारतीय संस्कृति की जीवन धारा है; यह जीवन धारा जितनी ऊँचाई से आ रही है हमें अपनी संस्कृति पर उतना ही गर्व है"* –

"भारत में इसकी आगी है, भारत में इसका है पानी,
इसकी ऊँचाई पर गर्वित संस्कृति की अस्तित्व कहानी।"[3]

---

1. माखनलाल चतुर्वेदी रचनावली भाग 7 - गंगा की विदा - पृ.सं - 74
2. माखनलाल चतुर्वेदी रचनावली भाग 7 - गंगा की विदा - पृ.सं - 74
3. 'मरण-ज्वार' - मेरा है हिमशैल - माखनलाल चतुर्वेदी - पृ.सं - 58

हिमालय से निसृत होकर आनेवाली नदियाँ कलकल निनाद से मुखरित है इसका स्वर संगीतमय है। यहाँ आने से मानव मन शांत एवं तृप्त हो जाता है और ऐसा लगता है कि *'यही स्वर्ग है'*। हमारी संस्कृति को कायम रखनेवाली इन नदियों के साथ हमारे अतीत की स्मृतियाँ और वर्तमान तथा भविष्य का निर्माण भी जुड़ा रहता है। इस बात का संकेत कवि इस प्रकार करते हैं–

"गंगा, यमुना, ब्रह्मपुत्र आदिक में बहती इसकी प्रीत।
झरनों के कलकल कल रव में मुखरित है उर में संगीत।
'यही स्वर्ग है' जिसे देखकर करता मानव हृदय प्रतीत।
वर्तमान का नाता इससे, जुड़ा हुआ है अमिट अतीत।"[1]

हिमालय से निसृत होकर आनेवाली नदियों के सम्बन्ध में कवि हरिकृष्ण प्रेमी कहते हैं कि–

"भारत के अतीत से ऊँचे शिखर कर रहे नभ से बात।
जिससे मेध गले मिल आते, देते भारत को बरसात,
जिसकी गोदी की झीलों में खिलते है अनुपम जलजात
जिसका स्नेह प्रवाहित होकर बनता नदियाँ और प्रपात।"[2]

द्विवेदीयुगीन कविता में हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ को उद्‌घाटित करने केलिए हिमालय के प्राकृतिक संदर्भ पर प्रकाश डाला गया है। द्विवेदीयुगीन काव्य में हिमालय की उपत्यका, लम्बे सीधे वृक्षों से भरे वन, (जो चिडियों की चहचहाहट और झरनों के निनाद से दिन-रात जाग्रत रहता है) हिम से आच्छादित ऊँचे-ऊँचे पर्वत, कल-निनाद

1. 'संघर्ष के स्वर' हिमालय आज घायल है - हरिकृष्ण प्रेमी - पृ.सं - 14
2. 'संघर्ष के स्वर' - हिमालय आज घायल है - हरिकृष्ण प्रेमी - पृ.सं - 13

करती नदियों, सरोवर आदि का उल्लेख मिलता है। इनकी कविताओं से यह विदित होता है कि हिमालय की भूमि शस्य श्यामलत्व एवं प्रकृति की नैसर्गिक सुषमा का चिरन्तन आकर रही है।

द्विवेदीयुगीन कवि हिमालय की प्रकृति में कहीं दैवत्व का आभास पाते हैं। हिमालय की प्रकृति कहीं कहीं सुन्दर, शांत, निर्भीक और स्वस्थ रहती है तो दूसरी ओर भयावह एवं कठोर लगती है। जहाँ तक प्रकृति वर्णन का प्रश्न है, द्विवेदीयुगीन काव्य में हिमालय की प्रकृति का जहाँ-तहाँ संक्षिप्त वर्णन मिलता है। ये रूप आलम्बन के और मानवीकरण के रहे हैं। कहीं-कहीं अलंकार के रूप में प्रकृति का प्रयोग किया गया है। इस प्रकार हिमालय की प्रकृति को वैविध्यपूर्ण दृष्टि से अवलोकन करने में द्विवेदीयुगीन कवि सक्षम रहे हैं।

संसार में होनेवाले कार्यों से हिमालय की प्रकृति भी उसी के अनुकूल परिवर्तित रहती है। हिमालय शिव का वास स्थान है और हिमालय की प्रकृति का कण-कण दैवत्व से पूर्ण है। इन बातों का उल्लेख करते हुए सोहनलाल द्विवेदी ने '*विषपान*' कविता के माध्यम से हिमालय की प्रकृति का चित्रण किया है - समुद्र मंथन के कारण जो विष निकल आया था जिससे हिमालय के श्रृंगों में चिन्ता छाई हुई है, लता, तरु, गुल्म, पल्लव सब में एक प्रकार की शून्यता छाई रहती है, मानसरोवर के स्वर्णिम (कंचन) कमलों का स्वर्णिम हास भी नष्ट हुआ है। हिमालय के आँगन में देवता एवं दैत्यों के जयजयकार सुनकर भगवान शंकर संसार की रक्षा करने केलिए विषपान करने को तैयार हो जाते हैं जिसे देखकर हिमालय के तुषार मंडित शिखर भी आनन्द विभोर हो उठते हैं। हिमालय के श्रृंगों पर होनेवाले परिवर्तन का कवि इस प्रकार चित्रण करते हैं –

"हिमगिरि के तुषार-मंडित श्रृंगों का रंग था निखर उठा;
चले शंभू थे महात्राण को, वन-वन में रस बिखर उठा।
थी सुरसरि में पुलक भरी, लहरें ले रहीं तंरगें थी;
चले दिगंबर विश्वत्राण को, उर में मधर उमंगें थी।"[1]

1. सोहनलाल द्विवेदी ग्रंथावली विषपान राकेश गुप्त - पृ.सं - 374

संसार दुःखित होता है तो हिमालय की प्रकृति में भी उसका प्रतिफलन होता है और संसार में आनन्द या मंगल होने से हिमालय की प्रकृति में हर्ष की झलक पायी जाती है। इस प्रकार हिमालय की प्रकृति को भी कवि ने मानव के सुख-दुःख का भागीदार बनाया है।

हिमालय की सबसे खास विशेषता यही रही कि प्रकृति ने हिमालय को बर्फ़ का चादर ओढ़कर अनुग्रहीत किया है। ये हिम कहीं-कहीं धुआँ के रूप में छाया रहता है तो कहीं गलता - पिघलता हुआ दिखायी देता है। द्विवेदीयुगीन कवियों ने इसका यथावत् चित्रण किया है।

द्विवेदीयुगीन कविता में प्रकृति-चित्रण के संदर्भ में हिमालय के बर्फ़ के ढलने का चित्रण करते हुए कवि ने हिमालय के प्राकृतिक सौन्दर्य को इस प्रकार चित्रित किया है- "हिमालय के पर्वत शिखर बर्फ़ से ढके हुए हैं, ये बर्फ सूर्य किरणों के पड़ने से गलकर जल बनकर नालों में आकर छोटे-बड़े जल कणों से युक्त होकर, शिला-समूहों से टकराकर, फेन बहाते हुए नदी के समान कोलाहल कर दिन-रात बहते हैं। कवि को ऐसा लगता है कि ये छोटे-छोटे बादलों के टुकड़े बनकर खेलते हैं और द्रुतगति से गोल पत्थरों पर जाकर गिरते हुए महोत्सव मनाते हैं। इस बाल विनोद को देखकर देवदारू की सुगन्धित छाया में बैठे हुए कवि अपने जीवन रूपी सुमन को ईश्वर के पादपद्मों पर समर्पित करना चाहते हैं।" द्विवेदीयुगीन कवि ने हिमालय की प्रकृति में एक प्रकार दैवीतत्व का आभास पाया है।[1] प्रकृति को ईश्वर का वरदान माना है। हिमालय इनकेलिए जड़ पत्थरों का पहाड़ न होकर सजीव दृश्यों की खान है।

1. हिमालय महादेवी वर्मा - रामनरेश त्रिपाठी - द्विविधा - पृ.सं 78

माखनलाल चतुर्वेदी ने बरफ के धुएँ से छाए हुए हिमालय की प्रकृति का इस प्रकार चित्र खींचा है–

"धूपें यहीं मनोहारिणियाँ
छायें यहीं धूप की भाषा
बनती मिटती रोज़ संवरती
इस पर त्यागों की परिभाषा।"[1]

हिमालय पर बरफ धुएँ के समान छाया रहता है जब सूर्य की किरणों इस पर पड़ती है तों हमें लगता है कि चंवर हों। चंवर की मनोहारिता धूप की भाषा है जब सूर्य का ताप बर्फ में पड़ जाता है तो बर्फ पानी में बदल जाती है। जो नदी का रूप धारण कर संसार का मंगल करता है *'त्यागों की परिभाषा'* का तात्पर्य यही है। घुएँ के समान रेशमी दुशाल ओढ़कर खड़े रहनेवाले शैल को देखकर भारतीय कवि प्रभावित होते हैं।

"धूवें के रेशमी दुशाले
ओढ़े खड़ी शैलवन-टोली,
यहीं कहीं प्रतिभा ने जग में
सन्ध्या सी सुन्दरता खोली।"[2]

माखनलाल चतुर्वेदी हिमालय की प्रकृति को सुन्दर, मनमोहक एवं निर्भीक बताते हैं–

"यहीं कहीं निर्भयता फिरती
इसकी देश-देश को प्यासी,
यहीं कहीं सुन्दरता फिरती
इसके पुण्य चरण की दासी।"[3]

1. 'मरण-ज्वार' मेरा है हिमशैल - माखनलाल चतुर्वेदी -पृ.सं 57
2. 'मरण-ज्वार' मेरा है हिमशैल - माखनलाल चतुर्वेदी - पृ.सं - 58
3. 'मरण-ज्वार' - मेरा है हिमशैल - माखनलाल चतुर्वेदी - पृ.सं - 57

हिमालय का प्राकृतिक वातावरण इतना आकर्षक है कि हिम शैलों में बसनेवाली स्त्रियाँ दिन-रात यहाँ विहार करती है मानो मानस में विहार करनेवाले हंस हों। दिन-रात में कोई अन्तर न समझते हुए हाथियों के समान चिल्लाकर आनन्दमग्न होकर इधर-उधर धूमती फिरती हैं। हिमालय के प्राकृतिक सौन्दर्य से इतना मोहित हो जाती हैं कि इसे देखूँ या उसे देखूँ इस प्रकार सोचकर ये इधर-उधर दौड़ती रहती हैं। ये रोज़ अलकनन्दा से बातें भी करती हैं।[1] द्विवेदीयुगीन कविता में हिमालय की प्रकृति के साथ वार्तालाप उनकी निकटता को सूचित करता है। ये प्रकृति को अपना निकट संबन्धी मानते हैं।

हिमालय का प्राकृतिक वातावरण जितना सुन्दर है उतना ही भयानक भी है। कवि कहते हैं कि –

"सारा देश थिरक जाता है जब यह शैल करवटें लेता
भूकम्पों, बाढ़ों, झंझावातों का वस्त्र सलवटें लेता।"[2]

हिमवान जब करवटें लेता है तो उसके परिणाम स्वरूप भूकम्प, बाढ़, झंझावात आदि पैदा हो जाते हैं। हिमालय के कारण होनेवाले इस प्राकृतिक नाश में भी एक नव निर्माण छिपा रहता है। गंगा नदी में होनेवाले बाढ़ का कवि इस प्रकार चित्रण करते हैं गंगा की बाढ़ें वर्षा पर आश्रित हैं, लेकिन गंगा के जनक हिमवान बाढ़ या प्रलय की सृष्टि करने में सक्षम है। भूमि का तुच्छ कंपन ही हिमवान में बाढ़ों की सृष्टि कर सकता है। बाढ़ के आने से खुला नाश होता है। फिर बाढ़ के बाद धरती नया रूप धारण करती है।[3]

1. 'मरण-ज्वार' - मेरा है हिमशैल - माखनलाल चतुर्वेदी - पृ.सं - 56
2. 'मरण-ज्वार' - मेरा है हिमशैल - माखनलाल चतुर्वेदी - पृ.सं - 56
3. माखनलाल चतुर्वेदी रचनावली भाग 7 - गंगा की विदा - पृ.सं - 74

हिमालय को कुदरत का वरदान माननेवाले कवि हरिकृष्ण प्रेमी अपनी कविता में इसके सौन्दर्य का चित्रण प्रस्तुत करते हैं-

"कुंकुम की वर्षा करते हैं इस पर संध्या और प्रभात।
चाँदी की बिछात करती है यहाँ रजत राका की रात।
अठखेलियाँ किया करता है यहाँ रूप जग में विख्यात।
नदी-निर्झरी, शैल घाटियाँ सब सजीव से करते बात।
कुदरत अपने कुशल करों से बजा रही है मधुर सितार।"[1]

हिमालय के वातावरण में सूर्योदय एवं सूर्यास्त के समय एक प्रकार की हलकी लालिमा छाई रहती है। जिसे कवि *'कुंकुम की वर्षा'* कहते हैं। रात में चंद्रमा के उदित होने से चाँदनी इसप्रकार फैल जाती है मानो चाँदी बिछाया गया हो। यहाँ के नदी, निर्झर शैल घाटियाँ सजीव रहते हैं और बाते भी करते हैं हिमालय का प्राकृतिक वातावरण सुन्दर होने के साथ-साथ सजीव भी है। देवदार एवं चीनार के वृक्षों से हिमालय की भूमि संपन्न रही हैं। हिमालय का सौन्दर्य चकित करनेवाला है और सुषमा भव्य एवं विराट है। हिमालय इतना अधिक सुन्दर होने से शत्रु को ललचाता है या इस पर शत्रु की कुदृष्टि पड़ने या आक्रमण होने की संभावना भी होती है।

"अखिल विश्व की गिरिमालाओं का सर्वमान्य सम्राट
शिखरों पर है मुकुट बर्फ की, नीचे हरियाली का ठाट
भारत के इस गौरव पर है बैरी चाह रहा अधिकार।"[2]

काश्मीर के प्राकृतिक सौन्दर्य सदैव संसार को आकर्षित करता रहा है। काश्मीर की भूमि स्वर्ग समान है जिसके कारण सारी दुनिया इस पर कुर्बान है। ऊँची पर्वतमालाओं

1. 'संघर्ष के स्वर' - हिमालय आज घायल है - हरिकृष्ण प्रेमी - पृ.सं - 15
2. 'संघर्ष के स्वर' - हिमालय आज घायल है - हरिकृष्ण प्रेमी - पृ.सं - 14

से भरी इस भूमि पर हर कहीं हरियाली है काश्मीर भारत केलिए प्रकृति का वरदान है। काश्मीर की प्रकृति का चित्रण कवि इस प्रकार करते हैं–

"उतर रही हिमगिरि से अविरल सरिताएँ मस्तानी।
इनकी दरियादिली की चाँदी बहती बनकर पानी
बहती बन मोती झरनों में कुदरत की मनमानी।"[1]

काश्मीर-सुषमा का आगे इस प्रकार चित्रण किया है - काश्मीर आसमान के टुकड़े के समान भू पर पड़ा है। यहाँ के ऊँचे-ऊँचे पेड़ पहरेदार या सैनिकों के समान खड़े है, पंछियों की चहचहाहट ऐसी लगती मानो बच्चों की किलकारी हो, ठंडी-ठंडी हवा की शीतलता बाण समान चुभता है। यहाँ की झीलों पर नौकाएँ हंस के समान धीरे-धीरे चलता है। विविध प्रकार के वैभवों से इसका कोना-कोना पूरित है।[2]

काश्मीर की प्रकृति इतनी सुन्दर एवं आकर्षक है कि कवि इसे सुन्दर बाला ही मानते हैं।

"चमक चोटियाँ रही दर्फ़ का तन पर ओढ़ दुशाला।
अंग-अंग उभरा है मानों बीस बरस की बाला।
कण-कण साकी बना बुलाता भर मदिरा का प्याला।
रूप सुरा आँखों से पीकर दिल होता मतवाला।
अनुपम रूप निरव प्राणों में उठ पड़ता तूफ़ान।"[3]

यहाँ हिमालय की प्रकृति का मानवीकरण हुआ है। बर्फ़ से आच्छादित चोटियाँ सफ़ेद दुशाला ओढ़े युवती के समान लगते हैं।

1. 'संघर्ष के स्वर' यह मेरा काश्मीर - हरिकृष्ण प्रेमी - पृ.सं - 75
2. 'संघर्ष के स्वर' यह मेरा काश्मीर - हरिकृष्ण प्रेमी - पृ.सं - 75
3. 'संघर्ष के स्वर' यह मेरा काश्मीर हरिकृष्ण प्रेमी - पृ.सं - 75

इस प्रकार द्विवेदीयुगीन हिन्दी कविता में हिमालय के भौगोलिक एवं प्राकृतिव संदर्भ के अन्तर्गत गन्धमादन जैसे पर्वत की श्रेष्ठता, हिमालय से निःसृत होकर आनेवाली नदियों का सांस्कृतिक महत्व (जिसमें गंगा नदी का विशेष उल्लेख) आदि पर विचार किया गया है। हिमालय की प्रकृति में देवी-तत्व का आभास पाया जाता है, जो पौराणिक तथ्यों पर आधारित हैं। हिमालय की प्रकृति एक ओर निर्भिक, शांत एवं स्वस्थ है तो दूसरी और भयावह एवं कठोर भी है। संसार में होनेवाले परिवर्तनों के साथ हिमालय की प्रकृति भी परिवर्तनशील है। काश्मीर को कुदरत का वरदान माननेवाले कवि ने कहीं उसका मानवीकरण करते हुए सुन्दर बाला के रूप में चित्रित किया है। अतः हिमालय के ये भौगोलिक एवं प्राकृतिक उपादान उसके सांस्कृतिक स्वरूप का उद्घाटन करने में सक्षम रहे हैं।

द्विवेदीयुगीन हिन्दी कविता में हिमालय के धार्मिक संदर्भ

द्विवेदीयुगीन कवियों ने हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ को उद्घाटित करने केलिए हिन्दु धार्मिक ग्रंथों में से कुछ पौराणिक घटनाओं को प्रस्तुत किया है। हिमालय अतीत की स्मृतियों एवं घटनाओं को अपने में समेटता हुआ आज भी हमारे सामने खड़ा है। संस्कृति को रूपायित करने में अतीत की घटनाओं का प्रमुख स्थान रहा है। अतीत से कुछ पाकर ही वर्तमान आगे बढ़ सकता हैं। हिमालय भी अतीत की एक घटना का साक्षी रहा है। अमृत पाने या अमरत्व पाने केलिए देवों और असुरों ने समुद्र का मंथन किया था। उस समय वासुकी नाग के मुँह से जो विष निकल आया था जो इस सृष्टि का नाश करने में सक्षम था उसे लेकर जो समस्याएं हुई उसी को *'विषपान'* कविता में सोहनलाल द्विवेदी ने चित्रित किया है।

हिमालय के श्रृंगों में चिन्ता छाई हुई है। लता, तरु, गुल्म, पल्लव सब में एक प्रकार की शून्यता छाई हुई है, मानसरोवर के कंचन-कमलों का स्वर्णिम हास भी नष्ट हुआ

है। हिमालय के आँगन में देवता और दैत्य गण एकत्रित होकर मंगलकारी महादेव का जयजयकार करते हैं। भगवान शंकर शक्ति की आज्ञा पाकर संसार की रक्षार्थ विष पान केलिए तैयार हो जाते हैं जिस देखकर हिमालय के तुषार-मंडित श्रृंग भी आनन्द विभोर हो उठता है। हिमालय के श्रृंगों पर जो परिवर्तन हुआ उसे कवि इसप्रकार प्रस्तुत करते हैं-

"आज हिमाचल के श्रृंगों में चिन्ता की छाया आई;
लता, गुल्म, तरु में, पल्लव में एक शून्यता थी छाई।
मानसरोवर के कंचन कमलों का स्वर्णिम हास गया;
किसी एक दुःख के छाया से मधु का मधुर विकास गया।"[1]

कैलासवासी मृत्युंजय महादेव ने कालकूट विष का पान करते हुए विश्व का कल्याण किया था। हिमालय इस प्रकार हिन्दु पौराणिक, कथाओं का साक्षी रहा है। द्विवेदीयुगीन कविता *'विषपान'* में पौराणिक आख्यान को प्रस्तुत करते हुए कवि ने एक ओर भारत भूमि की श्रेष्ठता को उजागर किया तो दूसरी और यह दिखाया है कि हिमालय आज भी संसार का मंगल करने केलिए प्रस्तुत है। *'विषपान'* के प्रंसग में देवासुर संस्कृति की ओर संकेत किया गया है जो हिमालय के सान्निध्य में चित्रित है।

हिमालय देवताओं का वास स्थान रहा है हिमवान की पुत्री कालिन्दी के तट पर भगवान कृष्ण गोपिकाओं सहित विहार करते थे। द्विवेदीयुगीन कवियों ने हिमालय के इस पौराणिक संदर्भ का स्मरण इस प्रकार किया है-

"यहीं कहीं उस माधव का अलगोजा बोल रहा है रानी।
राधा के पैरों की पायल, यहीं कह रही राम कहानी।"[2]

---

1. सोहनलाल द्विवेदी ग्रंथावली - विषपान राकेश गुप्त - पृ.सं 374
2. 'मरण-ज्वार' - मेरा है हिमशैल - माखनलाल चतुर्वेदी - पृ.सं - 55

माधव की बाँसुरी, राधा के पैरों का नूपुर और राम का जीवन यह सब हिमालय से जुड़ा रहता है।

द्विवेदीयुगीन कवि हिमालय को देवताओं का वास स्थान मानते हैं। हिमालय के कण-कण में दैवत्व का आभास पाया गया है। भारत भूमि सात पुरियों, सात कुल पर्वतों और सात परमपावनी नदियोंवाली दिव्य भूमि के रूप में जाना जाता है। माखनलाल चतुर्वेदी ने हिमालय को *'देवताओं का लोक'* कहा है।[1] भगवान शंकर पार्वती साहित यही विराजमान रहते हैं कवि इस प्रकार व्यक्त करते हैं-

"यह पार्वती, यह शंकर हिमगिरि से बल देकर,
करते हैं अभिषेक देश का गंगा का जल लेकर।"[2]

'गंगा की विदा' कविता में गंगा की विदाई के वक्त शंकर को डमरू बजाते हुए तथा पार्वती को तिलक का थाल लेकर गंगा की विदाई केलिए तैयार खड़े होने का चित्रण किया गया है। भारतीय संस्कृति में विवाह के संदर्भ में कुछ सामाजिक प्रथाएं होती है। विवाह के संदर्भ में मंत्रोच्चार किया जाता है। हिमालय में बहनेबाली हवा में भी मंत्रोच्चार सुनाई दे रहा है। गंगा नदी धार्मिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है त्रिवेणी संगम पर विश्वनाथ मंदिर के कारण इसका सौन्दर्य दुगुना हो जाता है। हिमालय, सृष्टि का संहार करनेवाले प्रलयंकर शंकर का वास स्थान है।

'सीमा ढूँढ़ रही' कविता में कवि कहते हैं कि-
"यहीं कहीं डमरू की धून है यहीं कहीं रहते प्रलयंकर
आज उसी की जीत रहेगी जो निजकफ़न संभाले।"[3]

1. 'माता' उच्चत्व से पतन स्वीकार था - माखनलाल चतुर्वेदी - पृ.सं - 114
   जवहरलाल नेहरु ने 'डिस्कवरी आफ इण्डिया' में हिमालय को देवताओं का वास स्थान कहा है जैसे- 'The Greeks chose Olympus as the abode of Gods just as the Indian placed their Gods and ever their sage on Himalayan heights.'
   Discovery of India - Jawaharlal Nehru - p - 152
2. 'मरण-ज्वार' - 26 जनवरी - माखनलाल चतुर्वेदी
3. 'मरण-ज्वार' - सीमा ढूँढ रही - माखनलाल चतुर्वेदी - पृ.सं - 54

हिमालय पवित्र तीर्थ स्थानों से संपन्न है। द्विवेदीयुगीन कवि इनका स्मरण अवश्य करते हैं लेकिन अब विदेशियों के आक्रमण से भारत-भूमि घायल हो उठी। हिमालय के धवल-शिखरों पर लहू के लाल धब्बे पड़े है। देश की इस अवस्था देखकर हिमालय का एक-एक कण व्यथित हो उठता है। कवि कहते हैं कि–

"मानसरोवर संतापित है, रोता है, शिव का कैलास।
बद्रीनाथ व्यथित है अतिशय, गंगा का मन हुआ उदास।
सिंधु, ब्रह्मपुत्रा, झेलम का लूट लिया बैरी ने हास।
लाशों से पट गए शिखर जिन पर था ऋषि-मुनियों का वास।"[1]

हिमालय की धरती की खुशहाली नष्ट हो गयी है। हिमालय पर वास करनेवाले भगवान शंकर से कवि प्रार्थना करते हैं कि वे समाधि में से उठें और अपनी तीसरी आँख खोलकर शत्रु को भस्म कर दें या ताण्डव नृत्य कर शत्रु को नष्ट भ्रष्ट कर दें। वे कहते हैं कि-

"शंकर से भी कहो तीसरी नेत्र आज दें वह भी खोल।
हत्या आज सत्य की होती, पीड़ित है भूगोल खागोल।
फिर भी हैं समाधि में शंकर क्यों न उठा है आसन डोल?"[2]

जगजननी गौरी हिमालय की पुत्री है, हिमालय भगवान शंकर का वास स्थान है, जहाँ ऋषियों को तप द्वारा ज्ञान की प्राप्ति हुई है, भारत का वरदान यह हिमालय हमारेलिए पावन एवं पूज्य रहा है।

"जगज्जनि गौरी है जिसकी बेटी, जिसे झुकाते शीश,
है शंकर का वास जहाँ पर, श्रद्धा जिन्हें मानती ईश
तप कर जहाँ दिया ऋषियों ने हमको ज्ञान और आशीश,
पावन, पूज्य हिमालय की है भारत को अतलित बख्शीस।[3]

1. 'संघर्ष के स्वर' - मुंड़ों की मालावाली - हरिकृष्ण प्रेमी - पृ.सं - 9
2. 'संघर्ष के स्वर' - मुंड़ों की मालावाली - हरिकृष्ण प्रेमी - पृ.सं - 11
3. 'संघर्ष के स्वर' - हिमालय आज घायल है - हरिकृष्ण प्रेमी - पृ.सं - 13

हिमालय देवों का धाम है, यहाँ पर विशाल बद्रिनाथ मंदिर स्थित है, ज्वालामुखी जो विकराय रूप की है अब सुप्त पड़ी है तथा शिव के तीसरा नेत्र खोलेगा तो शत्रु तत्क्षण भस्म हो जाएगा।

हिमालय के कण-कण में देवत्व का आभास पाया गया है हिमालय को केवल एक शैल-शिखर ही समझना नहीं, यहाँ से बहकर आनेवाली गंगा के कण-कण में ईश्वरीय चेतना है परमपुरातन शिव का वास स्थान है। कवि माखनलाल चतुर्वेदी हिमालय को भारत माता का मुकुट मानते हैं हिमालय में पहूँचनेवाले तीर्थयात्री अपना सर्वस्व इस पर न्योछावर कर देते हैं इसके दर्शन से अपने आप को धन्य मानते हैं–

"शैल शिखर भर इसे न समझो, गंगा बरस उठी है कण-कण,
यह दैवत् है परम पुरातन यह शिव शंकर, यह मनमोहन।
यह है मुकुट मातृ भू तेरी तीर्थ-तीर्थ फल रही धरोहर,
यात्री सरबस चढ़ा-चढ़ा कर इससे पाते जीवन का वर।"[3]

हिमालय तथा हिमतनया गंगा दोनों में दैवत्व का आभास पाने का संकेत देते हुए कवि माखनलाल चतुर्वेदी लिखते हैं कि–

"वैसा ही सन्तान कि जैसा दैवत्
दैवत्, मृत्युंजय, अधनंगा।
चिर अहिबत पार्वती देती
बाढ़ें देते हैं प्रलयंकर।"[2]

1. 'मरण-ज्वार' - मेरा है हिमशैल - माखनलाल चतुर्वेदी - पृ.सं - 57
2. माखनलाल चतुर्वेदी रचनावली भाग 7 - गंगा की विदा - पृ.सं - 75

गंगा और यमुना के संगम स्थान पर स्थित प्रयाग को हम तीर्थराज मानते हैं। कवि माखनलाल चतुर्वेदी ने *'हरिद्वार से प्रागराज तक'* कहकर हिमालय के तीर्थस्थानों की ओर इशारा किया है।[1]

संक्षेप में द्विवेदीयुगीन हिन्दी कविता में हिमालय के धार्मिक संदर्भ के अन्तर्गत गंगा, मानसरोवर, बदरीनाथ, कैलास, हरिद्वार, प्रयाग जैसे तीर्थस्थानों के महत्व को उजागर कर हिमालय की पावन धरती की ओर जनता का ध्यान आकृष्ट कराया है। *'विषपान'* की पौराणिक घटना को प्रस्तुत कर भगवान शंकर के मंगलमय स्वरूप को सामने लाया गया है। शिव, पार्वती, गंगा एवं हिमालय के कण कण में दैवत्व पाया गया है। गंगा विवाह के संदर्भ में शिव-पार्वती की उपास्थीति का चित्रण भी हुआ है। इस प्रकार धार्मिक दृष्टि से देखा जाये तो तीर्थस्थानों तथा देवताओं से संपन्न हिमालय भूमि सदा भारतीय संस्कृति को उजागर करती रही है।

द्विवेदीयुगीन हिन्दी कविता में हिमालय के आध्यात्मिक संदर्भ

द्विवेदीयुगीन हिन्दी कविता में हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ को उद्‌घाटित करने केलिए उसके आध्यात्मिक स्वरूप पर भी प्रकाश डालना आवश्यक है। द्विवेदीयुगीन कवियों ने भारतवासियों के मन में अडिग रहनेवाले 'आध्यात्मिक-प्रतीक हिमालय' का यशोगान किया है और हिमालय को संसार केलिए गरिमा प्रदान करनेवाला माना है। हिमालय प्राचीन काल से ही ऋषियों एवं तपास्वियों की तपस्थली रहा है।

द्विवेदीयुगीन हिन्दी कवियों ने भी हिमालय को धरती की आध्यात्मिक स्थली माना है। हिमालय का गन्धमादन पर्वत भारत भूमि के पुण्य जगहों में एक है। महाभारतकार

1. माखनलाल चतुर्वेदी रचनावली भाग 7 - गंगा की विदा - पृ.सं - 78

बताते हैं कि तपःशक्ति से युक्त श्रेष्ठ व्यक्ति ही यहाँ प्रवेश कर सकता है। सांसारिक बन्धनों में उलझे हुए मनुष्य को भौतिक लालसाओं से मुक्त कराते हुए देवत्व की उपाधि प्राप्त कराने में इस पर्वतराज ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। गन्धमादन पर्वत हिमालय के अन्य पर्वतों के समान पुराण प्रसिद्ध है। द्विवेदीयुगीन कवि ने हिमालय के इस गन्धमादन को तपस्वी माना है। आकाश एवं पृथ्वी के बीच मध्यस्थ के समान खड़ा यह पर्वत उसका हास-विलाप सुनता है।

"अवनि अम्बर का यही मध्यस्थ अपना
सुन रहा है ध्यान से हँसना - विलपना।"[1]

योगी के समान ध्यान मग्न होकर खड़ा यह पर्वत भूमि से उठकर स्वर्ग से संलग्न हो गया है। हिमहास करके सबका स्वागत करनेवाला यह पर्वत अपने में बड़े बड़े रहस्यों को समेटकर दुर्ग समान खड़ा है। द्विवेदीयुगीन कविता में हिमालय के आध्यात्मिक वातावरण का चित्रण करते हुए उसके तप योग एवं साधना को स्थान दिया है।

कवि माखनलाल चतुर्वेदी ने *'गंगा की विदा'* कविता में गंगा के महत्व का उद्घाटन किया है वास्तव में यह हिमालय के ही महत्व का उद्घाटन है। हिमालय तनया गंगा का चित्रण करते हुए कवियों ने हिमालय एवं गंगा दोनों को हमारे धार्मिक एवं आध्यात्मिक धरातक से जाड़ा हैं। उत्तर भारत का संपूर्ण जन जीवन जो आध्यात्मिक , सामाजिक, सांस्कृतिक या आर्थिक हो हिमालय से निसृत होकर आनेवाली गंगा से जुड़ा रहता है। जन्म से मृत्यु तक जितनी धार्मिक रस्में हैं इन सारी रस्मों में गंगा को भारतवासियों ने महत्वपूर्ण स्थान दिया है। भारत ऐसा देश है जो दुनिया के अन्य देशों से अलग रहता है इस अलगाव का कारण यहाँ की अनेकता में एकता एवं एकता में अनेकता है। सारी भिन्नताओं के बीच एकता की अदृश्य धारा बह रही है। उस अदृश्य धारा में हिमवान का महत्वपूर्ण स्थान है।

1. हिमालय - महादेवी वर्मा - मैथिलीशरण गुप्त - गन्धमादन - पृ.सं - 74

हिमालय के आध्यात्मिक महत्व को कवि माखनलाल चतुर्वेदी अपनी कविता में इस प्रकार व्यक्त करते हैं–

"शिर से पद तक ऋषि गण प्यारे
किये गुहा के स्थान हिमालय!
मन्त्र-मन्त्र गुंजित करते हो
भारत को वरदान हिमालय
अगम वेद से निगम शास्त्र से
भू के ओ अहसान हिमालय।"[1]

हिमालय के सिर से पैर तक की अनेक गुफाओं में ऋषिगण बसते हैं। इन गुफाओं से मंत्रों की ध्वनि प्रतिध्वनित होती है। हिमालय भारत का वरदान है चार वेद तथा भिन्न-भिन्न शास्त्र विज्ञान अर्थात अगम वेद से निगम शास्त्र तक हिमालय की देन है। हर भारतवासी को उन्नति प्रदान करनेवाला यही नगाधिराज रहा है।

हिमालय से निसृत गंगा की पानी में युग-युगों से संचित वेदों की वाणी संकालित है। युगों से यहाँ की जनता वेद मन्त्रों के सारांश पाकर सन्ध्या और उषा की पूजा कर रहे हैं उन पूजा मन्त्रों में गंगा को महत्वपूर्ण स्थान दिया है। गंगा का इतना महत्व है कि वह शिवमौली से भारत भूमि के चरणों तक शिवत्व की महिमा का गायन करते हुए भारत को एकता के सूत्र में बाँधती है आध्यात्मिकता से जुड़ी भारतीय संस्कृति में गंगा का बेजोड़ स्थान है। जैसे-

"वेदों की वाणी उतरी है
तेरी बाहों भू रानी पर
संचित पुण्य सहस्रों सदियों
दौड़ रहा पानी-पानी पर
शिव के सिर से भक्त शीर्ष तक
शीतल करती भला चली।"[2]

1. माखनलाल चतुर्वेदी रचनावली भाग 7 - गंगा की विदा - पृ.सं - 77
2. माखनलाल चतुर्वेदी रचनावली भाग 7 गंगा की विदा - पृ.सं - 77

हिमालय से निसृत वेद मंत्र ज्ञान यहाँ के जनता के हृदय, कंठ, मस्तिष्क में काव्य, भावना, सौन्दर्यबोध तथा चिन्तन-पद्धतियों को पैदा करता है। यह ऐसा भाव है जो मानव मन को स्वच्छ बनाता और सद्‌गति की ओर चलने की प्रेरणा देता है। हिमालय में आने से राक्षस (रावण) का दम्भ भी कम होता है। यहाँ के अतुलनीय वैभव के कारण दारिद्रय एवं दैन्य डर जाते हैं, ऋषि एवं देवों की इस भूमि में पाप-ताप केलिए स्थान नहीं हैं। अनेक संस्कृतियाँ गंगा के तट पर विकसित हुई है।[1]

"मंत्रों के क्षण झरते अथवा वे
उन्नों के कारण झरते
हृद्य, कंठ, मस्तिष्क भर रहे
खेतों खेतों को भरते।
दानव दम्भ दोष डरते हैं
या दारिद्रय-दैन्य् डरते हैं
पाप-ताप हरते हैं
अथवा जन की भूख व्यास हरते।"[2]

कवि हरिकृष्ण प्रेमी हिमालय के आध्यात्मिक महत्व को इस प्रकार व्यक्त करते हैं–

1. गंगा नदी के महत्व के संबन्ध में 'द डिस्कवरी आफ इंडिया' में जवहरलाल नेहरू कहते हैं कि-

 "The gangas, above all the rivers of India, which held India's heart captive and drawn uncountable millions to her banks since the dawn of history. The story of Gangas, from her source to the sea from old times to new is the story of Indian civilization and culture, of the rise and fall of great empires of, great and proud cities, of the adventure of man and the quest of the mind which has so occupied India's thinkers."

 The Discovery of India - Jawaharlal Nehru - p - 52

2. माखनलाल चतुर्वेदी रचनावली भाग 7 - गंगा की विदा - पृ.सं - 78

"जिसका बर्फीला माथा है ऋषियों के केशों सा श्वेत,
जिस पर रहा गूँजता अविरत वेदों का गायन समवेत
जिसके गर्भित कोष दे रहे उज्जवल भावी का संकेत।"[1]

एक ओर हिमालय को एक तपस्वी माना है जिसका माथा ऋषियों के केशों सा श्वेत है यहाँ पर वेदों का स्वर गूँजता है।

इस प्रकार द्विवेदीयुगीन हिन्दी कविता में हिमालय के आध्यात्मिक स्वरूप के अन्तर्गत गन्धमादन जैसे पुराण प्रसिद्ध पर्वत की तपःशक्ति; वेद, मन्त्र एवं ज्ञान भूमि हिमालय, गंगा का संस्कृतिक महत्व; हिमालय की गुफाओं में तपस्या करनेवाले ऋषि गण उनके मन्त्रोच्चार से गुंजित हिमालय के वन आदि आते हैं। ये सारी बातें वास्तव में हिमालय को आध्यात्मिक परिवेश प्रदान करते हैं जिससे उसका सांस्कृतिक संदर्भ उजागर होता है।

द्विवेदीयुगीन हिन्दी कविता में हिमालय के नैतिक संदर्भ

संस्कृति मानवीय पदार्थ है - व्यक्ति के अन्तर का विकास है। संस्कृति का मानव जीवन से अटूट सम्बन्ध है। व्यक्ति के आचार-विचार, धार्मिक विश्वास, रहन-सहन, सामाजिक संबन्ध आदि उसकी संस्कृति को रूपायित करने में सहायक हैं। हमारी संस्कृति में अतिथिसत्कार, तपशीलता, जनमंगल, प्रेमतत्व अहिंसा, सत्य का समर्थन, दान एव व्यागशीलता, मौन का महत्व, राष्ट्ररक्षार्थ बलिदान आदि गुणों या विशेषताओं को प्रमुखता दी गयी है।[2] प्राचीनकाल में हिमालय को मानव (राजा) माना गया था जिसने अपनी पुत्री पार्वती का विवाह शिवजी से संपन्न कराया था। लेकिन (आधुनिक कवि) द्विवेदीयुगीन कवि इसे चेतन प्राणी तो नहीं मानते फिर भी हिमालय उनकेलिए मानवसहज सद्गुणों का भण्डार है।

1. 'संघर्ष के स्वर' - हिमालय आज घायल है - हरिकृष्ण प्रेमी - पृ.सं - 13
2. 'भारतीय संस्कृति की महिमा विविध आयाम' - भूमिका - डॉ॰ कृष्ण भावुक

हिमालय के मानवीकरण के ज रिए उन्होंने यह संपन्न किया है। द्विवेदीयुगीन कवियों ने हिमालय में उपर्युक्त गुणों को दिखाते हुए इसे अपना काव्य विषय बनाया।

द्विवेदीयुगीन कवि हिमालय के स्वरूप को निर्धारित करते हुए इसे दृढ़ एवं अविचल मानते हैं। द्विवेदी युग में देश में इतनी समस्याएं थीं, अंग्रेज़ों एवं देशवासियों में संघर्ष का समय था कुछ भारतीय अंग्रेज़ों के पक्षधर थे कुछ इनके विरोधी। स्वतन्त्रता की चाह होते हुए भी अंग्रेज़ों के विरुद्ध आवाज़ उठा पाने में संकोच करते थे। लोग एक प्रकार चंचल चित्त थे। इस स्थिति में कवियों ने हिमालय को सामने खड़ा कराते हुए लोगों को दिखाया कि - जितनी भी समस्याएं हों, जितना भी झंझावात हो हिमालय अविचल होकर उन सबका सामना करता है –

"हो शत शत झंझावात प्रबल
फिर भी स्वभावतः तू अविचल
तू गौरव गिरि, उत्तुंग काय।"[1]

हिमवान की दृढ़ता एवं स्थिरता का उदाहरण कवि माखनलाल चतुर्वेदी इस प्रकार करते हैं–

"यह लघु-लघु अर्पण को उत्सुक
उसकी स्थिरता योग सधी है।"[2]

हिमवान योग साधना में निमग्न है तथा गंगा गतिमय है। हिमवान की योग साधना को दैवत् को गंगा अपनी गति से नीचे की ओर ले जाती है। गंगा में अर्पण का भाव है। हिमवान स्थिर है अचल है, गंगा चंचल है। हिमवान की स्थिरता पार्वती के तप के समान

1. सियारामशरणगुप्त रचनावली - ललित शुक्ल - पाथेय - पूजन - पृ.सं - 266
2. माखनलाल चतुर्वेदी रचनावली भाग 7 - गंगा की विदा - पृ.सं - 74

दृढ़ है। हिमालय पानी से बना पत्थर है पानी जैसी तरल वस्तु को भी अपनी साध से सघन बनाता है दृढ़ बनाता है। लेकिन गंगा इतनी शक्तिशाली है कि उसके दृढ़ पत्थर को पानी बनाती है। गंगा पानी से बना पत्थर (हिमालय) का पानी है। हिमालय को द्रविभूत कर यह (गंगा) अपनी प्रबलता दिखाती है। फिर भी हिमालय की मेहरबानी के फलस्वरूप ही है।

"तुम जब पानी के पत्थर हो,
तब यह पत्थर का पानी है
द्रवित हो उठे तुम, यह प्रबला
तेरी तरल मेहेरबानी है।"[1]

हमारी संस्कृति में मौन एवं तपशीलता का महत्व है। द्विवेदीयुगीन हिन्दी कविता में हिमालय को भी एक तपस्वी के समान अचल मौन साधना में मग्न रहनेवाला माना है। हिमालय जिस प्रकार तपस्या में लीन रहता है उसी प्रकार वहाँ का वातावरण भी शांत एवं नीरव है। लेकिन द्विवेदीयुगीन कवियों को हिमालय की गौरव वाणी सुनने की चाह है। हिमालय जब अपना मौन तोड़ देगा तो उसकी वाणी अमृत समान लगेगी। हिमालय से निसृत निर्झरों का स्वर वास्तव में इसके अन्तस् का संवाद ही है।

"अविरत तेरा करुणा निर्झर
अगणित धाराओं से झर-झर
जीवित रखता है जीवन भर
मेरा यह जीवन जड़ित प्रायः
तू गौरव गिरि उत्तुंग काय।"[2]

द्विवेदीयुगीन कविता में हिमालय नदियों के स्रोतों के संचारक होने के साथ ही भारतीय संस्कृति के प्रेम एवं करुणा आदि भावों का संचारक भी माना है। बाहय् रूप से

1. माखनलाल चतुर्वेदी रचनावली भाग 7 - गंगा की विदा - पृ.सं - 76
2. सियारामशरण गुप्त रचनावली - ललित शुक्ल - पाथेय - पूजन - पृ.सं - 266

दृढ़ एवं अविचल दिखाई देनेवाला हिमालय अपनी करुणा की दृष्टि से असंख्य धाराओं को बहाता है जो जन जीवन को कायम रखता है इस प्रकार हिमालय लोकमंगल करनेवाला है। इस प्रकार करुणा भाव रूपी सद्व्यवहार से हिमालय अपने आप को ऊँचों से भी ऊँचा साबित करता है।

द्विवेदीयुगीन कवियों ने हिमालय के प्राकृतिक वातावरण को रागात्मक माना है। हमारी संस्कृति में प्रेमतत्व, जन्म भूमि से या मातृभूमि से लेकर समस्त विश्व तक व्याप्त हो गया है। हिमालय के इस वातावरण में हिमवान की पुत्री पार्वती ने भगवान शंकर का प्रेम पाया था। हिमशैलों में बसनेवाली नारियाँ पानी भरने केलिए गगरी लेकर झरनों के किनारे आती हैं और अपने मन रूपी घट में प्रेम रूपी पानी लेकर जाती है। कवि इन नारियों को पार्वती मानते हैं, पार्वती के समान यहाँ की स्त्रियाँ प्रेम पाने में सक्षम हो गयी है।[1]

हिमालय की उच्चता केवल उसकी ऊँचाई में ही नहीं बल्कि उसके सद्व्यवहार में भी है। हिमालय हमारी संस्कृति की उच्चता को ऐसे स्पष्ट करता है कि वैभव और शक्ति किसी वस्तु की श्रेष्ठता को उद्घोषित नहीं करती बल्कि समानआदर का भाव ही उसकी श्रेष्ठता बनता है। हिमशैलों में बसनेवाली नारियाँ गागर में प्रेम रूपी पानी भरने केलिए झुकती हैं तो ये महानशैल शिखर भी झुक जाते हैं अर्थात् हिमालय के उच्च शिखरों से निसृत हमारी संस्कृति जितनी उच्च है उतनी ही उदार भी है।

"वे झुकती हैं पानी भरने
शैल-शिखर झुक-झुक जाते हैं
झूले से झूलते गगन तक
साँस संदेसा पहुँचाते हैं।"[2]

1. 'मरण-ज्वार' मेरा है हिमशैल - माखनलाल चतुर्वेदी - पृ.सं - 56
2. 'मरण-ज्वार' - मेरा है हिमशैल - माखनलाल चतुर्वेदी - पृ.सं - 56

द्विवेदीयुगीन कवियों ने हिमालय की श्रेष्ठता, महानता एवं सद्व्यवहार को लेकर या नैतिक आयाम को उद्घाटित करने केलिए जितनी भी कविताएं लिखीं इन सबमें से प्रमुख कविता है *'पर्वत की अभिलाषा'* जिसमें कवि ने आत्मालाप शैली से पर्वतराज की विशेषताओं को उद्घाटित किया है। कवि भारतीय संस्कृति के विशेष पहलू कर्मण्यता का उद्घाटन करने केलिए हिमालय का आश्रय लेते हैं। कवि कहते हैं-

"तू चाहे मुझको हरि, सोने का मढ़ा सुमेरु बनाना मत,
तू चाहे मेरी गोद खोदकर मणि-मणिक प्रकटाना मत।"[1]

हिमालय ईश्वर से यह प्रार्थना करता हे कि है ईश्वर अगर तू चाहे तो मुझे सुमेरु बना सकते, ईश्वर अपनी अनन्त वैभव को हिमालय की गोद में डालकर उसे वैभवशाली बना सकते। प्रकृति रूपी लावण्यवती से उस पर्वत भूमि को विलासी बना सकते तथा उसके अन्तर की दावग्नि मिटा सकते। हिमालय इन सभी वरदानों को प्राप्त कर अकर्मण्य रहना नहीं चाहता वह अपने आप को संसार की भलाई के हेतु प्रस्तुत करना चाहता है। इस प्रकार अपने उदार स्वरूप दिखाकर सदा कर्मण्य रहना चाहता है। हिमालय अपनी गोद में समेट रखनेवाले जल से सारी धरती का पाप धुलाना चाहता है, इस धरती को हराभरा और जीवित बनाना चाहता है। हिमालय गंगा यमुना के रूप में अपनी जीवन स्रोतास्विनी को बहाकर प्रवृत्त रहना चाहता है।

"जगती-तल का मल धोने को भू हरी हरी कर देने को
गंगा-जमुनाएं बहा सकूँ यह देना, देर लगाना मत।"[2]

1. माखनलाल चतुर्वेदी रचनावली भाग 6 - पर्वत की अभिलाषा - पृ.सं - 87
2. माखनलाल चतुर्वेदी रचनावली भाग 6 - पर्वत की अभिलाषा - पृ.सं - 87

यह पर्वतराज वैभवशाली एवं विलासी रहना नहीं चाहता बल्कि अपनी आन्तरिक जीवन शक्ति से सामाजिक मालिन्यों को दूर रखना एवं समाज को सुखी रखने केलिए प्रयत्न निरत है। सेवा और कर्म के रास्ते पर बिना कुछ स्वीकार करते हुए अपने आप को प्रस्तुत करने की चाह ही इस पर्वतराज में है। भारतीय संस्कृति की सबसे बड़ी विशेषता है त्याग या बिना फलेच्छा से कर्मनिष्ठ रहना। कवि ने इस आदर्श को उजागर करते हुए हिमालय को भारतीय जीवन धारा से जुड़ाने का प्रयत्न किया है।

अतः द्विवेदीयुगीन हिन्दी कविता में हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ के स्पष्टिकरण केलिए उसके नैतिक आयामों पर भी विचार किया गया है। जिसमें हिमालय को मानव सहज सद्‌गुणों का भण्डार मानकर उसका मानवीकरण किया है। हिमालय को दृढ़, अविचल, अचल, मौन, तपशील, प्रेम एवं करुणा का संचारक, आदर देनेवाला तथा कर्मनिष्ठ आदि नौतिक विशेषताओं से युक्त बताया गया है।

द्विवेदीयुगीन हिन्दी कविता में हिमालय के राष्ट्रीय संदर्भ

द्विवेदीयुगीन हिन्दी कविता में हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ को उद्‌घाटित करने केलिए उसके राष्ट्रीय संदर्भ पर भी विचार किया गया है। किसी भी राष्ट्र का विकास तभी संभव है जब वह पूर्ण रूप से स्वतन्त्र हो। संस्कृति को आगे बढ़ाने केलिए राष्ट्र का स्वतन्त्र रहना भी अनिवार्य है। द्विवेदी युग के समय भारत अंग्रेज़ों के अधीन में था। भारतीय जनता में स्वतन्त्रता की चाह थी। उस समय समाज में साहित्यकार ही एक ऐसा वर्ग था जो जनता का मानसिक उद्धार कर उसमें देश प्रेम और मातृभक्ति जगा सकता थे। राष्ट्रीय भावना की अभिष्यक्ति द्विवेदीयुगीन हिन्दी कविता की एक प्रमुख प्रवृत्ति है। इस राष्ट्रीय भावना को उजागर करने केलिए कवि गणों ने भारत के गौरव को प्रतिष्ठित करनेवाले उपादान चुने जिनमें एक हिमालय भी रहा था।

द्विवदी युग में हिमालय संबन्धी कविताओं का राष्ट्रीय उद्देश्य - जनता में देश भक्ति का भाव जगाना, देश की एकता एवं अखण्डता को कायम रखना, देश के अतीतकालीन गौरव को उद्घाटित करना, विदेशी आक्रमणकारियों का विरोध करना, अपनी संस्कृति या भाषा के प्रति प्रेम जगाना, देशवासियों को अपने देश तथा उसकी संस्कृति की रक्षा हेतु मर मिटने या बलिदान (आत्मोसर्ग) देने का आह्वान देना रहा है। हिमालय को द्विवेदी युग के अधिकांश कवियों ने राष्ट्रीय संदर्भ को द्योतित करने केलिए आधार बनाया है। जनता से जो कुछ कहना चाहते थे हिमालय के ज़रिए कह देते थे अथात् हिमालय संबन्धी कविताओं के द्वारा जनता को परिस्थितियों से अवगत कराते थे। अंग्रेज़ों के अधीन में आकर भारत की वह उच्च एवं श्रेष्ठ संस्कृति नष्ट होती रही। इस प्रकार पाश्चात्य के पूर्ण प्रभाव को रोकने केलिए कवियों ने भारत के अतीत का दृढ़ संबल लिया। भारत के अतीतकालीन एश्वर्य, वैभव एवं घटनाओं का साक्षी रहनेवाला हिमालय अतीत वैभव को उजागर करने में एक हद तक सहायक रहा। अतः द्विवेदीयुगीन हिन्दी कविता में हिमालय के राष्ट्रीय स्वरूप का निर्धारण इस प्रकार हुआ है-

1. द्विवेदीयुगीन कवियों ने हिमालय को मातृभूमि की स्तुति करने के संदर्भ में लिया था (मातृस्तवन के संदर्भ में हिमालय)
2. द्विवेदीयुगीन कवियों ने हिमालय द्वारा अतीत का गौरव गान करते हुए प्रस्तुत युग के राष्ट्रीय स्वरूप को उजागर किया है।
3. द्विवेदीयुगीन कवियों ने राष्ट्रीय सुरक्षा के उद्बोधक के रूप में हिमालय को अपनी कविताओं का विषय बनाया।
4. द्विवेदीयुगीन कवियों ने हिमालय को राष्ट्ररक्षक माना है जिसने देशवासी एवं सैनिकों को राष्ट्ररक्षार्थ प्राणोत्सर्ग या बलिदान की प्रेरणा दी है।

   द्विवेदीयुगीन कवियों ने हिमालय को राष्ट्र की संस्कृति को गौरवान्वित करने का तथा उसे राष्ट्र की संपत्ति पर स्वयं गर्व करते हुए दिखाया है।

5. द्विवेदीयुग के राष्ट्रीय सांस्कृतिक काव्य धारा के कवियों ने चीन आक्रमण के संदर्भ में युद्ध भूमि या रणक्षेत्र के रूप में हिमालय ने जो भूमिका निभाया है उसकी ओर संकेत कर आगे राष्ट्र की सुरक्षा पर आशंका प्रकट की है।

1. मातृ-भूमि के स्तवन के संदर्भ में हिमालय

मातृ भूमि का स्तवन करते हुए द्विवेदीयुगीन कवियों ने सर्वप्रथम स्वदेश की महिमा को वर्णित किया है। इन्होंने मानव केलिए उसकी जन्मभूमि को सर्वोच्च एवं सर्वोत्कृष्ट सिद्ध किया है, तथा उसके प्राकृतिक वैभव एवं आध्यात्मिक महत्व का गान किया है। स्वदेश व्यक्ति केलिए महान और महत्वपूर्ण होता है। उसका जीवन आद्यंत देश-प्रेम से पूर्ण रहता है क्योंकि जिस राष्ट्र में उसने जन्म लिया, जिसकी मंगलमय क्रोड़ में उसने जीवन के सुखों को अनुभूत किया, जो उसके उन्नत पथ का प्रदर्शक है - वह देश स्वतः ही उसके विशेष अनुराग का पात्र बन जाता है। देश की भौगोलिक विराटता तथा सौन्दर्य प्रत्येक देशवासी के हृदय में प्रेम और उल्लास की सृष्टि करता है। इस प्रकार जन्मभूमि के प्रति रागात्मक भावना के कारण ही वे उसकी सुरक्षा के विधान में प्रयत्नशील रहते हैं। द्विवेदीयुगीन हिन्दी कवियों ने हिमालय को भारत के प्राकृतिक सौन्दर्य का एक उपादान मानते हुए मातृभूमि की स्तुति के संदर्भ में हिमालय तथा उससे जुड़े हुए जितने भी रम्य स्थान है इन सबको मातृभूमि द्वारा प्रदत्त उपहार स्वीकार करते हुए काव्यों का सृजन किया है।

द्विवेदीयुगीन कवि लिखते हैं-

"नीलाम्बर परिधान हरित पट पर सुन्दर है,
सूर्य चन्द्र युग मुकुट मेखला रत्नाकर है।
नदियाँ प्रेम प्रवाह, फूल तारे मण्डन हैं
बन्दी जन खगवृन्द शेष फन सिंहासन है।"[1]

1. हिमालय - महादेवी वर्मा - मैथिलीशरण गुप्त - मातृभूमि - पृ.स - 72

भूमि सदा से पवित्र मानी जाती है, धरती माँ है, हम उसके पुत्र है, वह हमारा लालन - पालन करती है, अपनी अर्वर शक्ति से सबको पालती पोसती है श्रान्त एवं क्लान्त क्षणों में सबको विश्राम देती है।

2. अतीत के गौरव गान के संदर्भ में हिमालय

अतीत का गौरव गान करते हुए द्विवेदीयुगीन कवियों ने भारत के महापुरुषों, दार्शनिक विचारकों, चक्रवर्ती सम्राटों का यशोगान किया है। अतीत ही वर्तमान को ताज़ा करता है। हिमालय रण भूमि बन गया है चीन, पाकिस्तान आदि देशों से आक्रमण की संभावनाएं अधिक हो गई है। हिमालय की रण भूमि की ओर जनता का ध्यान आकृष्ट कराने केलिए कवियों ने भारत भूमि के इतिहास का परिचय कराया है।

बुद्ध एवं गान्धी जैसे महा पुरुषों के कारण भारत विश्व में शान्ति का प्रसार करनेवाला देश रहा है। फिर भी रावण जैसे बलशाली शत्रुओं का सामना करने का साहस भी इसमें रहा है। भारत ने सिकन्दर हूण तथा शकों को परिजित किया था इतिहास इसका इशारा करते हुए बताता है कि भारत का पौरुष अजेय है। प्राचीन वीर योद्धा जैसे महाराणा प्रताप और संग्राम सिंह की वीरता और शूरता को दिखाते हुए बताया है कि हिमालय की धरती पर वे अपने शीश तक को काटने केलिए तैयार हैं। इस देश ने पद्मिनी, लक्ष्मीबाई जैसे सम्मानित नारियों को पाया था।[1] हिमालय को देवभूमि घोषित करते हुए उस पर लड़नेवाले वीर युवकों को अमरत्व प्रदान किया। हिमालय के इस दैवी स्वरूप का स्मरण सैनिकों के बल को दुगुना करता है। जगज्जननी गौरी हिमालय की बेटी है; जिसके आगे हम अपना शीश झुकाते हैं, शंकर का वास स्थान भी यहीं है जिन्हें हम ईश्वर मानते हैं, यहाँ तपस्या करते ऋषियों ने हमें ज्ञान और आशीर्वाद दिया है।[2] इस प्रकार का पावन और पूज्य

1. 'संघर्ष के स्वर' - रण-भेरी - हरिकृष्ण प्रेमी - पृ.सं - 5-6
2. 'संघर्ष के स्वर' हिमालय आज घायल है - पृ.सं - 13-14

हिमालय भारत का अतुलित बख्शीस है। भगवान बुद्ध के चरणों का स्पर्श हिमालय भूमि पर पडा था इसी की गोद से भगीरथ गंगा की धारा भी लाया था। भारत दुर्गा जैसे देवी का देश है, अर्जुन जैसे वीरों ने यही जन्म लिया था। भगवान शंकर ने अपने तीसरे नेत्र से शत्रु का संहार किया था।[1] हिमालय की भूमि इन वीरों एवं महापुरुषों से आज भी शक्तिमान बन कर हमारे सामने खड़ी है। हिमालय की रण भूमि में लड़नेवाले हर एक सैनिक को इन वीरों की याद दिलाते हुए कवियों ने अतीत को पुनः प्रकाशित किया है। इतिहास किसी भी देश के अतीत का दर्पण होता है। जिन चरम मूल्यों की संप्राप्ति केलिए मानव जाती पुराकाल से प्रयत्नशील रही है संस्कृति उसी का परिपाक् है। हिमालय से संबन्धित राष्ट्रीय कविता में अतीत का गौरव गान करते हुए द्विवेदीयुगिन कवियों ने देशवासियों को एक ओर भारत के श्रेष्ठ एवं उच्च संस्कृति का परिचय कराया तो दूसरी ओर आगे भी इसे कायम रखने का आह्वान भी दिया। वास्तव में मानव के वर्तमान की पृष्ठ पीठिका में उसके अतीत की उपलब्धियाँ ही हुआ करती हैं। गुलामी मानसिकता से पीड़ित भारतीय जनता को आज की अधोगति में पड़ी आर्य परम्परा की नयी पीढ़ियों को हिमालय की ओर देखने का कवि आदेश देते हैं। अतीत के महत्व का उद्घाटन करते हुए भारत को संसार का सिरमौर मानते हैं। सारी मनुष्य प्रगतियों का मूल स्थान है आर्ष भारत। आर्ष भारत की चिन्तन प्रणलियों का नेतृत्व करनेवाले महान ऋषि हिमालय की भूमि में बसते हैं। विद्या, कला, चिन्तन-पद्धति का प्रथम स्थान हिमालय है। ईश्वर ने महान लक्ष्यों की पूर्ति यहीं की थी (विषपान कर भगवान शंकर ने भव कल्याण किया, भगीरथ गंगा को धरती पर उतार कर लाया था, भगवान शिव ने अर्जुन को पाशुपतास्त्र देकर अपराजेय बनाया था) परन्तु उस महान परम्परा की कड़ी होने पर भी हम अधोगति में पड़े हैं। उसका कारण यह है कि हम अतीत को भूल

1. 'संघर्ष के स्वर' - रण-भेरी - हरिकृष्ण प्रेमी - पृ.स - 6

गए, वर्तमान विसंगतियों को दूर करने केलिए अतीत से प्रेरणा ग्रहण करना चाहिए। ऐसा करने पर हमारी रुकी हुई सांस्कृतिक धारा आगे बढ़ पाएगी। द्विवेदीयुगीन कवियों ने पौराणिक सांस्कृतिक परिवेश की झांकियों प्रस्तुत कर नई पीढ़ियों को आगे बढ़ने का अवसर दिया है।

"यह पुण्य भूमि प्रसिद्ध है इसके निवासी आर्य है
विद्या, कला, कौशल सबके जो प्रथम आचार्य है
सन्तान उनकी आज यद्यपि हम अधोगति में पड़े
पर चिन्ह उनकी उच्चता के आज भी कुछ हैं खड़े।"[1]

3. राष्ट्रीय सुरक्षा के उद्बोधक के रूप में हिमालय

द्विवेदीयुगीन कविता में उद्बोधन की प्रवृत्ति (राष्ट्रीय जागरण के संदर्भ में) पाई जाती है। अतीत वैभव के चित्रण में कवियों ने भारत की महानता का विराट रूप प्रस्तुत किया और वर्तमान दशा से उस रूप की तुलना की। सुधारात्मक दृष्टिकोण रखते हुए कवियों ने उद्बोधन शैली उपनायी। भारत को प्रगति पथ पर लाने केलिए ज़ोर देते हुए कवियों ने उद्बोधन किया। हिमालय जैसा उपादान भी देश भक्ति के स्वर को उद्बोधित करता है। शत्रु का नाश करनेवाले भारतीय वीरों का उत्साह बढ़ाने के हेतु कविगण लिखते हैं कि भारत का एक-एक कण इन वीरों को समर्पित है। हिमालय की सम्पूर्ण दिशाएं, समुद्र का गर्जन, पृथ्वी, अनन्त आकाश ये सभी वीरों के वसन्त से सम्बन्धित जिज्ञासा प्रकट कर उनके उत्साह का स्वागत कर रहे हैं।

"वीरों का कैसा हो वसन्त?
आ रही हिमालय से पुकार
है उदधि गरजता बार-बार
प्राची, पश्चिम भू नभ अपार
सब पूछ रहे है दिग दिगन्त
वीरों का कैसा हो वसन्त।"[2]

1. 'भारत भारती' - भारत की श्रेष्ठता - मैथिलीशरण गुप्त - पृ.सं - 11
2. 'मुकुल' - वीरों का कैसा हो वसन्त - सुभद्राकुमारी चौहान - पृ.सं - 126

4. राष्ट्ररक्षक तथा सैनिकों को बलिदान बनने की प्रेरणा देने में हिमालय का स्थान

भारत की उत्तरी सीमाओं में खड़ा हिमालय पर्वत एक हद तक उसकी सुरक्षा का भागीदार बनता आया है। अतीत में विदेशी आक्रमणों से हिमालय ने हमें बचाया था लेकिन आज के वैज्ञानिक युग में मानव हिमालय पर अपना अधिकार कायम रख चुका है। भारत के पड़ोसी राज्य पाकिस्तान एवं चीन को यह धरती हमेशा लुभाती है। हिमालय ने सदियों पहले ही हमारी सुरक्षा का भार लिया है। कवि कहते हैं कि–

"यह उसकी संकट बेला है जागो रे असिन्धु भारती
हम पर है दायित्व कि हम सीमाओं में विश्वास भरें
सिर पर कफन बाँधकर कर सर दें-
इतना मीठा प्यार करें।"[1]

हिमालय केवल भारत माता का मुकुट ही नहीं है वह उत्तर का एक सशक्त प्रहरी भी है। कवि आह्वान देते हैं कि अपनी सीमाओं पर विशेषकर उत्तरी सीमा पर हमें विशेष ध्यान रखना चाहिए।

हिमालय की भूमि अपनी अनुपम सौन्दर्य के कारण विदेशीयों को सदैव आकर्षित करती आयी है। यह अनमोल मोती, हिमालय सीमा के पार बसनेवालों के आँखों को लुभाता है। कवि माखनलाल चतुर्वेदी कहते हैं–

"पारे की आँखों से झर पड़ते है यही तरलतल मोती।"[2]

कश्मीर की हरी-हरी मखमल कालीनों की खेतें, फूल एवं फलों से संपन्न बगिया, केशर की क्यारी आदि देखकर विदेशी इसे छीनना चाहता है। किन्तु भारतीय सैनिक आठों

---

1. माखनलाल चतुर्वेदी रचनावली भाग 7 - वह हिमाद्रि - पृ.सं - 221
2. 'मरण-ज्वार' - मेरा है हिमशैल - माखनलाल चतुर्वेदी - पृ.सं - 55

पहर यहाँ पहरा देते हैं। काश्मीर के स्वर्ग समान धरती के राष्ट्रीय महत्व पर कवि विचार करते हैं कि–

"हरे-हरे हैं खेत बिछी हैं मखमल की कालिनें
चाह रहे हैं शत्रु कि हमसे इसको आकर छीनें
किन्तु खड़े सैनिक भारत के ताने अपने सीने।
बुरी नियत से आनेवालों के लोहू को पीने।"[1]

द्विवेतीयुगीन हिन्दी कविता में भारत की उत्तरी सीमाओं पर पहरा देनेवाले सैनिकों या वीर नौ जवानों की स्तुति की गई है। हिमालय की इस युद्ध भूमि में आकर देश केलिए अपने स्वार्थ, सुख-दुःख को त्याग देनेवाले भारतीय वीर आदरणीय है। भारत को वीरों का देश बताते हुए कवियों ने वीर पुरुषों की पुजा की है। हिमालय ही वह भूमि है, जहाँ ये वीर अपना प्राण त्यागकर देश के सपूत बन जाते हैं। *'वीर पूजा'* नामक कविता में भारत के श्री चरणों में अपने आपको समर्पित करने केलिए तैयार वीर जवानों की स्तुति हुई है। इस भूमि की विशेषता (यहाँ की संस्कृति) हर मानव के मन में दूसरों के प्रति प्रेम या दीन दुःखियों के प्रति स्नेह भाव जगाना है। भारत वर्ष के श्री चरणों पर अपने आप को अर्पित करने केलिए तैयार वीर जवानों की पूजा के वक्त हिमालय को ही सबसे आगे आकर अर्ध्य दान देने की अनुमति देते हैं। हिमालय को सबसे आगे खड़ा कराने का उद्देश्य यह रहा कि भारत की उत्तर दिशा में खड़ा रहनेवाला शैलराज भारत भूमि का सिरमौर है।

"अर्ध्य दान केलिए हिमालय आगे आये,
रत्नाकर ये खड़े, धुलों श्री चरण सुहायें।"[2]

---

1. 'संघर्ष के स्वर' - यह मेरा काश्मीर - हरिकृष्ण प्रेमी - पृ.सं - 77
2. हिमालय - महादेवी वर्मा - माखनलाल चतुर्वेदी - वीर पुजा - पृ.सं - 76

कवि हरिकृष्ण प्रेमी सैनिकों को युद्ध भूमि की ओर बढ़ने का आह्वान देते हैं –

"आज देश की जीवन-गति में नया सुनिश्चित आया मोड़।
समर भूमि में शौर्य प्रदर्शित करने की तरणों में हाडा।
लोहा लेने चले शत्रु से, जग की ममता मया छोड़।
हिमगिरि के शिखरों पर गूँजे है प्रचंड तांडव के तोड़।
घाटी-घाटी गूँज उठी है वीरों की हुंकारों से।
धवल हिमालय स्नान कर रहा तप्त रक्त की धारों से।"[1]

भारत ने सदैव वसुधा का कल्याण ही चाहा है। भारत का अतीत एवं वर्तमान उज्वल रहा है भारत को वीरों का देश माननेवाले कवि कहते हैं कि –

"कायर नहीं देश भारत है, नहीं प्रलय से भी भयभीत।
उज्ज्वल इसका वर्तमान है, उज्ज्वल इसका रहा अतीत।
रोक नहीं सकते वीरों को आँधी, वर्षा, ज्वाला, शीत।
भारत के अदम्य पौरुष की निश्चय होगी अंतिम जीत।
ज्वार जोश का नहीं रुकेगा गोलों की बौछारों से।"[2]

भारत के सैनिक प्रलय से भयभीत नहीं, इनकी वीरता को आँधी, वर्षा, ज्वाला, शीत कुछ भी रोक नहीं सकता। ये कायर नहीं बलिक वीर है जो गोलियों के बौछारों का भी सामना करते हैं। हिमालय की महिमा यही रही कि जिन युवकों ने देश रक्षार्थ इन शिखरों पर अपना बलिदान किया वो पीढ़ियों पीढ़ियों बाद भी पहचाने जाते हैं। अनेक साल बीत जाने पर भी लोग इन्हें याद करते हैं। हिमालय के ये शिखर इन्हें अमरत्व प्रदान करते हैं। यहाँ की घाटियाँ, खाइयाँ, पगडंडियाँ, खंदकें आदि इन्हीं वीरों की आवाज़ों से भरे पड़े हैं।

---

1. **'संघर्ष के स्वर' - रक्त-स्नान - हरिकृष्ण प्रेमी - पृ.सं - 24**
2. 'संघर्ष के स्वर' - रक्त स्नान - हरिकृष्ण प्रेमी - पृ.सं - 24

"वह मरा कश्मीर के हिम-शिखर पर जाकर सिपाही,
बिस्त की लाश तेरा और उसका साम्य क्या?
पीढ़ियों पर पीढ़ियाँ उठ आज उसका गान करतीं,
घाटियों पगडंडियाँ से नित नई पहचान करतीं,
खाईयाँ हैं, खंदकें हैं, ज़ोर है, बल है भुजा में
पाँव है मेरे, नई राहें बनाते जा रहे हैं।"[1]

देश की युवा पीढ़ी को आह्वान देते हुए बताते हैं कि हे तरुणों, आप वृषभों के समान मस्तक उठाकर धीरता-पूर्वक आगे बढ़ें और अंग्रेज़ों की गालियों एवं गोलियों का सामना करें। हिमालय से उत्पन्न वैभव, संस्कृति एवं कला की रक्षा केलिए यह देश तरुणों का खून माँगता है।

द्विवेदीयुगीन कवि भारत के वीर जवानों, सैनिकों, राष्ट्र सेवकों को राष्ट्ररक्षार्थ या देश केलिए बलिदान या शहीद होने का आह्वान देने हैं। त्याग का सर्वोच्च रूप ही बलिदान है। हिमालय की भूमि इन शहीदों के कारण और श्रेष्ठ बन जाती है।

"तन से, मन से, धन से, श्रम से भारत का प्राणी प्रत्येक,
दे सहयोग युद्ध में बढ़ कर अविरत, समझ देश को एक।
'नहीं मरण से डरो' कह रहा गीता का विश्वास विवेक।
क्यों न देश के हित बलि हो कर रख ले आज़ादी की टेक।
पनपा करता है आज़ादी का बिरबा बलिदानों द्वारा।"[2]

भारत की राष्ट्रीय एकता को कायम करना चाहता है। हर भारतीय को तन से, मन से, धन से, श्रम से युद्ध के संदर्भ में सहयोग देना चाहिए। देश की आज़ादी केलिए बलिदान दें।

1. माखनलाल चतुर्वेदी रचनावली 6 - झंकार कर दा - पृ.स - ८०७
2. 'संघर्ष के स्वर' - रण-भेरी - हरिकृष्ण प्रेमी - पृ.सं - 8

"जिसका सिर माँ का मस्तक वह ढूँढ रहा मस्तक वाले
उसकेलिए एक - से हैं सब उत्तर या दक्षिण वाले।
कालिदास ने नगाधिराज कह जिसका गौरव गान किया
वह हिमाद्रि अब ज़ोर से हमें पुकार रहा देखो।"[1]

कालिदास जैसे कवि हिमालय को नगों का राजा मानते हैं यादि उसके वैभव, संपन्नता एवं सुन्दर रूप को कायम रखना है तो हरेक भारतीय नागरिक को बलिदान होने केलिए तैयार होना है। हिमालय केवल भारत माता का मुकुट ही नहीं है वह उत्तर का एक सशक्त प्रहरी भी है। कवि कहते हैं कि अपनी सीमाओं पर विशेषकर उत्तरी सीमा पर हमें विशेष ध्यान रखना चाहिए।

चीन आक्रमण के संदर्भ में हिमालय कवि हरिकृष्ण प्रेमी भारत की विजय की कामना करते हैं। हिमालय पर चीन आक्रमण हुआ तब हिमालय की धवल चोटियों रक्त के लाल रंग से रंगी दिखाई देती है।

"भारत का संकल्प अड़ा है रिपु के सम्मुख बन चट्टान।
क्रूर आसुरी बल पर विजयी होगा भारत का बलिदान।[2]

द्विवेदीयुगीन कविता में हिमालय सम्बन्धी राष्ट्रीय कविताओं में विजय का उत्साह नहीं बल्कि बलिदान का उत्साह है। हिमालय की पुकार पर अपना सिर चढ़ा देने का उत्साह इस प्रकार है-

"हिमालय जब पुकारे शीश बो दें, सहस्रों में हमारा सिर पिरो दें।"

तथा

"सीमा ढूँढ रही सिर वाले, बलि पंथी प्रण से मतवाले।"[3]

1. माखनलाल चतुर्वेदी रचनावली - वह हिमाद्रि - पृ.सं - 221
2. 'संघर्ष के स्वर' - रक्त-स्नान - हरिकृष्ण प्रेमी - पृ.सं - 23
3. 'मरण-ज्वार' - सीमा ढूँढ रही - माखनलाल चतुर्वेदी - पृ.सं - 54

चीन आक्रमण पर अपना विरोध प्रकट करते हुए कवि कहते हैं कि–

"हिमगिरि मुकुट कहाता अपना अरे मुकुट पर वार सहोगे,
गंगा जमना माँग रही है बलियाँ क्या इन्कार करोगे?
उठो भुजाओं में अर्जुन का रक्त खौलने दो ए मानी,
बल की बलि की धाराओं का संगम बन जाओ सेनानी।"[1]

हिमालय भारत माता का मुकुट माना गया है इस पर आक्रमण करनेवाले शत्रु को, हराना है। हिमालय से निसृत होकर आनेवाली गंगा-यमुना आदि पवित्र नदियाँ आज शत्रु का रक्त चाहत है।

हिम-शिखरों पर आक्रमण करनेवाले चीन को कवि यह दिखाना चाहता है कि भारत की हिम्मत कभी भी कम नहीं है वह अब भी बलवान ही रहा है। भारतीय वीर सैनिक आज हिम-शिखरों की ओर प्रस्थान करने केलिए तैयार है। कवि हरिकृष्ण प्रेमी कहते हैं-

"आज पर्वतों के शिखरों पर करना है हम को प्रस्थान।
बाधाओं पर विजय प्राप्त करता आया भारत बलवान,
होकर चूर रहेगा निश्चय असुर चीन का भी अभिमान।
संकट के तूफानों में है भारत हिम्मत कभी न हारा।"[2]

घायल हिमालय की चोटियों को देखकर कवियों की वाणी भी गूँज उठती है। कवि वीर सैनिकों को रणक्षेत्र की ओर प्रस्थान करने का आह्वान देते हैं।

"सेतुबंध से काश्मीर तक गौरवमय विस्तृत भू-भाग
ज्वालामुखी समान धधक कर उगलेगा बैरी पर आग।
धवल हिमालय के शिखरों पर खेलेगा लोहू की फाग
कवियों की वाणी गएगी अब उत्तेजक मारू राग
समर-भूमि में चलो 'यहाँ गूँजेगा दिशा-दिशा में नारा।
रण-भेरी बज उठी, हिमालय ने है सहसा हमें पुकारा।"[2]

---

1. माखनलाल चतुर्वेदी रचनावली भाग 7 - आज चीन को मज़ा चखा दें - पृ.सं - 210
2. 'संघर्ष के स्वर' - रण-भेरी - हरिकृष्ण प्रेमी - पृ.सं - 7
3. 'संघर्ष के स्वर' - रण-भेरी - हरिकृष्ण प्रेमी - पृ.सं - 7

भारत की सीमा पर घुस आनेवाले शत्रु का सामना करने केलिए दृढ़ निश्चय एवं शक्ति की ज़रूरत है। कवि भारतीय वीर युवकों को आह्वान करते हैं कि–

"अगर न हिलना चाह रही तो हम में भर निज शक्ति अपार,
टूट पड़े असुरों के दल पर, भूलें करुणा, भूलें प्यार।
हम्हीं भुजाएँ हो माँ तेरी, दृढ़ निश्चयी, शक्ति-भंडार।
हिमगिरि पर भरना है हमको नया रक्त का पारावार।"[1]

इसप्रकार द्विवेदीयुगीन हिन्दी कविता में हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ को उद्घाटित करने केलिए उसके राष्ट्रीय संदर्भ पर भी विचार किया गया है। देश को स्वतन्त्र करने केलिए देश भक्ति की भावना जनता में पैदा करना आवश्यक रहा। इस युग की हिमालय संबन्धी अधिकांश कविताओं में उसका राष्ट्रीय रूप ही उभरकर आता है। इन कविताओं द्वारा कवियों ने मातृभूमि की स्तुति, अतीत के गौरव की पुनप्रतिष्ठा, राष्ट्र रक्षक, सैनिकों एवं देशवासियों केलिए बलिदान की प्रेरणा एवं रण-क्षेत्र हिमालय के राष्ट्रीय महत्व को प्रस्तुत किया है। इन्होंने हिमालय को राष्ट्र की संस्कृति एवं संपत्ति को गौरवान्वित करानेवाला श्रेष्ठ प्रतीक माना है।

द्विवेदीयुगीन हिन्दी कविता में हिमालय सम्बन्धी कविताओं का सृजन एवं उद्देश्य

द्विवेदीयुगीन हिन्दी कविता में हिमालय से सम्बन्धित कविताओं का सृजन कुछ विशेष उद्देश्य से रहा है। हिमालय की खासियत यह है कि जिस दृष्टि से कविगण इसे देखते हैं उस दृष्टि से वह कवियों के सम्मुख प्रकट होता है। हिमालय भक्तों केलिए अतिभक्तिमय एवं दैविक; तपस्वियों केलिए तपस्या, योग एवं साधनास्थली; एकान्त प्रिय लोगों केलिए शान्त वातावरण; बाढ़, झंझावात, भूकम्प, प्रलय एवं भयानक जंगली जानवरों से युक्त वन

1. 'संघर्ष के स्वर' - मुंडों की मालावाली - हरिकृष्ण प्रेमी - पृ.सं - 10

भीरू केलिए भयानक; पुष्पों के सुगन्ध, तरु-लता एवं उद्यानों से युक्त हिमालय प्रेमी-प्रेमिक केलिए रागात्मक वातावरण एवं पहाड़ी शहर पर्यटक एवं यात्रियों केलिए मनोरंजन पैदा करता है।

द्विवेदीयुगीन कवियों ने हिमालय का चित्रण युगीन परिवेश एवं परिस्थितियों के अनुरूप किया है। एक ही युग में होते हुए भी कवियों का हिमालय संबन्धी दृष्टिकोण में अवश्य भिन्नता पाया जाता है। ये कवि हिमालय को प्रकृति का सुन्दर स्थान, राष्ट्र रक्षक, प्रमुख तीर्थ, तपस्थली आदि रूपों में स्वीकार करते हैं। द्विवेदीयुग के समय हिमालय सम्बन्धी कविताओं का सृजन करने का मुख्य उद्देश्य अंग्रेज़ों के गुलाम रहनेवाले भारतीयों को स्वतन्त्र कराना था। इसलिए कवियों ने भारतीय संस्कृति का चिरन्तन साथी हिमालय का शरण लिया था।

द्विवेदीयुगीन कवि मैथिलीशरण गुप्त ने मातृभूमि की वन्दना करते हुए हिमालय की स्तुति की। (मातृभूमि कविता)। '*गन्धमादन*' कविता में हिमालय के श्रेष्ठ पर्वत गन्धमादन को दिखाते हुए हमारी उच्च आध्यात्मिक संस्कृति को संसार के सम्मुख खड़ा किया है। '*भारत की श्रेष्ठता*', '*हिमगीरी के उन्नत ललाट हम*' आदि कविताओं द्वारा कवि ने विदेशियों के चंगुल से मुक्त कराने केलिए अतीत का गौरव गान करके हिमालय के उन्नत शिखरों पर विराजमान हमारी संस्कृति को दिखाया है। भौगोलिक दृष्टि से भारत के उत्तर में स्थित है हिमालय इसलिए दक्षिण भारत के कवियों की तुलना में उत्तर भारत के कवियों ने ही हिमालय सम्बन्धी अनेक कविताओं का सृजन किया है। '*रहे हिमालय तुम हिन्दी के*' कहकर कवियों ने हिमालय को उत्तर भारत के कवियों का उपहार माना है। संक्षेप में मैथिलीशरण गुप्त के हिमालय सम्बन्धी कविताओं के सृजन का मुख्य उद्देश्य भारतीय जनता में देश की स्वतन्त्रता की चाह पैदा कराना था ताकि परतन्त्रता से पूर्व का संपन्न, एश्वर्य से युक्त भारत के पुनः देख सकें।

माखनलाल चतुर्वेदी (राष्ट्रीय सांस्कृतिक कविता) की हिमालय सम्बन्धी कविताओं में राष्ट्रीय भाव प्रखर है। हिमालय को भारत का परम पुरातन पुरुष मानता है। माखनलाल चतुर्वेदी ने हिमालय संबन्धी कविताओं से यही स्पष्ट किया है कि हमारी संस्कृति का मूल स्थान हिमालय पर्वत है लेकिन हमें विवश होकर इस पर्वत पर शस्त्र चलाना पड़ता है जो लोक अपनी ताकत को दिखाकर हम पर हमला करने केलिए आ रहे है हमें अपने प्राण को देकर उसको सिखाना चाहिए कि हमें सब कुछ इस पुण्य शैल के सामने समर्पण करना चाहिए। हिमालय सम्बन्धी कविताओं में राष्ट्रीय एकता एवं सीमा सुरक्षा को याद करानेवाली कविताएं है। *'मेरा है हिम शैल'*, *'वीर पूजा'*, *'हाज़िर है प्राण हमारा'* आदि कविताएं इस कोटि में आ जाती है। चतुर्वेदी हिमालय को साहित्यकारों केलिए प्रेरणादायक मानता है। भारतीय साहित्य एवं सृजनशक्तियों को जगाने का प्रेरणा स्रोत यही हिमालय है।

"नहा नहा भारत की कविता यहीं अपनापा वार रही है
सरोवरों के दर्पण लख कर अपना रूप संवार रही है।"

भारत के कवियों की सृजनशक्ति इन सरोवरों में नहा नहा कर अपने काव्यों को हिमवान को समर्पित करते हैं। हिमालय पर चीन का आक्रमण हुआ था इसके पश्चात् लिखी कविताएं है *'बहने दो बलि पंथी धारा'*, *'आज चीन को मज़ा चखा दें'*। माखनलाल चतुर्वेदी ने हिमालय संबन्धी कविताओं द्वारा भारत की श्रेष्ठ संस्कृति को याद किया। *'गंगा की विदा'* नामक कविता के सृजन दूसरी कविताओं से बिल्कुल भिन्न रहा। हिमालय से निसृत गंगा के धार्मिक, आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक स्वरूप का उद्‌घाटन कर हिमवान को भारतीय संस्कृति का अभिन्न अंग माना है।

सियाराम शरण गुप्त ने *'पूजन'*, *'रजकणं'*, अखंडित आदि कविताओं का सृजन करते हुए हिमालय की महानता के आगे अपने आप को तुच्छ माना है। हिमालय के नैतिक गुणों

को दिखाते हुए कवि जनता से इन्हें अपनाने का आग्रह करते हैं। हिमालय हमारी संस्कृति के उच्च आदर्शों को धारण किया हुआ है, इसी का अनुकरण जनता करें यही कवि की चाह है। हिमालय इनके सामने नमूना बनकर आता है। हरिकृष्ण प्रेमी ने हिमालय सम्बन्धी कविताओं में ऐतिहासिक पात्रों का आश्रय लिया है। इन सबका हिमालय से संबन्ध स्थापित करते हुए कवि दिखाते हैं कि हिमालय रण-भूमि रहा है। आज हिमालय की भूमि घायल होकर भारतीय वीरों को उसकी रक्षा केलिए पुकारते हैं। इनकी कविता में हिमालय की भूमि पर देश केलिए मर मिटनेवाले सैनिकों की स्तुति की गई है।

श्रीधर पाठक एवं रामनरेश त्रिपाठी की कविताओं में हिमालय का प्राकृतिक सौन्दर्य का अंकन हुआ है। सोहनलाल द्विवेदी ने *'हिमाद्रि का आत्मपरिचय'* में हिमालय को स्वयं अपना परिचय करते चित्रित किया है। पौराणिक या अतीत घटनाओं को आधार बनाकर लिखी गयी कविता *'विषपान'* में हिमालय के बदलनेवाले प्राकृतिक परिवेश को चित्रित किया।

निष्कर्ष :

द्विवेदीयुगीन कवियों ने युग युगों से भारत के उत्तर में स्थित हिमालय की स्तुति की है। भारत की ऐतिहासिक घटनाओं का साक्षी रहनेवाला हिमालय द्विवेदी युगीन कवियों केलिए अतीत-गौरव गान का आधार रहा। हिमालय के गन्धमादन श्रेष्ठ तपस्थली, गंगा श्रेष्ठ नदी, काश्मीर, देहरादून, गढ़वाल, मसूरी रमणीय स्थान तथा रजत गिरि कैलास को द्विवेदी युगीन कवियों ने अपनी कविताओं का विषय बनाया है। द्विवेदीयुगीन हिमालय सम्बन्धी कविताओं में हिमालय के राष्ट्रीय स्वरूप को प्रश्रय देकर कवियों ने इसे राष्ट्र रक्षक, राष्ट्र प्रहरी या राष्ट्र का श्रेष्ठ प्रतीक माना है। द्विवेदी युगीन कविता में हिमालय के सांस्कृतिक स्वरूप को उद्‌घाटित करने केलिए उसके भौगोलिक, प्राकृतिक, धार्मिक, आध्यात्मिक, नैतिक एवं राष्ट्रीय संदर्भ को अपनाया है।

तीसरा अध्याय

छायावादी कविता में हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ

छायावादी कविता में हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ

द्विवेदी युग के पश्चात् आधुनिक हिन्दी कविता में जो काव्य-धारा पाई जाती है जिसे छायावाद कहा जाता है, इसका विकास द्विवेदी युग की स्थूलता, इतिवृत्तात्मकता और बौद्धिकता की प्रतिक्रिया के रूप में हुआ। यह भारतीय संस्कृति की जीवन्त परम्परा राष्ट्रीयता की सशक्त आकांक्षा और नवयुग की मानवतावादी चेतना की प्रेरणा से अनुप्राणित एक स्वतन्त्र काव्य-धारा है।

छायावाद युग एवं काव्यगत प्रवृत्तियाँ-एक परिचय

छायावाद का समय प्रथम विश्व युद्ध की समाप्ति और द्वितीय विश्व युद्ध के आरंभ का समय था। छायावाद दो विश्व युद्धों के मध्य की साहित्यिक धारा है। भारत पर विदेशी शासन सत्ता का अधिकार स्थापित हो चुका था। अंग्रेज़ों ने राजनीतिक दृष्टि से हमें दास बनाया था। राजनीति के क्षेत्र में महात्मा गाँधी का अवतरण इस युग की अत्यधिक महत्वपूर्ण घटना है। इस युग में असहयोग आन्दोलन और अवज्ञा आन्दोलन चले, जिन्होंने आगे चलकर ब्रिटिश सरकार की नींव हिला दी। अंग्रेज़ों की दमन नीति एवं नृशंस अत्याचार के बावजूद भारतीय जन-मानस में नयी चेतना सजग हो रही थी।

सांस्कृतिक दृष्टि से ईसाई धर्म का प्रचार, हुआ साथ ही आर्य समाज, ब्रह्मसमाज, थियोसफिकल सोसाईटी आदि का प्रचार का समय था। छायावाद की वास्तविक यात्रा शुरू होती है- सांस्कृतिक नवजागरण से। स्वामी दयानन्द, तिलक, गाँधी, कविन्द्र रवीन्द्र आदि महापुरुषों ने अतीत परम्परा से मूल्यवान् तत्वों को खोज कर नए जीवन के अनुरूप ढालने का प्रयास किया। छायावादी कविता का मूल प्रेरणा स्रोत शूद्ध भारतीय रहा है। यहीं की संस्कृति, दर्शन, भावुकता, कल्पना का निचोड़ छायावादी काव्य में प्रस्तुत हुआ। छायावादी कवि पाश्चात्य रोमांटिज़िसम से प्रभावित थे पाश्चात्य ज्ञान के आलोक को कवियों ने अपने

संस्कारों के साथ रचा-खपा के भारतीय संस्कृति का परिधान पहनाया। छायावाद के सभी कवि भारतीय वेद, उपनिषद, शैव दर्शन, बौद्ध दर्शन से अधिक प्रभावित रहे।

छायावादी प्रमुख कवि और उनकी हिमालय सम्बन्धी कविताएं - एक परिचय

छायावाद के प्रमुख कवियों में जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानन्दन पन्त, सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला और महादेवी वर्मा का प्रमुख स्थान रहा है। प्रसाद ने प्रेम और सौन्दर्य, पन्त ने कोमलता और सूक्ष्म प्रकृति-निरीक्षण, निराला ने पौरुष और महादेवी वर्मा ने वेदनामय वाणी द्वारा तत्कालीन काव्य को सर्वथा नूतन छायावाद का रूप दिया। छायावादी कवि हमारी संस्कृति से सर्वथा परिचित थे। प्रसाद काशी जैसे प्रमुख सांस्कृतिक नगर के निवासी थे जो भारतेन्दु-युग के नवजागरण से परिचित हो गए थे और पंत एवं निराला बार-बार विवेकानन्द, अद्वैत दर्शन एवं कालिदास की ओर मुड़े, महादेवी वर्मा ने तो अपनी निजी व्यथा को औपनिषदिक तत्वज्ञान, बौद्ध दर्शन और निर्गणवाद के संदर्भ में प्रस्तुत किया।

आधुनिक हिन्दी कविता में हिमालय से सम्बन्धित कविताएं सबसे अधिक छायावाद-युग में पायी जाती हैं। द्विवेदीयुगीन कविता से भिन्न होकर छायावादी कविता में हिमालय के प्राकृतिक वातावरण का सूक्ष्म चित्रण हुआ है। उस समय के कवियों में एक प्रकार की पलायनवादी प्रवृत्ति देखी जा सकती हैं। इसी के फलस्वरूप प्रकृति की और पालायन इस युग की कविता में पाया जाता है। पंत के प्रकृति-चित्रण में कल्पना का सहयोग रहा है। छायावादी कवि भारतीय संस्कृति से भली-भाँति परिचित थे, इसलिए भारतीय संस्कृति का अभिन्न अंग हिमालय इनकेलिए विशेष श्रद्धा का पात्र रहा है।

जयशंकर प्रसाद

छायावादी कवि जयशंकर प्रसाद के काव्यों में हिमगिरि के प्रति विशेष आस्था परिलक्षित होती है। प्रसादजी का जन्म और जीवन काशी के शहरीले वातावरण में हुआ था,

जहाँ प्रकृति के सूक्ष्म सौन्दर्य का दर्शन करने का अवसर मिलता था। काशी में गंगा का तट या आस पास के उपवन ही उनकी चेतना में प्रकृति के चित्र भर सके थे।[1] प्रकृति के प्रति उनके मन का आकर्षण हिमालय सम्बन्धी प्रकृति-चित्रण में भी पाया जाता है। प्रसाद के काव्यों में पर्वत को विशेषकर हिमालय को एक भव्य एवं आदरणीय स्थान प्राप्त हुआ है, जो उनके शैवागम संप्रदाय के प्रति विशेष आस्था का द्योतक है।

जयशंकर प्रसाद ने '*स्कन्दगुप्त*' नाटक में "*हिमालय के आँगन में प्रथम किरणों का दे उपहार*"[2] तथा '*चन्द्रगुप्त*' नाटक में "*हिमाद्रि तुंग श्रृंग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती*"[3] आदि राष्ट्रीय विचारधारा को द्योतित करनेवाली पंक्तियाँ लिखकर भारत के इतिहास का साक्षी रहनेवाले हिमालय की प्रशंसा की है। '*भरत*', '*गंगा सागर*' (कानन कुसुम) '*प्रयाण गीत*' आदि कविताएं हिमालय के भौगोलिक परिवेश एवं राष्ट्रीय महत्व को अंकित करनेवाली है।

जयशंकर प्रसाद का '*भरत*' नामक काव्य का आधार महाकवि कालिदास के अभिज्ञान शकुन्तल का सप्तम अंक है। भरत, शकुन्तला, दुष्यन्त, कश्यप आदि ऐतिहासिक पात्रों एवं ऐतिहासिक घटनाओं को चित्रित करते हुए कवि भारत के स्वर्णिम अतीत को वर्तमान में ला खड़ा करता है। पति द्वारा परित्यकत शकुन्तला ने हिमगिरि को अपना अभय स्थान मान लिया था। भारत की पूर्व परम्परा में आनेवाली शकुन्तला एवं दुष्टन्त के पुत्र भरत के वीर पराक्रम का चित्रण हिमालय की पृष्ठभूमि पर किया है। शकुन्तला के पुत्र भरत जिसके नाम पर इस देश का नाम भारत वर्ष पड़ा है इसकी शिक्षा-दीक्षा एवं बचपन हिमालय के अंचल में कश्यप ऋषि के आश्रम में हुआ था। अपने बलशाली भुजदण्डों के बल पर आगे चलकर भरत ने भारत का एकच्छत्र राज्य पहली बार

---

1. 'छायावादी बिम्ब विधान और प्रसाद' डॉ॰ एन. पी. कुट्टन पिल्लै - पृ.सं. 215
2. 'स्कन्दगुप्त' - जयशंकर प्रसाद - पृ.सं - 144
3. 'चन्द्रगुप्त' - जयशंकर प्रसाद पृ.सं 177

स्थापित किया। बालक भरत की वीरता का चित्रण करते हुए कवि कहते हैं कि *"हिमालय के ये उच्च-शिखर गर्व से सीना ताने इसप्रकार खड़े है, मानो भारत के गर्व से गर्वित हो रहे हैं"* । कवि प्रस्तुत कविता में यही दिखाना चाहते हैं कि हिमालय का भौगोलिक एवं प्राकृतिक वातावरण भारत की अनेक ऐतिहासिक घटनाओं का साक्षी रहा है। इस युग में कवि ने इन घटनाओं का चित्रण करते हुए हिमालय के अतीत-कालीन उत्कर्ष को प्रस्तुत युग के जनता के सम्मुख ला कर भारतीय उच्च एवं श्रेष्ठ संस्कृति को उजागर किया है। हिमालय की भूमि पर बालक भरत का सिंह शावक से निडर खेलने के चित्रण कर हिमालय की भूमि को निड़र माना हैं।[1]

छायावादी अन्तिम किन्तु सर्वश्रेष्ठ महाकाव्य *'कामायनी'* का भौगोलिक आधार ही हिमालय है। जयशंकर प्रसाद ने कामायनी केलिए सृष्टि के प्रारंभ से ही कथा का चयन किया है। कामायनी की कथा का आरंभ और अन्त हिमालय की गोद में ही हुआ है। कामायनी में देव-संस्कृति के ध्वंस के उपरान्त मानव सृष्टि के आरम्भ का चित्रण हिमालय के भौगोलिक वातावरण में करते हुए प्रसाद ने इतिहास और कल्पना के मणिकांचन संयोग से आदिकालीन मनुष्य तथा स्त्री के सहयोग से मानव के विकास की कथा कही है।

कामायनी महाकाव्य के 15 सर्गों में से चिन्ता, आशा, श्रद्धा, कर्म, इड़ा, स्वप्न, रहस्य एवं आनन्द सर्गों में हिमालय की सुषमा का वर्णन भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण से हुआ है। कामायनी में प्रसाद ने हिमगिरि के उत्तुंग शिखर[2], शीतल छाया[3], हिमाच्छादित लम्बे-लम्बे देवदार[4], दूर-दूर तक फैला हिमाच्छादन[5], हिमालय के शोभनतम लताकलित शुचि सानु

1. प्रसाद ग्रंथावली 1 - काव्य - कानन कुसुम - भरत - प्रसाद - पृ.सं - 149
2. 'कामायनी' - चिंता सर्ग - प्रसाद - पृ.सं - 1
3. 'कामायनी' चिंता सर्ग - प्रसाद - पृ.सं - 1
4. 'कामायनी' - चिंता सर्ग - प्रसाद - पृ.सं - 1
5. 'कामायनी' - चिंता सर्ग - प्रसाद - पृ.सं - 1

प्रदेश[1], वहाँ का नीरव वातावरण[2], शीतल झरनों की धाराएं[3], शीला-सन्धियाँ[4], अनन्त की गोद[5], गिरि निझरों के जल स्रोतों से स्निग्ध हरियाली[6] आदि का कमनीय चित्रण करते हुए हिमालय की सुन्दर एवं अनुपम छवि का दर्शन कराया है। जिस प्रकार कालिदास ने *'कुमारसंभव'* का आरम्भ देवतात्मा नगाधिराज हिमवान की स्तुति के साथ किया था उसी प्रकार जयशंकर प्रसाद ने कामायनी का आरम्भ देवतात्मा नगाधिराज हिमवान की स्तुति के साथ किया है। प्रसादजी शैव[7] थे और इस कारण हिमगिरि के प्रति उनकी विशेष आस्था रही थी क्योंकि पौराणिक काल से ही यह पर्वत भगवान शंकर का वास स्थान माना गया था। प्रसाद की प्रौढ़तम रचना कामायनी का आरंभ हिमगिरि के वर्णन से होता है। हिमगिरि देवतावाची शब्द है इसलिए महाकाव्य के प्रारंभ में इस शब्द का प्रयोग करते हुए मंगलाचरण की पूर्ति हो जाती है।

"हिमगिरि के उत्तुंग शिखर पर, बैठ शिला की शीतल छाँह,
एक पुरुष, भीगे नयनों से देख रहा था प्रलय प्रवाह
नीचे जल था ऊपर हिम था एक तरल एक सघन
एक तत्व की ही प्रधानता कहो उसे जड़ या चेतन।"[8]

1. 'कामायनी' आशा सर्ग - प्रसाद पृ.सं 9
2. 'कामायनी' आशा सर्ग - प्रसाद - पृ.सं - 9
3. 'कामायनी' आशा सर्ग - प्रसाद - पृ.सं - 9
4. 'कामायनी' आशा सर्ग - प्रसाद - पृ.सं - 9
5. 'कामायनी' - आशा सर्ग - प्रसाद - पृ.सं - 9
6. 'कामायनी' - आशा सर्ग - प्रसाद - पृ.सं 9
7. प्रसादजी के परिवार की दार्शनिक विचार-धारा प्रत्यभिज्ञादर्शन की परम्परा में थी, क्योंकि ये लोग शैवदर्शनों में से काश्मीर के प्रत्यभिज्ञा दर्शन को ही अत्यन्त पुष्ट और प्रबल मानते थे। 'प्रसाद की दार्शनीक चेतना' - डॉ॰ चक्रवर्ती - पृ.सं 18
8. 'कामायनी' - चिन्ता सर्ग - प्रसाद पृ.सं - 1

मनु हिमालय की जिस चोटी पर बैठे थे उस स्थान के ऊपर हिम और नीचे जल बह रहा था। जल गतिशील है, बर्फ ठोस एवं स्थिर या जड़ है। ये दोनों एक ही तत्व के दो रूप है। जड़ या चेतन एक ही मूल ब्रह्म के दो रूप है अर्थात हिमालय रूपी ब्रह्म के दो रूप है हिम और जल (जड़ और चेतन)। हिमगिरि में शिवत्व की ध्वनि है और हिम (जल) उनकी अष्टमुर्तियों में एक है।

कामायनी के हर एक सर्ग में हिमालय का स्वरूप भिन्न-भिन्न रूप धारण करता है। मानव के मानसिक धरातल से हिमालय की तुलना करके कवि ने एक नया रूप प्रदान किया है। *'चिन्ता'* सर्ग में प्रलय के पश्चात् हिमालय की सबसे ऊँची चोटी पर बैठे चिन्ताग्रस्त मनु और बर्फ से आच्छादित हिमालय प्रकृति का चित्रण है। कामायनी जिस हिमगिरि के उत्तुंग शिखर पर आसीन मनु को लेकर प्रारंभ होती है वह मनुष्य व्यक्तित्व के मर्त्यजीवन की विषाक्तता और जड़ता की चरम सीमा का प्रतीक है। अहं एवं अन्धकार से युक्त मनु का मन हिम समान जड़ था। मनु के अहं के नष्ट होने से हिम पिघलकर नवप्रभात का आगमन होता है। *'आशा'* सर्ग में प्रलय की समाप्ति के पश्चात् सूर्य की नई किरणों के स्पर्श से जड़ एवं हिममय प्रकृति का चेतनपूर्ण बनने तथा इसे देखकर मनु में आशा का संचार होने का चित्रण मिलता है। *'श्रद्धा'* सर्ग में प्रलय की भीषणता से बची हुई श्रद्धा को हिमालय पर असहाय होकर घूमते फिरने का चित्रण किया है। *'काम'*, *'वासना'*, *'लज्जा'*, 'कर्म' सर्गों में श्रद्धा एवं मनु का हिमालय क्षेत्र में ग्रहस्थ जीवन बिताने का चित्रण किया है। हमारी संस्कृति में आश्रम व्यवस्था में गृहस्थाश्रम की भी प्रमुखता है। इस प्रकार हिमालय गृहस्थ जीवन का प्रथम स्थान रहा है। इड़ा सर्ग में सर्ग में श्रद्धा को छोड़कर सरस्वती नदी के किनार पहुँचनेवाले मनु सारस्वत प्रदेश के उजड़े नगर को देखकर उन्हें पहचान पाते हैं कि यही देव संस्कृति का केन्द्र था। हिमालय के इसी स्थान पर इन्द्र ने वृतासुर का वध किया था। यहीं

देव-आसुर संघर्ष होने का चित्रण भी है। *'स्वप्न'* सर्ग में मनु द्वारा परित्यिक्त श्रद्धा का हिमालय की गुफ़ा में अकेले रहने का चित्रण है। हिमालय की प्रकृति का समूचा सौन्दर्य उसे दुःख देता है। मनु एवं इड़ा द्वारा सारस्वत नगर बसाना एवं इड़ा को पाने के उद्यम में भगवान शंकर के बाण से मनु का मूर्छित होना आदि का चित्रण कर कवि ने हिमालय के सबसे पहले देवताओं का निवास स्थान होने का संकेत किया है। कैलास पर्वत को सबसे पावन माना जाता है। सारस्वतवासी एवं मनु के संघर्ष के बाद मनु श्रद्धा से कहते हैं कि *"मुझे शिव के पावन चरणों तक ले चलो जिससे मेरे सभी पाप एवं पुण्य तीव्रज्वाला में जलकर पवित्र बन जाएँ, संपूर्ण असत्य ज्ञान नष्ट हो जाए, और अखण्ड आनन्द को प्राप्त किया जाय।"* मनु ने केलाशवासी शिव के दर्शन केलिए तीव्र आग्रह किया तो श्रद्धा उन्हें लेकर हिमालय पर चली जाती है। हिमालय के अंचल में पहुँचकर उन्हें नटराज नृत्य करते हुए दिखाई देते हैं उनकी सांसारिक भावनाएं नष्ट हो जाती हैं। अन्तिम सर्ग आनन्द में इड़ा, मानव एवं सारस्वत निवासियों का श्रद्धा एवं मनु के दर्शन केलिए कैलाश पर जाने तथा हिमालय के दिव्य और अलौकिक दृश्य देखकर सभी यात्रियों का आनन्द विभारे होने का चित्रण है।

कामायनी में हिमालय सबसे प्रमुख तीर्थ के रूप में चित्रित हुआ है। प्रसाद ने कामायनी के आरंभ में हिमालय के वातावरण में शमशानवाली शून्यता या जड़ता चित्रित की थी लेकिन अन्तिम सर्ग में जड़रूपी हिम का रश्मिमण्डित रूप में परिवर्तन कराया है।

सुमित्रानन्दन पन्त

पन्त 1918 में हिन्दी काव्य क्षेत्र में *'वीणा'* को लेकर प्रविष्ट हुए थे जिनके प्रारंभ की कविताओं में छायावादी, *'युगान्त'* (1936) से लेकर जो कविताएँ लिखी वे प्रगतिवादी और *'स्वर्ण किरण'* से लेकर लिखी कविताओं में अरविन्द दर्शन का प्रभाव है। छायावादी कवियों में सुमित्रानन्दन पन्त ने ही हिमालय से सम्बन्धित सबसे अधिक कविताएं लिखी है।

पन्त का जन्म प्रकृति की कीड़ा भूमि कूर्माचल प्रदेश में (अल्मोड़ा जिले के पर्वतीय ग्राम कौसानी में)[1] हुआ था और जन्म लेते ही मातृ अंचल की अभय छाया से वंचित कवि को प्रकृति ने आश्रय दिया। हिमागिरि के क्रोड़ में बसी कूर्मांचल पहाड़ की नीरव मूर्ति, शिलाएं, शैशव में ही उन्हें मन्त्राभिभूत करती थीं। नभ के नील रहस्य को चीरता हुआ उत्तुगं हिमालय अपनी वैभव गरिमा से उन्हें अभिभूत करता रहा।[2] नगाधीराज हिमालय ने जहाँ अपनी मौन भांगीमा से बालक पन्त के हृदय को आश्चर्यचकित कर दिया, वहाँ मन को आत्मविस्मृत भी कर दिया।[3] हिमालय की पर्वतश्रेणियों का सौन्दर्यमय, पावन एवं विराग का मूर्तिमय रूप एक ओर कवि को भावुक बनाता है तो दूसरी ओर चिन्तक। कूर्मांचल के प्रकृति निरीक्षण से उन्हें काव्य प्रेरणा मिली।

स्वयं पन्त ने कौसानी[4] के प्रति अपने लगाव को इस तरह स्पष्ट किया – *"मेरी माँ की मृत्यु मेरे जन्म के छह-सात घण्टे के भीतर ही हो गई थी, पर कौसानी की गोद मुझे माँ की गोद से भी अधिक प्यारी रही है।"*[5] पंत के बचपन की कल्पना में हिमालय के प्रति

---

1. कौसानी अल्मोड़ा से 32 मील उत्तर की ओर है और समुद्र की सतह से लगभग सात हज़ार फीट की ऊँचाई पर बसा हुआ है। यहाँ पर देवदार - चीड़ और बाँझ (ओक) के वृक्ष प्रचुरता से पाए जाते हैं। इसके उत्तर में नगाधिराज हिमालय की गगनचुम्बी पर्वत-श्रेणियाँ सुशोभित हैं।
   पन्त का काव्य (छायावादी काव्य की पृष्ठभूमि पर पन्त के काव्य का अनुशीलन)-
   डॉ० प्रेमलता बाफना - पृ.सं - 119
2. वाणी - आत्मिका - पंत - पृ.सं - 111
3. 'साठ वर्ष एक रेखाकंन' - पंत - पृ.सं - 11
4. पन्त ने प्रकृति - धात्रि के संबन्ध में ऐसा ही उद्गार 'मेरा रचना-काल' शीर्षक निबन्ध में व्यक्त किया है "प्रकृति मुझ मातृहीन बालक को कवि जीवन केलिए मेरे बिना जाने ही जैसे तैयार करने लगी थी। मेरे हृदय में वह अपनी मीठी, स्वप्नों से भरी हुई चुप्पी अंकित कर चुकी थी जो पीछे मेरे भीतर अस्फुट तुतले स्वर में बज उठी। फल यह हुआ कि प्रकृति कवि केलिए मातृ भावना का आद्य-बिम्ब (Primortial Image) बन गया।"
   'गद्यपथ' - पन्त - पृ.सं - 115
5. 'साठ वर्ष एक रेखांकन' - पंत - पृ.सं - 14

एक गहरे आकर्षण का कारण यह था कि – हिमालय में ही शिव का वास स्थान रहा था। पंत की कल्पना दृष्टि में हिमाद्रि के आरोहण के प्रति कौसानी का समर्पण मुग्ध प्रकृति का पुरुष के प्रति समर्पण है। हिम की चोटियों के विस्मय भरे सौन्दर्य ने उन्हें रहस्य की ओर आकर्षित किया है। सदैव लगता है कि पर्वत प्रदेश के वासी होने के कारण शिव हमारे ही है, हमारे ही घर के[1] पन्त ने सदैव ही हिमालय की चोटियों में शिव का सान्निध्य पाया है।

सुमित्रानन्दन पन्त ने *'प्रकृति में मेरा बचपन'* शीषर्क निबन्ध में हिमालय के सम्बन्ध में अपना भावोद्गार इस प्रकार व्यक्त किया है – "मेरा जन्म प्रकृति की गोद में हुआ। ....प्रकृति की गोद भी साधारण नहीं, विराट्, शुभ्र, शान्त हिमालय का सान्निध्य। हिमालय स्वयं ही एक महान धर्मग्रंथ ... एक बृहत काव्य है। ....हिमालय को देखकर मुझे सदैव ही अपने जीवन में प्रेरणा मिलती रही है। मेरेलिए एक सजीव वरेण्य गुरु की तरह एवं स्नेही अभिभावक की तरह रहा है।"[2]

इस प्रकार हिमालय का सौन्दर्य, भव्यता तथा उसके हिमशिखरों की आदिकालीन पावनता ने सुमित्रानन्दन पन्त के स्वभाव (व्यक्तित्व) और कृतित्व की, अन्य सभी की तुलना में सबसे अधिक प्रभावित किया है। पंत बहुत कुछ अंशों में पहाड़ी कवि है केवल जन्म स्थान की दृष्टि से नहीं, काव्यगत कथ्य की दृष्टि से भी। कारण पर्वत के बिना पंत के प्रकृति काव्य की ऊर्ध्वता का अनुमान नहीं किया जा सकता। पन्त को पहाड़ों के सम्राट हिमालय ने अपनी गोद में पाल पोसकर बड़ा किया है। इसलिए पंत की कविताओं में प्रायः देवतात्मा हिमालय की उर्ध्वता से संबद्ध उपचेतन स्मृतियाँ मिलती है।

हिमालय की प्रकृति ने पंत के व्यक्तित्व निर्माण में विशेष भूमिका निभाई है। कूर्मांचल की प्रकृति की ही ऊर्ध्व दृष्टि वह हिमालय है जिसने पंत के समस्त व्यक्तित्व को

1. 'सुमित्रानन्दन पन्त जीवन और साहित्य' - शान्ति जोशी पृ.सं - 16
2. 'कला और संस्कृति' - सुमित्रानन्दन - पन्त - पृ.सं - 81

लोह संकल्प से युक्त करने के साथ ही प्रणत बनाया है। पंत का संकल्प और स्वाभिमान हिमालय के समान तेजस्वी और ऊर्ध्वमुखी है। वे हिमाद्रि को अपना शिक्षक मानते हैं, जिसने उनके अन्तर को संयमित बनाकर अन्तर और बाह्य में साम्य स्थापित किया है। हिमाद्रि की स्तुति में वे कहते हैं कि हिमाद्रि ने अपने विश्वकल्याणकारी महान दायित्व का सदैव निर्वाह किया है। हिमालय की महानता के सम्बन्ध में कवि पन्त लिखते हैं कि "*यह धरती नष्ट हो गई होती यदि हिमाद्रि अपनी अपरिमित स्वर्गिक गरिमा को भू पर नहीं बरसाते रहते। उसने शिखर - शिखर ऊपर उठकर मानव आत्मा को ज्योतित किया है। यह वसुन्धरा स्वर्ग खण्ड के समान हिमालय की गरिमा से मण्डित है। हिमाद्रि आत्मानुभूति में लीन धनीभूत अध्यात्म तत्व सा असीम है।*"[1]

हिमालय ने पन्त को कल्पना प्रिय बनाया। हिम की चोटियाँ के विस्मय भरे सौन्दर्य ने पन्त को रहस्य की ओर आकर्षित किया। कवि ने अपनी कल्पना के द्वारा हिमालय का ऐसा भव्य चित्र खींचा कि - हिमालय की ऊँची चमकीली चोटियाँ रहस्य भरे शिखरों की तरह उठती प्रतीत होती जिन पर टिका निर्मल आकाश निःस्वर नील पंखी पक्षी की तरह फैलाए महाकाश में उड़कर लीन होने केलिए प्रस्तुत लगता।

बचपन में हिमालय के प्रति कवि का आकर्षण सरल आनन्द तथा अद्वितीय सौन्दर्य का था। कवि की बालचेतना हिमाद्रि में केन्द्रित होकर आनन्दातिरेक से तरंगित हो जाती थी। हिमालय का आकाशचुम्बी सौन्दर्य पन्त के हृदय में एक महान सन्देश, एक विराट् व्यापक आनन्द, एक स्वर्गोन्मुखी आदर्श तथा तपःपूत पवित्रता की भाँति प्रतिष्ठित हो गया है। हिमालय ने उसके अंचल के वासी को वह पवित्र आशीर्वाद दिया, जिसने उसे निःसीम का एकांतिक उपासक बनाकर व्यक्ति-समाज, श्रेय-पेय, अन्तर-बाहय, स्वांत बहुजन, कला-

1. 'सुमित्रानन्दन पन्त जीवन और साहित्य' - शांति जोशी - पृ.सं - 17

जीवन, आदर्श और यथार्थ को एक दूसरे से मिला दिया है। अपने जीवन को प्रभावित करनेवाले हिमालय को कवि अवश्य अपनी कविताओं में स्थान देते हैं।

पन्त की कल्पना को प्रेरित करनेवाले विभिन्न प्राकृतिक दृश्यों में हिमालय पर्वत की विशालता और भव्यता अपना विशेष महत्व रखती है। काव्य जीवन के प्रारंभ में पर्वतराज के विराट् रूप के प्रति कवि को जो अनुभूति हुई, वह हमेशा केलिए कवि हृदय पर अंकित हो गई। कवि अपने जीवन में जहाँ भी पर्वत का दृश्य देखता अतीत की स्मृति उनकी भावनाओं को आन्दोलित कर देता और हिमालय के प्रति कुछ लिखने को कवि व्यस्त हो उठता।

हिमालय को अपनी अधिकांश कविताओं का विषय बनानेवाले कवि की हिमालय संबन्धी प्रमुख कविताएं है - '*हिमाद्रि-स्तवन*', (गंधवीथी-काव्य संग्रह); '*हिमाद्रि और समुद्र*', '*पर्वत प्रदेश में पावस*' (अभिषेकता-काव्य संग्रह), '*हिम अंचल*' (शंख-ध्वनि-काव्य संग्रह); '*हिमाद्रि*' (तारापथ-काव्य संग्रह); '*प्रकृति : स्मृति के वातायन से*', '*पहाड़ प्रान्त : एक स्मृति*' (आत्मिका-काव्य संग्रह) एवं '*सौवर्ण*' (काव्य रूपक)। हिमालय से संबन्धित सबसे बड़ी रचना मद्रास में लिखी गई, जहाँ समुद्र के तट पर हिमालय की विराट् सौन्दर्य की शुभ्र स्मृति मन-चक्षुओं के सामने निखर उठी और किशोर जीवन की अनेक मधुर स्मृतियों एवं अनुभवों में पुंजीभूत प्रवासी में '*हिमाद्रि*' तथा '*हिमाद्रि और समुद्र*' रचनाएं मूर्त हो उठी।[1] स्वर्ण किरण काव्य संग्रह की '*हिमाद्रि*' तथा '*हिमाद्रि और समुद्र*' आदि कविताएं कवि वे पर्वतराज के प्रति अपने अतीतकालीन भाव-स्वप्नों को चित्रित करने हेतु लिखा है।

'*हिमाद्रि-स्तवन*' नामक कविता में हिमालय का जय जयकार कर कवि ने उसकी स्तुति की है। कवि हिमालय को पुण्य शिखर, देव निलय, संस्कृति का शुचिसंचय स्थान

1. 'सुमित्रानन्द पन्त मुल्यांकन' इन्द्रनाथ मदान

मानते हैं। हिमालय को *'मुक्ति द्वार'* तथा *'अमर स्वर्ग भाल'* कहकर उसकी आध्यात्मिक महिमा को उजागर करते हैं।[1]

'हिमाद्रि और समुद्र' कविता में हिमालय एवं सागर की तुलना आध्यात्मिक दृष्टि से की है। हिमालय में तपस्वी के समान गुणों को देखकर कवि उसे *'निर्विकल्प चेतना श्रृंग'* कह देते हैं। हिमालय को आनन्दमय या स्वर्ग माननेवाले कवि सागर को दुःखमय या विषयासक्तियों से ग्रस्त मानते हैं। हिमालय की ऊँचाई और सागर की गहराई पर विचार करनेवाले कवि दोनों के पारस्परिक संबन्ध को भी दिखाते हैं।[2]

'पर्वत प्रदेश में पावस' ऋतु नामक कविता में हिमालय के पर्वतीय प्रदेश में होनेवाले प्राकृतिक परिवर्तन दिखाते हुए इसका मानवीकरण किया है। इस गिरि के गौरव को गानेवाली नदियाँ, मेखलाकार पर्वत का नीचे के तालाब में अपना रूप निखारना तथा गिरिवर के उर से उठनेवाली उच्चाकांक्षाओं को यहाँ के तरुओं के साथ उपमित कर कवि इसमें काल्पनिकता का अंश जोड़ते हैं।[3]

'हिम-अंचल' नामक कविता में हिमालय के प्राकृतिक वातावरण में ब्रह्मा, भगवान कृष्ण एवं महादेव का आभास पाते हैं। कवि इसके आध्यात्मिक स्वरूप के सम्बन्ध कहते हैं–

> *"सेतु सा वह स्वर्ग भू के मध्य*
> *शब्द-रहित सुहाता!"*[4]

1. 'गन्धवीथी' - हिमाद्रि-स्तवन - सुमित्रानन्दन पन्त - पृ.सं 219
2. 'चिदम्बरा' - हिमाद्रि और समुद्र - सुमित्रानन्दन - पन्त पृ.सं - 113
3. 'चिदम्बरा' - पर्वत प्रदेश मे पावस ऋतु - पृ.सं - 77
4. 'चित्रांगदा' - हिम अंचल - सुमित्रानन्दन पन्त - पृ.सं - 171

`हिमाद्रि'* - इस कविता में आरम्भ में ही हिमालय का कवि के जीवन में स्थान का अंकन करते हुए, हिमालय के प्राकृतिक सौन्दर्य एवं अनुपम छटा को दिखाया है। कालिदास ने हिमालय को *`पृथ्वी का मानदंड' माना है जबकि पंत इसे *`अखण्ड भू का मानदंड'* मानते हैं। धरती को स्वर्ग तुल्य बनानेवाला हिमालय कवि केलिए भी प्रियंकर है।[1]

`प्रकृति : स्मृति के वातायन से' कविता में पन्त ने अपने जीवन पर प्रकृति के प्रभाव को स्पष्ट करते हुए हिमालय के पर्वतीय वन प्रकृति को अप्सरा समान सुन्दर माना है, मातृ अंचल से वंछित कवि को हिमालय की शुभ्र श्रृंगों ने आश्रय दिया। कवि ने शिक्षारम्भ के समय को अपने जीवन के सबसे सुन्दर समय माना है पाठों के अध्ययन से भी हिमालय की प्रकृति में रुचि रही। हिमालय के फेनिल गिरि स्रोतों के कलरव में, वन क्षितिजों के मुकुलों में, उचकते, चौकड़ी भरते भूरे गिरि हिरणों में गुल्मों एवं झाड़ियों में फुदकते शिशु खरहों का दृश्य ही कवि को प्रिय रहा। जहाँ कहीं भी हो हिमालय के मौन शिखर ही कवि को आकर्षित करते थे।[2]

इन कविताओं के अतिरिक्त *`काश्मीर'* (शंख-ध्वानि); *`कूर्माचल के प्रति'* (स्वर्णिम रथचक्र); *`अल्मोड़े का वसन्त'*, *`रिक्त-मौन'* (गन्धवीथी) आदि कविताएं हिमालय से सम्बन्धित पंत की कविताएं हैं।

सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला

छायावादी कालजयी कवि निराला प्रगति के प्रेरक, राष्ट्रवादी, अन्तर्राष्ट्रवादी एवं मानवतावादी कवि थे। निराला ने *`भारती वन्दना'* कविता में हिमालय को *`भारत माता का*

1. `तारापथ' - हिमाद्रि - सुमित्रानन्दन पन्त - पृ.सं - 105
2. `गन्धवीथी' - प्रकृति स्मृति के वातायन से - पंत - 49

शुभ्र मुकुट' माना है साथ ही हिमालय से निसृत गंगा को *'गले का हार' ।* अनेक ऋषियों से संपन्न हिमालय की पावन भूमि सदैव प्रणव ओंकार - ध्वनि को गूंजित कराते हुए कवि ने हिमालय की तपोवनी संस्कृति या आध्यात्मिक स्वरूप का उद्घाटन किया है।[1] निराला ने *'तुम ओर मैं'* कविता में हिमालय को परमात्मा एवं सुरसरिता को आत्मा मानकर दोनों के अटूट सम्बन्ध को स्थापित किया है। निराला की कविताएं हिमालय के सांस्कृतिक, राष्ट्रीय एवं आध्यात्मिक महत्व को द्योतित करनेवाली हैं।[2] कवि निराला 'कैलाश में शरत्' नामक कविता में स्वामी विवेकानन्द के साथ की गयी कैलाश की काल्पनिक यात्रा का विवरण देते हैं।[3] *"कैलाश में शरत्"* कविता में कवि विवेकानन्द, शिष्यवर्ग, राजपुरुष और भारत के कुछ नागरिकों के साथ संसार के भ्रमण केलिए चले थे। अफ़गानिस्तान, मंगोलिया आदि देशों का भ्रमण करके अन्त में कैलास पर्वत पर पहुँच गए। हिमालय के अन्य पर्वत श्रृंग जैसे- एवरेस्ट, गौरी-शंकर, काञ्चनजंगा आदि संसार के पवित्रस्थानों के दर्शन कर अन्त में पदतल में स्थित राक्षस ताल में पहुँच जाते हैं। निराला की ये तीनों कविताएं हिमालय से संबन्धित हैं।

महादेवी वर्मा

छायावादी कवयित्रि महादेवी वर्मा भारतीय संस्कृति और प्राकृतिक परिवेश से गहरे रूप से प्रभावित रही थी। हिमालय का हमारी संस्कृति से गहरा सम्बन्ध रहा है। किसी भी मानव समूह का राष्ट्र की संस्कृति से परिचित होने केलिए वहाँ के प्राकृतिक परिवेश से अवगत होना अनिवार्य है।

---

1. 'अपरा' - भारती-वन्दना - निराला - पृ.सं - 11
2. 'अपरा' - तुम और मैं - निराला - पृ.सं - 68
3. 'नये पत्ते' - कैलाश में शरत् - निराला - पृ.सं - 98

महादेवी वर्मा हिमालय को भारतीय संस्कृति का एक उच्च प्रतीक अवश्य स्वीकार करती है। संस्कृति शब्द को व्याख्यायित करने केलिए महादेवी वर्मा ने हिमालय के समान श्रेष्ठ एवं उन्नत पर्वत को चुना है - वे लिखती हैं कि *"जिस प्रकार ऊँचे पर्वत-शिखर पर जल, हिम बन कर शिला-खण्ड़ों के साथ पाषाण रूप में अनन्त काल तक स्थिर भी रह सकता है और अपनी तरलता के साथ प्रपात और प्रपात से बनकर निरन्तर प्रवाहित भी होता रह सकता है, इसी प्रकार मानव संस्कृति को विकास के एक बिन्दु पर चिर निस्पन्दता भी प्राप्त हो सकती है और अनवरत प्रवाहशीलता भी।"*[1]

भारत के भौगोलिक एवं प्राकृतिक परिवेश का निर्धारण करते हुए उसमें हिमालय के महत्वपूर्ण स्थान का अंकन हुआ है। भारत एक विशाल एवं विस्तृत भूमि भाग है। अनेक प्रकार की भौगोलिक स्थिति, जलवायु, प्राकृतिक सौन्दर्य, उर्वर क्षेत्र, वनस्पति वृक्ष, वन-उपवन तथा पशु-पक्षी इसमें पाए जाते हैं। इसमें रहनेवाले लोग, उनका रहन-सहन उनकी बोलियाँ भी प्रकृति की तरह विविध हैं, किन्तु इन समस्त बाह्य विभेदों के रहते हुए भी सम्पूर्ण देश एक व्यापक तथा गहरी एकता के सुदृढ़ सूत्र में बंधा हुआ है।[2] उत्तर में नगाधिराज हिमालय और दक्षिण में हिन्द महासागर के कारण प्रायः सारे देश में एक ही प्रकार की ऋतु-पद्धति का उन्मेष पाया जाता है। आदि काल से पर्वतों में हिमालय और सागर में हिन्द महासागर का अपना एक अलग गौरव रहा है। इस देश केलिए यह पर्वत और सागर अक्षय वरदान हैं। ग्रीष्म ऋतु में सागर से वाष्प के बादल उठते हैं और हिमालय की ओर यात्रा प्रारंभ करते हैं। अपनी गगनचुम्बी चोटियों से हिमालय उन्हें रोक लेता है और

1. 'संकल्पिता' महादेवी वर्मा - पृ.सं - 3
2. 'महादेवी वर्मा के श्रेष्ठ गीत' - सांस्कृतिक पृष्ठभूमि - गंगा प्रसाद पाण्डेय - पृ.सं - 10
   "संस्कृति शब्द से हमें जिसका बोध होता है वह वस्तुतः ऐसी जीवन पद्धति है जो एक विशेष प्राकृतिक परिवेश संभव कर देती है और फिर दोनों परिवेशों की संगति में स्वयं अविष्कृत होती रहती है।"

कहीं बाहर नहीं जाने देता। हिमालय की इन चोटियों से टकराकर उन बादलों में से कुछ इस देश के सम्पूर्ण भूमि भाग को अपनी वर्षा से स्निग्ध और संसिक्त कर देते हैं और कुछ तुषार रूप में रूपान्तरित होकर हिमालय में ही जम जाते हैं, जो ग्रीष्म ऋतु में पिघलकर सरिताओं की सरस धाराओं के रूप में धरती की व्यास बुझाते हुए पुनः सागर में पहुँच जाते हैं। सागर और हिमालय का एक दूसरे पर जल सिंचन की निरन्तर और अबाध यह केलि-क्रीड़ा सारे देश में मूसलधार वर्षा और उसका अनुसरण करती हुई अन्य ऋतुओं का नियमित कारण बनती है।[1]

भारत के प्राकृतिक परिवेश में एवं ऋतु निर्धारण में हिमालय के स्थान को अंकित करते हुए कवयित्री ने हिमालय का भारत की सांस्कृतिक पृष्ठ-भूमि से नाता जोड़ा है। महादेवी वर्मा ने हिमालय से सम्बन्धित चार प्रमुख कविताएं लिखी हैं। हर एक कविता में हिमालय का भिन्न-भिन्न स्वरूप रहा है। '*सान्ध्य गीत*' काव्य-संग्रह में '*हे चिर महान*' नामक कविता में महादेवी वर्मा ने हिमालय के साथ तादात्म्य ही नहीं, समात्म भाव की स्थापना भी की है। इस प्रकार हिमालय की प्रकृति से एकसूत्रता तथा एकात्मकता की भावानुभूति के द्वारा कवयित्री ने विश्व व्यापी भाव चेतना के साथ अपनी अध्यात्मवृत्ति भाव चेतना का सम्बन्ध निश्चित करते हुए अपनी अध्यात्मवृत्ति का ही प्रकाशन किया है। हिमालय कवयित्रि केलिए कोई बाह्य सत्ता, प्रतीक या अलंकरण मात्र नहीं है, वरन् उसकी भावना के साथ गतिशील होनेवाली अविच्छेद्य संगिनी और सहचरी है। हिमालय के रूप वर्णन और चित्रण से उसके सौन्दर्य बोध की व्यापकता का आभास सहज ही मिल जाता है।[2] हिमालय एवं महादेवी वर्मा में एक ही प्रकार की मानसिक एकता (अध्यात्म वृत्ति) है। गंगा प्रसाद पाण्डेय ने '*महादेवी*

1. 'महादेवी वर्मा के श्रेष्ठ गीत' सांस्कृतिक पृष्ठभूमि - गंगा प्रसाद पाण्डेय - पृ.सं - 10
2. 'महादेवी वर्मा के श्रेष्ठ गीत' गंगा प्रसाद पाण्डेय -पृ.सं - 10

के श्रेष्ठ गीत' नामक पुस्तक में प्रस्तुत कविता के सम्बन्ध में अपना मत व्यक्त करते हुए लिखा है कि *"हिमालय के प्रति महादेवी जी के भावोद्‌गार दृश्य और दृष्टा की जिस अभेद भावना और सहज संपृक्ति का व्याख्यान करते हैं, वह सौन्दर्य का चरम आदर्श ही नहीं, स्वयं कवयित्रि के आत्मसाक्षात्कार का प्रत्यक्ष प्रमाण भी है।"*[1]

'दीपशिखा' काव्य-संग्रह के *'तू भू के प्राणों का शतदल'* नामक कविता में महादेवी वर्मा ने हिमालय को भूमि के सबसे सुन्दर शतदल या श्वेत कमल माना है। हिमालय की धवलिमा की तुलना दूध, हीरक तथा रज के साथ की गयी है। हिमालय की शुभ्रता को देखकर कवयित्रि को लगता है कि वह चाँदनी में निर्मित है या चाँदी के रंगों में ढला हुआ है। हिमालय का एक-एक शिखर एक-एक दल के समान झलमलाता है। इसलिए महादेवी वर्मा ने हिमालय की तुलना श्वेत कमल के साथ किया। हिमालय के रंग की तुलना प्रकृति की रमणीय वस्तुओं से करते हुए कवियत्री ने हिमालय को धरती का एक सुन्दर पुष्पोद्यान माना है।

"तू भू के प्राणों का शतदल!
सिर क्षीर फेन हीरक रज से
जो हुए चाँदनी में निर्मित
पारद की रेखाओं में चिर
चांदी के रंगों से चित्रित
खुल रहे दलों पर दल झलमल!"[2]

महादेवी वर्मा का नवीन काव्य-संकलन *'परिधि'* में *'वेष धरे'* नामक कविता में हिमालय के आकाश की नीलिमा, मेघ, धूप का पीलापन, वंशी समान हवा का बहना यह सब

1. 'महादेवी वर्मा के श्रेष्ठ गीत' - गंगा प्रसाद पाण्डेय - पृ.सं - 11
2. 'दीपाशिखा' - तू भू के प्राणों का शतदल - महादेवी वर्मा - पृ.सं - 141

देखकर कवयित्रि ने हिमालय को स्वयं भगवान कृष्ण माना है।[1] इसी संकलन के *'देश गीत'* नामक कविता में हिमालय को भारत माता के शीश पर शोभित शतदल का पुष्प और गंगा-यमुना आदि नदियों को नीलम मोती की माला के साथ तुलना की है। जैसे–

"अनुरागमयी वरदानमयी
भारत जननी भारत माता!
मस्तक पर शोभित शतदल सा
यह हिमगिरि है, शोभा पाता
नीलम मोती की माला सा
गंगा-यमुना जल लहराता!"[2]

हिमालय प्राकृतिक सौन्दर्य से भारत का स्वर्ग है और भारत जैसे देश केलिए हिमालय का योग दान अनन्य रहा है इस बात से अवगत कवयित्रि ने हिमालय को भारतीय जनता के सम्मुख लाकर खड़ा किया। हिमालय से संबन्धित अनेक कविताएं पूर्ववर्ती एवं परवर्ती युगों में हुआ है फिर भी महादेवी वर्मा ने ही देश के हितार्थ 1963 में *'हिमालय'*[3] शीर्षक संकलन संपादित किया था। सन् 1962 में चीन ने भारत पर आक्रमण जब किया तब लोगों को देश की सुरक्षा की ओर अवगत कराने के उद्देश्य से हिमालय के सम्बन्ध में लिखी हुई प्रमुख कवियों की कविताओं का संकलन है *'हिमालय'*। महादेवी वर्मा की सौन्दर्यानुभूति का आधार प्रकृति है। अनन्त के अपूर्व रूप सौन्दर्य के अन्वेषण में कवयित्रि हिमालय

1. 'परिधि' - वेष घर - महादेवी वर्मा - पृ.सं - 32
2. 'परिधि' - देशगीत - 3 महादेवी वर्मा - पृ.सं - 45
3. हिन्दी के प्रतिनिधि कवि महादेवी वर्मा के संबन्ध में - गंगा प्रसाद पाण्डेय - पृ.सं - 30
   गंगा प्रसाद पाण्डेय महादेवी वर्मा के सम्बन्ध में इस प्रकार लिखते हैं, "बंगाल के अकाल के समय 'बंग दर्शन' और चीन आक्रमण के समय 'हिमालय' काव्य-संकलन का प्रकाशन इनकी शब्द सेवा के ही ज्वलन्त प्रमाण है।"

की शोभा को देखकर विस्मयाभिभूत हो जाती है। हिमालय के प्रति उनकी आसक्ति जन्मजात है। काव्य में हिमालय का चित्र, रूप-रंग, संगति एवं मनोरम कल्पना से साकार हो उठता है। हिमालय सदैव कवयित्री केलिए आकर्षण का विषय रहा है।

भारत की उत्तरी सीमा पर चीन के आक्रमण के समय राष्ट्रीय गौरव और साहस जगाने केलिए प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल तक के कवियों की हिमालय सम्बन्धी राष्ट्रीय कविताओं को प्रस्तुत संकलन में संकलित किया। भारत के उन्नत शुभ्र मस्तक हिमालय पर जब संघर्ष की नील लोहित घटाएं छा गई तब आधुनिक युग के साहित्यकारों को अपनी लेखनी का विनियोग करने की प्रेरणा देना ही प्रस्तुत काव्य-संग्रह पर उद्देश्य रहा है।[1] *'हिमालय'* काव्य-संकलन के समर्पण के सम्बन्ध में उसने लिखा है कि- *"जिन्होंने अपनी मुक्ति की खोज में नहीं वरन् भारत भूमि को मुक्त रखने केलिए अपने स्वप्न समर्पित किए हैं; जो अपने संताप दूर करने केलिए नहीं वरन् भारत की जीवन ऊष्मा को सुरक्षित रखने केलिए हिम में गले हैं, जो आज हिमालय में मिलकर धरती केलिए हिमालय बन गए हैं, उन्हीं भारतीय वीरों की पुण्य स्मृति में।"*[2]

आधुनिक युग में महादेवी वर्मा अपनी संस्कृति का पूर्ण निर्वाह और प्रतिनिधित्व करनेवाली आध्यात्म दर्शन की सांस्कृतिक कवयित्री हैं। अपने पूरे जुझारूपन, राष्ट्रीय भावना से ओतप्रोत जीवन व्यापी आध्यात्मिक एकता की अथक खोज ही हिमालय सम्बन्धी कविताओं का मूल स्वर है। इस घोर वैज्ञानिक युग में हिमालय जैसे आध्यात्मिक धरातल के प्रति एक भावात्मक सृजनात्मक दृष्टिकोण तथा अनुभूति की अभिव्यक्ति का श्रेय महादेवी वर्मा को प्राप्त है।

---

1. 'हिमालय' - महादेवी वर्मा - पृ.सं - 30
2. 'हिमालय' - महादेवी वर्मा - पृ.सं - 30

छायावादी कविता में हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ

छायावादी कविता में हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ को उद्घाटित करने केलिए प्रस्तुत युग के हिमालय संबन्धी कविताओं के भौगोलिक, प्राकृतिक, धार्मिक, आध्यात्मिक, नैतिक एवं राष्ट्रीय संदर्भों का विस्तृत अध्ययन हुआ है।

छायावादी कविता में हिमालय के भौगोलिक एवं प्राकृतिक संदर्भ

छायावादी कविता में हिमालय के भौगोलिक उपादान जैसे उसके प्रमुख पर्वत- कैलास[1], गौरीशंकर[2], एवरेस्ट[3], काञ्चनजंघा[4]; हिमालय के प्रमुख सरोवर - मानसरोवर[5], राक्षसताल[6]; हिमालय की प्रमुख नदियां-गंगा[7], यमुना[8], गोमती[9], सरस्वती[10] तथा हिमालय के रमणीय स्थान कूर्मांचल[11], कौसानी[12], अल्मोड़ा[13], काश्मीर[14] आदि पर विचार किया गया

1. 'कामायनी' आनन्द सर्ग - प्रसाद - पृ.सं - 111
2. 'नये पत्ते' कैलाश में शरत् - निराला - पृ.सं - 98
3. 'नये पत्ते' कैलाश में शरत् - निराला - पृ.सं - 98
4. 'नये पत्ते' कैलाश में शरत् - निराला - पृ.सं - 98
5. 'कामायनी' आनन्द सर्ग - प्रसाद - पृ.सं - 114
6. 'नये पत्ते' कैलाश में शरत् - निराला - पृ.सं - 99
7. 'अभिषेकता' - गंगा - पन्त - पृ.सं - 77
8. 'अभिषेकता' - गंगा - पन्त - पृ.सं - 77
9. 'अभिषेकता' गंगा - पन्त - पृ.सं - 77
10. 'कामायनी' ईर्ष्या सर्ग - प्रसाद - पृ.सं - 57
11. 'अभिषेकता' - कूर्मांचल के प्रति - पंत - पृ.सं - 30
12. 'अभिषेकता' - कूर्मांचल के प्रति - पंत - पृ.सं - 30
13. 'गंधवीथी' अल्मोड़े का वसन्त - पंत - पृ.सं - 138
14. 'नये पत्ते' कैलाश में शरत् - निराला - पृ.सं - 99

है। हिमालय की वन-संपदा में देवदार [1], चीड़[2], बाँझ[3], पाटल[4], ताम्र[5], इन्दीवर[6], जलद[7], कोकनद[8], शतदल[9], टेसू[10], रक्त पलाश[11], आम्र मौर[12], तृण[13], गुल्म[14], ईगूरी[15], औषधियाँ[16] तथा हंस[17], सिंह[18], सर्प[19], राजमराल[20], हिमखग[21], ऋक्ष[22], नाहर[23], भेड़[24], पहबीजन[25],

1. 'गन्धवीथी' - कूर्माचल के प्रति - पन्त - पृ.सं - 59
2. 'गन्धवीथी' - कूर्माचल के प्रति - पन्त - पृ.सं - 59
3. 'गन्धवीथी' - कूर्माचल के प्रति - पन्त - पृ.सं - 59
4. 'गन्धवीथी' - कूर्माचल के प्रति - पन्त - पृ.सं - 59
5. 'गन्धवीथी' - कूर्माचल के प्रति - पन्त - पृ.सं - 59
6. 'नये पत्ते' - कैलाश में शरत् निराला - पृ.सं - 99
7. 'नये पत्ते' - कैलाश में शरत् - निराला - पृ.सं - 99
8. 'नये पत्ते' - कैलाश में शरत् निराला - पृ.सं - 99
9. 'नये पत्ते' - कैलाश में शरत् निराला - पृ.सं - 99
10. 'गन्धवीथी' - प्रकृति स्मृति के वातायन से - पंत - पृ.सं - 54
11. 'गन्धवीथी' - शैशव और प्रकति पंत - पृ.सं - 51
12. 'गन्धवीथी' - शैशव और प्रकति पंत पृ.सं - 51
13. 'गन्धवीथी' - कूर्माचल के प्रति पंत पृ.सं - 54
14. 'गन्धवीथी' - कूर्माचल के प्रति पंत पृ.सं - 61
15. 'गन्धवीथी' - कूर्माचल के प्रति पंत पृ.सं - 61
16. 'गन्धवीथी' कूर्माचल के प्रति पंत पृ.सं - 62
17. 'गन्धवीथी' कूर्माचल के प्रति पंत पृ.सं - 56
18. 'गन्धवीथी' - कूर्माचल के प्रति पंत पृ.सं - 61
19. 'गन्धवीथी' कूर्माचल के प्रति पंत पृ.सं - 58
20. 'गन्धवीथी' कूर्माचल के प्रति पंत - पृ.सं - 58
21. 'गन्धवीथी' - कूर्माचल के प्रति पंत पृ.सं - 60
22. 'गन्धवीथी' - कूर्माचल के प्रति पंत पृ.सं - 60
23. 'गन्धवीथी' - कूर्माचल के प्रति पंत - पृ.सं - 60
24. 'गन्धवीथी' - कूर्माचल के प्रति पंत - पृ.सं - 61
25. 'गन्धवीथी' - कूर्माचल के प्रति पंत पृ.सं - 61

महाभारत जैसे पोराणिक ग्रंथ में इसके सम्बन्ध में ऐसा बताया है-

"अस्मिन् हिमवतः श्रृंगे नावं बध्नीत मा चिरम्।

सा बद्‌धा तत्र तैस्तूर्णमृषि भि र्भरतर्षभ।"[1]

प्रलय से बचे हुऐ आदि पुरुष का आश्रय स्थान हिमालय ही है। मनु का समय भारतीय संस्कृति का आरम्भ का समय था। मनु ने हिमालय की एक गुफ़ा को अपना शरण स्थान बनाया था।

"थी अनन्त की गोद सदृश जो विस्तृत गुहा वहाँ रमणीय,

उसमें मनु ने स्थान बनाया सुन्दर, स्वच्छ और वरणीय।"[2]

इसप्रकार कवि प्रसाद ने हिमालय के भौगोलिक वातावरण को ही सृष्टि का आरंभिक स्थान माना है।

छायावादी कविता में हिमालय की वन-संपदा पर विचार किया गया। हिमालय के वन रंग-विरंगे फूलों, स्वादिष्ट फलों, लम्बे-लम्बे वृक्षों, लता, गुल्मों तथा कोमल पुलिनों से अतिरंजित रहता है। छायावादी कवि पन्त हिमालय की वन श्री से इतना प्रभावित होते हैं कि वे कहते हैं-

"आ समदृष्टि प्रकृति! विषण्ण आँगन में स्वर्गिक स्मिति भर
फूल उठे थे आड़ू, ललछौहें मुकुलों में सुन्दर!
सेबों की कलियाँ प्रभूत, रक्तिम छीटों से शोभित
खिलीं मँझोले रजत फूलों में करती थी मन मोहन!"[3]

1. महाभारत - वन पर्व - 187 अध्याय
2. कामायनी - आशा सर्ग - प्रसाद - पृ.सं - 9
3. गंधवीथी पहाड़ि प्रान्त एक स्मृति - पंत - पृ.सं - 64

पइयों (जंगली चेरी), नींबू, नारंगी, अखरोट, नाक के फूल, मंजरी, कलियाँ, केले की फूली फलियाँ, काफल, लाल बुरूस रोडोडंड्रम के फूल, हिसालू (छोटे पीले फल), बेडू (पहाडी अंजीर) जंगली मूँगी, वन मेवा, देवदारू तथा चीड़ों की मर्मर ध्वनि से संपन्न हिमालय के वन श्री का चित्रण किया है। हिमालय के वन प्रांत को गिरि परियों का प्रिय स्थल बताया गया है।[1] हिमालय के वन देवदारू, चीड़ एवं बाँझ से पूर्ण है कवि कहते हैं कि–

"रोमांचित से गिरि वन चीड़ों की सूची से छाए,
देवदारू वन देवों के हरीर्यों के स्तंभों से स्थित!
घनी बाँझ की बनी मोहित हरित शुभ्र मर्मर भर![2]

कामायनी में देवदारू वृक्षों के सौन्दर्य का उद्‌घाटन इस प्रकार हुआ है–

"देवदारू के वे प्रलंब भुज, जिनमें उलझी वायुत्तरंग,
मुखरित आभूषण से कलरव करते सुन्दर बाल विहंग
आश्रय देता वेणु-वनों से निकली स्वर-लहरी-ध्वनि को,
नाग-केसरों की क्यारी में अन्य सुमन भी थे बहुरंग।"[3]

देवदारू के वृक्ष भुजाओं के समान दूर-दूर तक फैली हुई थी जिनसे वायु तरंग टकरा रही थी। बाल विहंगों के स्वर को आभूषणों की झनकार माना गया है। वन की ओर से आनेवाली स्वर लहरी जब बाँसों के झुरमुट में आकर रुक जाती और ओर अधिक ध्वनि करती रहती। नागकेसर की सुन्दर क्यारियों में रंग-विरंगे फूल खिले हुए थे। हिमालय के ये वन अनेक जीव-जन्तुओं से संपन्न है।

1. 'गंधवीथी' - पहाड़ी प्रान्त एक स्मृति - पन्त - पृ.सं - 64
2. 'गंधवीथी' - कूर्माचल के प्रति - पंत - पृ.सं - 59
3. 'कामायनी' - स्वप्न - सर्ग प्रसाद - पृ.सं - 66

"पहिले से जग कर खग, ऊँचे गिरि वासों के कारण,
गाते थे नव स्वर लय गति में नव जागरण चारण।"[1]

सुर्योदय के पहले ही हिमालय के गिरि वासों में बसनेवाले खग उठकर नवजागरण का संगीत सुनाते हैं। नभ में गीत गाते हुए उठनेवाले रंग-विरंगे चित्रित पक्षी, नील पीत भृंगों का गुंजन, वन के भीतर उड़नेवाले तितलियाँ, उचक चौकड़ी भरते भूरे गिरि हिरनें, गुल्म झाडियों बीच फुदकते शिशु खरहें, पक्षियों का कलख, कोयल का गीत, मोरों का नर्तन आदि जीव-जन्तुओं से युक्त हिमालय के वन का दृश्य मनभावना है।[2]

हिमालय के घने वन अनेक हिंस्र जन्तुओं तथा भयानक जीव-जन्तुओं से पूर्ण है।

"आदि महत्ता पशु जग की अब भी वन करते घोषित,
सिंह, ऋक्ष, वृक गिरि खाहों को रखते भीम निनादित,
चकित, चौकड़ी भीत मृगों पर झपट टूटते नाहर।
हिंस्र व्याघ्र के विस्फारित हरिताभ भयावह लोचन-
सँकरी घाटी में सर्पों से स्रोत सरकते सर-सर।"[3]

छायावादी कविता में एक ओर हिमालय की सुन्दर जीव-जन्तुओं का उल्लेख कर उसके रमणीय वातावरण पर प्रकाश डाला है तो दूसरी ओर भयानक जीवजन्तुओं का आवास स्थान बताकर उसके भीषण या डरावने वातावरण को भी उद्‌घाटित किया है। छायावादी कविता में हिमालय से बहते हुए निर्झरों, नदियों, झरनों, सरोवरों का सुन्दर चित्र खींचा है। हिमालय की हँसी की परिणति है ये नदियाँ[4] कहनेवाले कवि प्रसाद ने हिमालय

1. `गन्धवीथी` - पहाड़ी प्रान्त एक स्मृति - पन्त - पृ.सं - 65
2. `गन्धवीथी` - शैशव और प्रकृति - पन्त - पृ.सं - 51-54
3. `गंधवीथी` - कूर्माचल के प्रति - पन्त - पृ.सं - 60
4. `कामायनी` - आशा सर्ग - प्रसाद - पृ.सं - 9

पर्वत से बहते हुए झरने को सफ़ेद हाथियों के गंडस्थली से झरते हुए मद की धारा मान लिया–

"प्रवाहमान थे निम्न देश में, शीतल शत-शत निर्झर ऐसे
महाश्वेत गजराज गंड से, बिखरी मधु धाराएं जैसे।"[1]

मानसरोवर का सौन्दर्य मन को हठात् आकर्षित करता है–

"मरकत की वेदी पर ज्यों
रखा हीरे का पानी
छोटा सा मुकुर प्रकृति का
या सोयी राका रानी।"[2]

हरितिमा से परिपूर्ण वनराजियों के बीच स्वच्छ स्फाटिक निर्मल जल पूरित मानसरोवर देखने में मरकत मणि की बनाई हुई हरे रंग की वेदी पर रखे हीरे के पानी समान लगता है। उज्जवल शुभ्र जलमय सरोवर को देखने पर लगता है पूर्णिमा ही शुभ्र ज्योत्सना सहित सो रही है। हरे रंग वैभव एवं समृद्धि का सूचक है तो शुभ्र वर्ण पवित्रता का आभास देता है। हिमालय के तालाब इतना स्वच्छा है कि वह दर्पण समान लगता है।

"रजत तलैया चमका करती हँस दर्पण सी।"[3]

हिमालय से निसृत सरस्वती नदी का उल्लेख करते हुए छायावादी कवि प्रसाद उसके सम्बन्ध में कहते हैं कि–

"करती सरस्वती मधुर नाद
बहती थी श्यामल घाटी में निर्लिप्त भाव सी अप्रमाद

---

1. 'कामायनी' - रहस्य सर्ग - प्रसाद - पृ.सं - 102
2. 'कामायनी' - आनन्द सर्ग - प्रसाद - पृ.सं - 111
3. 'गंधवीथी' - प्रकृति स्मृति के वातायन से - पन्त - पृ.सं - 50

सब उपल उपेक्षित पड़े रहे जैसे वे निष्ठूर जड़ विषाद
वह थी प्रसन्नता की धारा जिसमें था केवल मधुर गान
थी कर्म निरंतरता - प्रतीक चलता था स्ववश अनंत-ज्ञान
हिम-शीतल लहरों का रह-रह कूलों से टकराते जाना
आलोक अरुण किरणों का उन पर अपनी छाया बिखराना
उद्‌भुत था! निज-निर्मित-पथ का वह पाथिक चल रहा निर्विवाद
कहता जाता कुछ सुसंवाद।"[1]

सरस्वती नदी मधुर ध्वनि करती हुई हिमालय की हरी-भरी घाटियों में विकारहीन शुद्ध भावों के समान शांतिपूर्वक बह रह थी। उस नदी के किनारे बहुत से तिरस्कृत पत्थर पड़े हुए थे, जिन्हें देखकर ऐसा प्रतीत होता था मानो नदी के मन में किसी प्रकार की चिन्ता या खिन्नता नहीं है, इसलिए शोक नामक भाव जड़ या निष्ठूर बनकर नदी के किनारे पड़े हैं। नदी की धारा मधुर गान करती हुई प्रसन्नता के साथ आगे बढ़ती जा रही थी जो प्राणियों को सदैव कर्म करने की प्रेरणा देती हुई सी जान पड़ती थी और जिसमें अनन्त ज्ञान भरा हुआ था। उस नदी की बर्फ के समान शीतल लहरें रह-रहकर किनारों से टकरा रही थी। उन लहरें पर प्रातःकालीन सूर्य की किरणें अपना प्रकाश बिखेर रही थी। सरस्वती नदी का सौन्दर्य अद्‌भुत दिखाई दे रहा था। सरस्वती नदी अपना रास्ता बनाकर अबाध गति से चलती हुई और सुन्दर कर्मों का संदेश देती हुई पथिक के समान बढ़ी चली जा रही था।

छायावादी कविता में अधिकांश कविताएं प्रकृतिपरक है। प्रकृति-चित्रण को प्रमुखता देनेवाली इन कविताओं में अवश्य ही हिमालय का प्राकृतिक सौन्दर्य भी उभरकर आता है। इस युग के कवियों ने हिमालय के कोमल स्वरूप का चित्रण किया है कहीं हिमालय की प्रकृति का मानवीकरण किया है, कहीं इसमें अज्ञात सत्ता का आभास पाया है,

1. 'कामायनी' - ईर्ष्या सर्ग - प्रसाद पृ.सं - 57

कहीं हिमालय की प्रकृति का काल्पनिक चित्र खींचा है, कहीं इसे मानव के सुख-दुःख का साथी बताया है।

छायावादी कवि प्रसाद एवं महादेवी वर्मा हिमालय के प्राकृतिक सौन्दर्य से इतना प्रभावित हो जाते हैं कि वे उसकी तुलना कमल के साथ कर देते हैं प्रसाद कहते हैं कि–

"नव कोमल आलोक बिखरता
हिम संसृति पर अनुराग;
सित सरोज पर क्रीड़ा करता
जैसे मधुमय पिंग पराग।"[1]

उषा के प्रकट होने पर बर्फीले प्रदेश पर (हिमालय पर) जो नवीन एवं कोमल अनुराग से भरा प्रकाश बिखर जाता है यह ऐसा मालूम पड़ता है कि मकरन्द से भरा हुआ पीला पराग सफ़ेद कमल पर बिखर गया है। यहाँ हिमालय को कमल तथा कमल पर पड़नेवाले कोमल प्रकाश को पिंग पराग माना गया है। महादेवी वर्मा हिमालय को *'तू भू के प्राणों का शतदल'* कहकर संबोधित करती है। उनकेलिए हिमालय के एक-एक शिखर सफ़ेद कमल के एक-एक दल के समान झलमलाते हैं और हिमालय में मंडरानेवाले बादल को भ्रमर मानती है।[2]

मानवीकरण छायावाद की एक प्रमुख प्रवृत्ति है। छायावादी कवियों ने हिमालय का मानवीकरण किया है। मानवीकरण में प्रकृति का कण-कण मानव के समान चलता-फिरता, हँसता, बोलता, अकड़ता, मचलता, हाँफता दिखाई देता है। हिमालय को चेतनता से युक्त माननेवाले प्रसाद ने प्रलय के पश्चात् बहनेवाले झरनों को, असीम अंचल में किसी

1. 'कामायनी' - आशा सर्ग प्रसाद - पृ.सं - 7
2. 'दीपशिखा' - तू भू के प्राणों का शतदल - महादेवी वर्मा पृ.सं - 141

की मृदु मुस्कान को देखकर हँसनेवाला हिमालय माना है। अर्थात् हिमालय की हँसी की परिणति है ये झरने। कवि प्रसाद कहते हैं –

"उस असीम नीले अंचल में
देख किसी की मृदु मुस्कयान,
मानो हँसी हिमालय की है
फूट चली करती कल गान।"[1]

हिमालय में मानवीय क्रिया-व्यापार का चित्रण कवि इस प्रकार करते हैं–

"धीरे-धीरे हिम-आच्छादन
हटने लगा धरातल से;
जगी वनस्पतियाँ अलसाई
मुख धोती शीतल जल से।"[2]

प्रलय के पश्चात् नवीन प्रभाव का उदय हुआ। आलोक या प्रकाश के फैल जाने के कारण धीरे-धीरे पृथ्वी तल से बर्फ की तहें पिघलकर दूर होने लगी। जिससे बर्फ से ढका जाने के कारण अलसाये से पड़े पेड़-पौधे अब बरफ के पिघल जाने के कारण ऐसा लग रहे थे मानो वह सोकर उठे हो और आलस्यपूर्ण होने के कारण अपना मुख धो रहे हैं। मनुष्य जब जागता है फिर अपना मुख धोता है उसी प्रकार हिमालय की प्रकृति में भी ऐसा ही मानवीय क्रिया-व्यापार को दिखाया है। हिमालय जो लताओं से आवृत है ऐसा प्रतीत होता है जैसे कोई पुरुष निद्रा में मग्न है। कवि कहते हैं-

1. 'कामायनी' - आशा सर्ग - प्रसाद - पृ.सं - 9
2. 'कामायनी' - आशा सर्ग - प्रसाद - पृ.सं - 7

"अचल हिमालय का शोभनतम,
लता कलित शुचि सानु शरीर
निद्रा में सुख स्वप्न देखता
जैसे पुलकित हुआ शरीर।"[1]

निद्रावस्था में स्वप्न देखकर जैसे कोई व्यक्ति रोमांचित हो जाता है वैसे ही उस पर्वत पुरुष (हिमालय) के शरीर पर लताओं का हिलना मानो उसका रोमांचित होना है।

हिमालय की ऊँचाई का मानवीकरण करके उसके आकाश को छुने केलिए मचल उठने का वर्णन किया है।

"छूने को अम्बर मचली-सी
बढ़ी जा रही सतत ऊँचाई
विक्षत उसके अंग प्रगट थे
भीषण खड्ग भयंकर खाई।"[2]

हिमालय की ऊँचाई सतत बढ़ती जा रही है मानो हिमालय आकाश के छूने केलिए मचल रहा है। जो उछलता है उसका गिरना और गिरने पर शरीर का विक्षत होना भी स्वाभाविक है, हिमालय प्रान्त में जो भीषण खड्ढे तथा खाईयाँ है, वे मानो उसके शरीर के घाव है।

हिमालय से निसृत होकर आनेवाली नदियों का मानवीकरण कवि इस प्रकार करते हैं। वे हिमालय के समाधिस्थ रूप का चित्रण कर उसके अचंचल स्वरूप एवं उन्मुक्तावस्था की सुन्दर कल्पना करते हैं। समाधि में तल्लीन हिमालय के स्वेद-बिन्दु ही नदियों के रूप में प्रवाहित हो रहे हैं।[3]

1. 'कामायनी' - आशा सर्ग - जयशंकर प्रसाद - पृ.सं - 9
2. 'कामायनी' रहस्य सर्ग - जयशंकर प्रसाद - पृ.सं - 102
3. 'कामायनी' - इडा सर्ग - जयशंकर प्रसाद - पृ.सं - 50

पर्वत पर उगे पुष्पों की छाया जब जल में पड़ती है तब ऐसा लगता है मानो फूलों रूपी नेत्रों से पर्वत ही नीचे जल रूपी दर्पण में अपना प्रतिबिम्ब देख रहा हो। जिस प्रकार कोई व्यक्ति अपना रूप दर्पण में देखता हो वैसे ही हिमालय अपना रूप तालाब में देखता है।

"मेखलाकार पर्वत अपार, अपने सहस्त्र दृग सुमन फाड़
अवलोक रहा है बार-बार, नीचे जल में निज महाकार
जिसके चरणों में पला ताल, दर्पण सा फैला है विशाल।"[1]

किसी गहरी पीड़ा की आशंका से पृथ्वी मानो सिकुड़ गई है और वही सिकुड़न हिमालय के रूप में दृष्टिगोचर है। कामायनी में प्रसाद इसकी अभिव्यक्ति इस प्रकार करते हैं–

"दृष्टि जब जाती हिमगिरि ओर प्रश्न करता मन अधिक अधीर
धरा की यह सिकुड़न भयभीत, आह कैसी है क्या है पीर?"[2]

हिमालय के तन पर आकाश की नीली छायाएँ पड़ी है मानो वह उसके वस्त्र का सिकुड़न हो तथा हिम पर प्रकाश के पड़ने के कारण इन्द्रधनुष या सतरंगी वर्ण का लगता है जहाँ से शत-शत हिमकण उड़ते रहते हैं; हिमालय में हिम के रोमिल घन मानो स्वर्गदूतों के पंख हो तथा यह विविध रंगों के वस्त्र पहने हुए दिखाई देता है। जैसे–

"नीली छायाएँ थी तन पर
लगती आभा की-सी सिकुड़न
इन्द्रधनुष मंडल से दीपित
उड़ते थे शत हँसमुख हिमकण।"[3]

1. 'गंधवीथी' - पर्वतप्रदेश में पावस ऋतु - पंत - पृ.सं - 77
2. 'कामायनी' - श्रद्धा सर्ग - प्रसाद - पृ.सं - 15
3. 'गंधवीथी' - हिमाद्रि - पंत - पृ.सं - 183

जिस तरह मानव के मन में उन्नति करने की या कुछ प्राप्त करने की उच्च आकांक्षा आती रहती है उसे हाज़िल करने तक वह चिन्तित, अटल अनिमेष रहता है उसी प्रकार हिमालय की भूमि से उठ उठकर ये गिरिवर आकाश की ओर अनिमेष अटल एवं चिन्तित होकर झाँक रहे हैं।

"गिरिवर के उर से उठ-उठ कर
उच्चाकांक्षाओं - से तरुवर
हैं झाँक रहे नीरव नभ पर,
अनिमेष अटल, कुछ चिन्ता पर।"[1]

हिमालय के शान्त वातावरण को इस प्रकार चित्रित किया है–

"देखा मनु ने वह अतिरंजित
विजन विश्व का नव एकान्त
जैसे कोलाहल सोया हो
हिमशीतल जड़ता सी श्रान्त।"[2]

प्रलय काल के पश्चात् सवर्त्र निस्तब्धता छा गयी थी। मनु को उस वातावरण में नवीनता सी दिखाई दे रही थी, ऐसा लग रहा था मानो कोलाहल उसी प्रकार शान्त होकर सो गया है जैसे जल हिम बनने पर जड़ हो जाता है।

छायावादी कविता में हिमालय की प्रकृति को मानव के सुख - दुःख का भागीदार बताया गया है। मानव के मन में होनेवाले विविध अनुभूतियों को हिमालय की प्रकृति के माध्यम से चित्रित करने में ये कवि सक्षम रहे। कामायनी के अन्तिम सर्ग में इसका

1. 'गंधवीथी' पर्वत प्रदेश में पावस ऋतु - सुमित्रानन्दन पंत पृ.सं - 77
2. 'कामायनी' आशा सर्ग - जयशंकर प्रसाद - पृ.सं - 7

उल्लेख मिलता है। श्रद्धा-मनु-सारस्वतनिवासी सब के महा मिलन तथा सामरस्य का वातावरण था और सब कहीं आनन्द उमंग और उल्लास छाया हुआ था। कैलास पर्वत की प्रकृति भी उस आनन्द में भाग लेकर अपना भाग अदा करने केलिए विह्वल हो उठा। हिमालय का हिमवती पाषाणी प्रकृति का प्रस्तर स्वरूप अब नहीं रहा, वह रक्त मांस मज्जा की सुन्दरी नारी बन गयी, जो अपने लास्य रास में तन्मय हो मधुर हँसी की प्रभा फैला रही थी। नृत्य के ताण्डव एवं लास्य दो रूप हैं, ताण्डव में नृत्य का उद्धत रूप प्रकट होता है जिसके अधिकारी शिव हैं जबकि मधुर कोमल लास्य नृत्य का संबन्ध पार्वती जी से स्थापित किया जाता है। उस नृत्य का उल्लेख करके कवि ने प्रकृति को नृत्य निरता पार्वती के रूप में चित्रित किया है। लास्य के रास का भी विधान करके कवि ने द्वापर युग की उन गोपिकाओं के मंडलाकार नृत्य की ओर संकेत किया है। अतः प्रकृति को रास निरता गोपिका के रूप में कल्पित कर पौराणिक रूप विधान का कार्य किया है। कैलास की पर्वतीय प्रकृति को लास-रस निरता कल्याणी नारी के रूप में प्रस्तुत कर वहाँ की चाँदनी रात का अनुपम सौन्दर्य को कवि अपने शब्द में इस प्रकार उतारते हैं–

"मांसल सी आज हुई थी
हिमवती प्रकृति पाषाणी
उस लास रास में विह्वल
थी हँसती सी कल्याणी।"[1]

छायावादी कवि हिमालय की प्रकृति पर नारी भाव का आरोप लगाते हैं। प्रसाद इसे कहीं-कहीं सुन्दर युवती के रूप में देखते हैं तो पंत माँ के रूप में देखते हैं। पंत ने "पार्वती वन प्रकृति, अप्सरा ही सी सुन्दर[2] "देवदारू रज पीत सुहाती ग्राम वधू सी सुन्दर"[3]

1. 'कामायनी' आनन्द सर्ग - जयशंकर प्रसाद पृ.सं - 114
2. 'गंधवीथी' - प्रकृति स्मृति के वातायन से - पंत - पृ.सं - 49
3. 'गंधवीथी' प्रकृति स्मृति के वातायन से - पंत - पृ.सं - 49

तथा *"हिमपारियों की निःस्वर पदचापों से कर दिशि मुखरित"*[1] कहकर हिमालय की प्रकृति में नारी सहज रूप पाया है। छायावादी कवि प्रसाद सन्ध्याकालीन हिमालयी प्रकृति का सौन्दर्य का उद्‌घाटन कर उसे एक रानी के रूप में देखते हैं वे इसका चित्रण इस प्रकार करते हैं-

"सन्ध्या-घनमाला की सुंदर ओढ़े रंग बिरंगी छींट,
गगन-चुम्बी शैलश्रेणियाँ पहने हुए तुषार किरीट।"[2]

हिमालय की गगनचुम्बी चोटियों के ऊपर छाए हुए रंग बिरंगे बादल ऐसे लगते थे मानो वह चोटियाँ छींट का वस्त्र ओढ़कर और बर्फ का मुकुट पहने हुए रानी के समान बैठी हुई है।

हिमालय की प्रकृति को एक चंचल बाला के रूप में देखा गया है कवि कहते हैं कि–

"उच्च शैल शिखरों पर हँसती
प्रकृति चंचला बाला,
धवल हँसी बिखराती अपनी
फैला मधुर उजाला।"[3]

पर्वतों की समस्त ऊँची चोटियों पर चाँदनी फैल गई थी जिसे देखकर जान पड़ता था मानो इन चोटियों पर बैठी हुई कोई चंचल युवती की तरह प्रकृति उस चाँदनी के माध्यम से अपनी हँसी फैला रही है। उसकी मधुर हँसी के कारण यह आनन्दमय उजाला फैला हुआ है।

1. 'गंधवीथी' - प्रकृति स्मृति के वातायन से - पंत - पृ.स - ४५
2. 'कामायनी' - आशा सर्ग - प्रसाद - पृ.सं 38
3. 'गंधवीथी' - कूर्माचल के प्रति - पन्त

हिमालय का प्राकृतिक वातावरण जितना सुन्दर है उतना ही शांत और स्वस्थ दिखाई देता है। 'भरत' कविता में कवि प्रसाद हिमालय की रम्य विशाल अधित्यका का चित्र प्रस्तुत करते हैं–

"सूर्य-ताप भी सदा सुखद होती यहाँ
हिम-सर में भी खिले विमल अरविन्द हैं
कहीं नहीं है शोच, कहाँ संकोच है
चन्द्र प्रभा में भी गलकर बनते नदी
चन्द्रकान्त से ये हिमखण्ड मनोज्ञ हैं।"[1]

हिमालय में पड़नेवाले सूर्य ताप भी सुखप्रद हैं, यहाँ सरोवरों का जल भी बर्फ हो रहा है पर उनमें भी कमल खिले हैं। कहीं भी शोक या संकोच नहीं। इस दिव्य वातावरण में रात के समय चन्द्रकिरणें जब नदियों पर पड़ती है तो नदी में तैरते बर्फ चन्द्रकान्त मणियों की तरह शोभा देते हैं।

हिमालय के चरणों में सर्वत्र अत्यधिक पवित्र शान्त वातावरण है। हिमालय में बहनेवाले पवित्र झरनों की कल-कल ध्वनि मात्र सुनाई रहा है। पर्वतों से बहते हुए झरनों की दिव्य शोभा का वर्णन कवि पंत इस प्रकार करते हैं–

"गिरि का गौरव गाकर झर झर, मद से नस नस उत्तेजित कर
मोती की लड़ियों के सुन्दर, झरते हैं झाग भरे निर्झर।"[2]

सुमित्रानन्दन पन्त ने हिमालय के कूर्माचल प्रदेश के प्राकृतिक सौन्दर्य का उद्‌घाटन '*कूर्माचल के प्रति*' नामक कविता में इस प्रकार किया है–

1. प्रसाद ग्रंधावली 1 काव्य - कानन कुसुम - भरत प्रसाद पृ.सं - 149
2. कामायनी - जयशंकर प्रसाद

"कूर्माचल मातृभूमि का शीर्ष रत्न है, जिसका शारद मस्तक रश्मि स्मित, स्फटिक शुभ्र हिम-किरीट से अलंकृत है। इसके ऊपर सीपी के रंग का नभ है जो रजत नीलिमा गलित रोमिल घन से आच्छादित है। आग्नेय सानुओं से बह निकलते स्फुलिंग के निर्झर, षड्ऋतु सुरबालाओं का नर्तन, वासन्ती किसलय, सौरभ-पंखों में उड़ती पर्वत घाटी, उच्च प्रसारों में लेटा श्रान्त पान्थ सा ऊँघता ग्रीष्म, सुरधनुओं के छाया केतन, तडित-स्कलित गिरिश्रृंग, नील पीत सित लोहित विद्युल्लतिका, मरकत घाटी प्रसार, फेनों के हीरक झरने मुक्ताभ नीलिमा जल में राजहंस सा तिरता शशि, हिम परियों के निस्वर पदचापों से मुखरित दिशाएं सब मनमोहक हैं।"[1]

हिमालय के भौगोलिक परिवेश को काव्य का आधार बनाकर प्रसाद उसे सृष्टि का आरंभिक स्थान मानते हैं। छायावादी कविता में हिमालय के प्राकृतिक संदर्भ के अंतर्गत यहाँ की नदियों, झरनों, सरोवरों का चित्र खींचने के साथ ही साथ हिमालय के अनन्त प्राकृतिक वैभव वनराजियाँ असंख्य जीव जन्तुओं का भी इशारा हुआ है। सरस्वती नदी, मानसरोवर, कैलास, कश्यपाश्रम, कूर्माचल आदि के भौगोलिक एवं प्राकृतिक परिवेश इनकी कविताओं का विषय रहा है। इस युग के कवियों ने हिमालय के प्राकृतिक सौन्दर्य से प्रभावित होकर उसे संसार के सबसे सुन्दर वस्तुओं से तुलना की है। हिमालय की प्रकृति का मानवीकरण कर उसे समाधिस्थ, चंचल बाला, रानी, पार्वती, माँ तथा राजा आदि के रूपों में देखा गया है।

छायावादी कविता में हिमालय के धार्मिक संदर्भ

हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ को उद्घाटित करने केलिए छायावादी कवियों के हिमालय सम्बन्धी कविताओं के धार्मिक संदर्भ पर भी प्रकाश डाला गया है। छायावाद

1. गंधवीथी - कूर्माचल के प्रति - पंत - पृ.सं - 55

के कवि हिमालय में अवश्य कोई न कोई देवता का आभास पाते हैं। प्रसाद, सुमित्रानन्दन पंत जैसे कवि हिमालय में महादेव या भगवान शिव का आभास पाते हैं तो महादेवी वर्मा जैसे कवयित्रि इसी हिमालय को कृष्ण के रूपक में बाँधती है। महादेवी वर्मा के *'वेष धरे'* कविता इसका स्पष्ट उदाहरण है। भगवान कृष्ण जैसे महापुरुष के यशोगान द्वारा कवयित्रि ने हिमालय को दैवत सज्ञा प्रदान कर हमारी संस्कृति की रक्षा करनेवाला माना है। जैसे आकाश की नीली छाया ने तुषार अर्थात् हिमालय की बर्फ पर पड़ कर उसके श्वेत रंग को नीला कर दिया है। अनेक रंगों के मेघों ने शिखर पर घिरकर ऐसी शोभा उत्पन्न की है मानो मोर के पंख के मुकुट हों, पीली धूप ऐसी लगती है मानो पर्वत पीताम्बर पहने हुए हो। हिमालय के शिखरों से टकराकर हवा की मर्मर मानो वंशी की ध्वनि हों। आज हिमालय ने मानो कृष्ण का वेष धारण किया है। हिमालय जैसे विशाल एवं सुन्दर पर्वत को कृष्ण के साथ तुलना करके भारत के पौराणिक महापुरुष का स्मरण किया है। कवयित्रि ने हिमालय को यही संदेश दिया है कि भगवान कृष्ण ने जिस तरह अधर्म के विरुद्ध लड़कर धर्म की प्रतिष्ठा की थी हिमालय भी इसका अनुसरण कर लोकमंगल करें। हिमालय और कृष्ण में तुलना करके भारत के श्रेष्ठ पर्वत एवं भारत के श्रेष्ठ महापुरुष की वन्दना, स्तुति, स्मरण, आराधना एवं वन्दना की गयी है।[1] प्रस्तुत कविता में इसी धार्मिक भाव का स्पष्टीकरण इस प्रकार हुआ है–

"नभ की परछाई ने छाय के सेत
तुषार में नीलम रंग भरे,
बहुरंगी घनावलि सोहत यों
मन शीश पे मोर पंख छहरे.

1. In the lap of Himalayas - Swami Pranavananda P. 107

   Himalaya really appears bere as symbol of the great God the master of the Universe. I was almost convinced that the same universal spirit, which is beyond the comprehension of human senses, which controls everything in the universe and which resides in the core of every being, has manifested itself in this huge form. the snow clad mountain spreading before me from east to west reminded me of eternal Brahman.

परिधान हूँ पीत सो आतप को
गिरि आज पीताम्बर सो पहिरे,
वंशी हूँ समीर की बाजि रही
गिरिराज है श्याम को वेष धरे।"[1]

छायावादी कवि भारतीय संस्कृति से गहरी आस्था रहनेवाले थे। हिमालय पुराण प्रसिद्ध है। छायावादी कवियों ने पौराणिक घटनाओं को ताज़ा करते हुए भारतीय जन मानस में हिमालय के प्रति गहरी आस्था एवं उसके सांस्कृतिक महत्व का प्रतिपादन कराया है। हिमालय के द्वारा अतीत की गौरवमय अभिव्यक्ति हुई है। कालिदास ने कुमारसंभव में हिमालय के परिप्रेक्ष्य में घटित घटनाओं में शिव के तप को भंग करनेवाले कामदेव को शिव ने तीसरी आँख खोलकर भस्म करने तथा इसी हिम-अंचल में शिव को वर के रूप में प्राप्त करने केलिए पार्वती द्वारा घोर तपस्या करने का चित्रण किया है। छायावादी कवि पंत ने इन्हीं घटनाओं को ताज़ा करते हुए हिमालय के वातावरण में इसे नए ठंग से प्रस्तुत किया है।

"मदन-दहन की भस्म अनिल में
उड़ अब तक तन करती पुलकित,
सती अपर्णा के तप से
वन श्री अवाक्-सी लगती विस्मित!
अब भी उषा वहाँ दीखती
वधू उमा के मुख-सी लज्जित,
बढ़ती चन्द्रकला भी गिरिजा-सी
ही गिरि के क्रोड़ में उदित।"[2]

1. 'परिधि' - काव्य संग्रह वेष धरे - महादेवी वर्मा - पृ.सं - 32
2. 'तारापथ' - हिमाद्रि - सुमित्रानन्दन पन्त - पृ.सं - 146

इस प्रकार मदन दहन एवं सती अपर्णा का याद करते हुए कवियों ने हिमालय की प्रकृति में भी इन्हों का आभास पाया है। *'उमा के मुख समान लज्जित होकर सन्ध्या का आना'*, *'गिरिजा के समान चंद्रकला का गिरि के क्रोड़ में से उदित होकर आना'* आदि सुन्दर प्राकृतिक दृश्यों को हिमवान की पुत्री के साथ तुलना करते हुए हिमालय के उस वातावरण को पौराणिक बताया है। कामदेव अपने मित्र वसन्त के साथ हिम-भूमि में विचरते हुए उस हिमालय को पुष्प शरों से पूरित किया था, इसी घटना का स्मरण करते हुए छायावादी कवि लिखते हैं कि - आज भी वसन्त के आगमन से हिमालय का वातावरण पुष्पों के गन्ध से भर जाता है और पाषाण शिलाएं भी इससे पुलकित हो जाती है।[1] हिमवान की पुत्री उमा ने अपना बचपन हिमवान की क्रोड़ में बिताया था इस कारण वहाँ के हर एक प्राकृतिक पदार्थ उसके शैशव से अवगत थे तथा हिमालय के इसी सुन्दर वातावरण में भगवान शंकर घोर तपस्या में लीन रहते थे। ये सभी हिमालय की भूमि में घटित प्राचीन घटनाएं है फिर भी छायावादी कवि इन्हें पुनः ताज़ा करते हुए कहते हैं कि-

"अब भी प्रिया गौरा का शैशव
वर्णन करते खग पिक मुखरित,
देवदारू के ऊर्ध्व शिखर
वैसे ही शंकर से समाधि स्थित।"[2]

छायावादी कवि हिमालय को देवी-देवताओं की भूमि मानते हुए उसके धार्मिक महत्व पर विचार करते हैं। हिमालय में पक्षी-गण आज भी हिमवान की पुत्री गौरी का शैशव

1. 'तारापथ' - हिमाद्रि - सुमित्रानन्दन पन्त - पृ.सं - 146

"अब भी वही वसन्त विचरण
पुष्प शरों से भर दिगंत स्मित,
गंधोद्दाम धरा वह ही, पाषण
शिलाएं पुलक पल्लावित!"

2. 'तारापथ' - हिमाद्रि - सुमित्रानन्दन पन्त पृ.सं 146

का याद करते हैं। भगवान शंकर की अर्धांगिनी एवं हिमवान की पुत्री गौरी दैवत्व से पूर्ण है। कवि ने पक्षी-गणों के द्वारा भगवात् स्तुति कराई है। हिमालय में देवदारु वृक्ष खड़े है उनकी ऊर्ध्वगामी गति को देखकर कवि भगवान शंकर के समाधिस्थ होकर बैठने की कल्पना करते हैं। हिमालय में दैवत्व का आभास पाया गया है। हिमालय को देवनिलय माननेवाले पंत उसमें वास करनेवाले भगवान शंकर की स्तुति इस प्रकार करते हैं–

"हरित अवनि भरित अंक
रहस कलामय मयंक,
काल व्याल से निशंक,
मृत्युंजय जय हे।"[1]

हिमालय के धार्मिक संदर्भ को स्पष्ट करने केलिए उसके प्रमुख तीर्थस्थानों पर भी विचार किया गया है। छायावादी कविता में हिमालय के तीर्थस्थानों का उल्लेख अवश्य हुआ है। इस युग के कवियों की कविताओं में कैलास, मानसरोवर, गंगा आदि पवित्र स्थानों का यथावत् चित्रण मिलता है। *'कामायनी'* का अन्त कैलास की सुषमा एवं सात्विक आनन्ददायक वातावरण में होता है। कामायनी के अंतिम सर्ग में तीर्थयात्रा प्रसंग में कैलास एवं मानसरोवर का वर्णन मिलता है। आनन्द सर्ग के आरंभ में पर्वतीय यात्रा का चित्र अंकित है। इसमें कैलास तीर्थ के सम्बन्ध में बताया है कि *"आगे जो समतल भूमि दिखाई देती है जहाँ पर देवदारू के पेड़ों का वन दिखाई दे रहा है जिनके पत्तों से आस की बूँदें इकट्ठी कर के बादल भी अपना कटोरा भरता है, इस ढलवाँ भूमि से सरलता से उतर जाएंगे, तभी सामने सबसे पवित्र तीर्थ स्थान मिलेगा"* । कैलास पर्वत को सारे संसार का एक पवित्र स्थान माना है, जो अन्यन्त शीतल और शांत तपोभूमि है। प्रसाद कहते हैं कि–

1. 'गन्धवीथी' - हिमाद्रि स्तवन - सुमित्रानन्दन पन्त - पृ.सं - 219

"हाँ इसी ढालवों को जब बस सहज उतर जावें हम,
फिर सम्मुख तीर्थ मिलेगा वह अति उज्जवल पावनतम।"[1]

मानसरोवर जैसे तीर्थ के सम्बन्ध में बताया है कि–

"है वहाँ महाह्रद निर्मल जो मन की प्यास बुझाता,
मानस उसको कहते हैं सुख पाता जो है जाता।"[2]

जिस प्रकार शीतल जल पीने से प्यास बुझ जाती है उसी प्रकार मानसरोवर के पास जाने से मन की अशांति दूर होती है और सुख मिलता है। कैलास और मानसरोवर की पार्श्व भूमि में पदार्पण करते ही प्रत्येक आस्तिक एवं नास्तिक मानव का अशान्त एवं भ्रमित मन शांत संयत एवं ध्यानावस्थित हो जाता है। उसके अवचेतन मन में अनजाने ही सहज रूप से एक अद्भुत आकर्षण उत्पन्न होता है। यात्रियों ने सामने बर्फ़ से ढके सफ़ेद कैलास पर्वत को देखा जो अखंड गौरव से युत्त था। कैलास पर्वत के क्षण मात्र दर्शन से यात्रियों की यात्राजन्य पीड़ा, श्रम एवं ताप नष्ट हो जाता है। यहाँ आकर अपने पराए का भेद-भाव समाप्त हो जाता है। पुराणों में कैलास पर्वत को शिव का साधना क्षेत्र माना जाता है। चन्द्रमा रूपी मुकुट को पहने तथा बर्फ के कारण उज्जवलता को धारण किया कैलास पर्वत शिव के समान शोभित हो रहा था, जिस प्रकार शिव अपनी प्रिया पार्वती के नृत्य को देख कर आनन्द विभोर हो जाते थे उसी प्रकार कैलास पर्वत मानसरोवर की लहरों का नृत्य देख रहा था। कवि लिखते हैं कि–

"वह चन्द्र किरीट रजत नग
स्पन्दित सा पुरुष पुरातन;
देखता मानसी गौरी
लहरों का कोमल नर्तन।"[3]

1. 'कामायनी' आनन्द सर्ग - प्रसाद - पृ.सं - 109
2. 'कामायनी' - आनन्द सर्ग - प्रसाद - पृ.सं - 110
3. 'कामायनी' - आनन्द सर्ग - प्रसाद - पृ.सं - 114

प्रसाद ने कैलास को भगवान शिव एवं मानसरोवर को पार्वती के रूप में स्वीकार कर हिमालय के धार्मिक स्वरूप पर प्रकाश डाला है।

छायावादी कविता में हिमालय से निसृत होकर आनेवाले तीर्थस्वरूपा गंगा नदी को पवित्र एवं दैवत्व से युक्त घोषित किया है। हिमालय के कण-कण में पवित्रता का आभास पानेवाले कवियों ने इसे विष्णु के पदचरणों से निःसृत, शिव के सर का मुकुट, भीष्म की प्रसु एवं मुनि जह्नु की सुता, देवनिम्नगा, स्वर्गंगा एवं सागर के पुत्रों का उद्धार करनेवाली माना है।[1] छायावादी कवि पंत ने गंगा का भौगोलिक परिचय इस प्रकार कराया है–

"विसृत हिम पर्वत से निर्गत,
किरणोज्वल चल कल उर्मि निरत
यमुना, गोमती आदि से मिल
होती यह सागर में परिणत!
यह भौगोलिक गंगा परिचित,
जिसके तह पर बहु नगर प्रथित,
जन गंगा और एक जीवित!"[2]

गंगा नदी के तट पर अनेक नगर बसे हैं। गंगा का तट सुलभ जल के कारण वृ षि योग्य है जो जन जीवन को कायम करता है। जल-समृद्धि एवं उर्वर शक्ति के कारण गंगा लोकोपयोगी बन जाती है। छायावादी हिन्दी कविता में हिमालय के धार्मिक संदर्भ के अन्तर्गत

---

1. 'चिदम्बरा' - गंगा सुमित्रानन्दन पन्त - पृ.सं - 77

"वह विष्णुपदी, शिव मौली सुता
वह भीष्म प्रसू औ, जह्नू सुता
वह देवनिम्नगा स्वर्गंगा,
वह सगर पुत्र तारिणी श्रुता।"

2. 'चिदम्बरा' - गंगा - सुमित्रानन्दन पंत - पृ.सं - 77

भारत के श्रेष्ठ पुरुष भगवान कृष्ण तथा भारत के श्रेष्ठ पर्वत हिमालय की तुलना करके एक साथ दोनों की स्तुति, आराधना एवं स्मरण किया गया है। मदन-दहन जैसे हिम अंचल में घटित पौराणिक घटना का स्मरण कर भगवान शिव के वास स्थान हिमालय के धार्मिक महत्व पर प्रकाश डाला गया है। हिम अंचल में बिताए गए पार्वती के बचपन का चित्रण करते हुए हिमालय को शिव एवं पार्वती से युक्त देवभूमि माना है। हिमालय के प्राकृतिक उपादानों में ईश्वरीय चैतन्य पानेवाले कवि ने देवदारु वृक्ष की ऊर्ध्वगामी गति को मृत्युंजय महादेव के समाधिस्थ होकर बैठना कहा है। विष्णु-शिव-ब्रह्मा आदि देवताओं से गंगा नदी के सम्बन्ध को दिखानेवाले कवि उसके दैवत्व गुण पर प्रकाश डालते हैं। कैलास और मानसरोवर की शांत एवं शीतल तपोभूमि के दर्शन मात्र से यात्रियों का पाप, ताप, पीड़ा दूर हो जाती है। कैलास पर्वत को भगवान शंकर तथा मानसरोवर की लहर को पार्वती के नृत्य के साथ तुलना करके इनमें ईश्वरीय सत्ता का आभास दिखाया है।

छायावादी कविता में हिमालय के आध्यात्मिक संदर्भ

छायावादी कविता में हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ को स्पष्ट करने केलिए प्रस्तुत युग के हिमालय सम्बन्धी कविताओं के आध्यात्मिक संदर्भ पर भी प्रकाश डाला गया है। प्राचीनकाल से ही हिमालय ऋषि, देवता एवं तपस्वियों की तपस्थली के रूप में विख्यात रहा है। छायावादी कवियों ने भी हिमालय को भारत का सबसे श्रेष्ठ तपस्थली माना है। ऋषि एवं तपस्वियों के द्वारा यज्ञ संपन्न कराने की प्रथा प्राचीन काल से ही चली आ रही है और हिमालय की भूमि प्राचीनकाल से ही यज्ञ भूमि रही है। यज्ञ में काम आनेवाली सभी सामग्रियों को उत्पन्न करने के कारण एवं पृथ्वी को संभालकर रखने के कारण स्वयं ब्रह्मा ने उसे सभी पर्वतों का स्वामी बना दिया है। कालिदास के कुमारसंभव में इसका उल्लेख

हुआ है।[1] छायावादी कवि जयशंकर प्रसाद ने *'कामायनी'* में प्रलय के पश्चात् मनु द्वारा इसी प्रदेश में यज्ञ संपन्न कराने का संकेत किया है। कवि कहते हैं कि *"प्रलय के उपरान्त मनु द्वारा किए गए यज्ञों के कारण देवजाति का आस्तित्व फिर से दिखाई देने लगा। अलग-अलग देवताओं के निमित्त किए गए यज्ञों का प्रभाव मनु के हृदय पर सुन्दर जादू के समान पड़ने लगा"*। मनु ने सूखी डालियों की समिधा बनाकर यहीं पाक यज्ञ भी किया था।[2]

हिमालय की भूमि पर असुर पुरोहित किलात एवं आकुलि द्वारा पशु वध करके यज्ञ संपन्न करने का संकेत भी मिलता है जैसे–

"यज्ञ समाप्त हो चुका तो भी धधक रही थी ज्वाला,
दारुण दृश्य! रुधिर के छींटे! अस्थि खंड की माला।"[3]

इस प्रकार छायावादी कवि प्रसाद ने हिमालय की यज्ञ[4] भूमि पर प्रकाश डाला हैं।

1. 'कुमारसंभव' - प्रथम सर्ग 1/17 - कालिदास - पृ.सं - 3

   "यज्ञांगयोनित्वमवेक्ष्य यस्थ सारं धरित्रि घरणक्षमंच।
   प्रजापतिः कल्पितयज्ञ भागं शैलाधिपत्यं स्वयमान्वितिष्ठात् ।।"

2. "पाक यज्ञ करना निश्चित कर
   लगे शालियों को चुनने,
   उधर वन्हि ज्वाला भी अपना
   लगी धूम पट थी बुनने।"

   'कामायनी' आशा सर्ग - प्रसाद - पृ.सं - 9

3. 'कामायनी' कर्म सर्ग प्रसाद - पृ.सं 37

4. 'भारतीय संस्कृति की महिमा' - डॉ॰ कृष्ण भावुक

   यज्ञः- यज्ञों के द्वारा "अभ्युदय अर्थत अलौकिक उन्नति ही नहीं, अपितु निश्रयस् अर्थात् पारलौकिक उन्नति था हित भी संपादित हो सकता है और कर्म फलों का निर्धारण, स्वर्ग प्राप्ति इत्यादि। हवनकुंड में हव्य पदार्थ डालकर अग्निहोत्र करने को ही यज्ञ कहा गया है। सांस्कृतिक दृष्टि से यज्ञ को मानवीय कर्तव्यों का सूचक कहा जा सकता है।"

छायावादी कवि निराला की *'तुम और मैं'* नामक कविता दर्शनपरक रहस्यवाद से युक्त है। निराला ने आत्मा और परमात्मा के अविच्छिन्न सम्बन्ध को हिमालय एवं सुरसरिता के ज़रिए प्रस्तुत किया है–

"तुम तुंग हिमालय श्रृंग
और मैं चंचल गति सुर सरिता
तुम विह्वल हृदय उच्छवास्
तुम प्रेम और मैं शान्ति
तुम सुरपान-घन अन्धकार
मैं हूँ मतवाली भ्रान्ति।"[1]

निराला के द्वारा प्रयुक्त अप्रस्तुत तुंग हिमालय श्रृंग तथा चंचल गति सुरसरिता; आत्मा और जीवात्मा के स्वभाव की व्यंजना करते हैं। *'तुंग हिमालय श्रृंग'* के द्वारा कवि परमात्मा की चिरन्तनता, दृढ़ता, स्थिरता और स्थितप्रज्ञता की ओर संकेत करता है; *'चंचल गति सुर सरिता'* जीव की चंचल गति, प्रवाह एवं अस्थिरता का परिचय देती है। सुरसरिता द्वारा जीव के अध्यात्म स्वभाव की व्यंजना करते हैं। परमात्मा जितना बड़ा है उतना ही बड़ा है हिमालय। हिमालय और गंगा में उटूट सम्बन्ध है, आत्मा जितनी पवित्र है उतनी ही गंगा भी। सुरसरिता जब तक हिमालय में निवसित है ईश्वर का ही रूप है उससे निसृत होकर ही वह सृष्टि का रूप प्रस्तुत करती है। हिमालय और सुरसरिता के द्वारा परमात्मा और जीवात्मा का सम्बन्ध भी प्रकट हुआ है। हिमालय पर पूर्ण रूप से सुरसरिता आश्रित है अतः हिमालय नहीं है तो गंगा भी नहीं। हिमालय द्वारा परमात्मा की श्रेष्ठता और गंगा की धारा द्वारा आत्मा की चंचलता स्पष्ट है। हिमालय का रहस्यवादी आध्यात्मिक पक्ष इसमें आया है।

1. 'अपरा' - तुम और मैं - सूर्यकान्तत्रिपाठी निराला - पृ.स - ०ठ

छायावादी कवि पंत ने हिमालय और सागर की तुलना करते हुए हिमालय के आध्यात्मिक स्वरूप को उद्घाटित करने का प्रयास किया है। कवि कहते हैं कि *"हिमालय के शिखर-शिखर ऊपर उठकर आकाश के सूक्ष्म से सूक्ष्मतर स्तरों का स्पर्श करता है अर्थात् हिमालय के उन्नत शिखरों में वास करनेवाले ऋषियों ने अपनी तपःशक्ति से सृष्टि के अनेक रहस्यों को उद्घाटित किया है। हिमालय एक तपस्वी के समान मौन, गंभीर, प्रशान्त, ऊर्ध्व, स्थिर एवं निरभिलाषी हैं।"* जैसे-

"वह मौन, गंम्भीर, प्रशान्त, ऊर्ध्व
स्थित थी, असंग, चिर निरभिलाष
आत्मा की गरिमा को भू पर
बरसाता हो अकलुष प्रकाश।"[1]

सांसारिक बन्धनों को छोड़कर हिमालय में आनेवाले ऋषिगण केवल मुक्ति ही चाहते हैं। हिमालय की निर्विकल्प चेतना श्रृंग ऐसा लगता है कि वह क्षितिज से उठकर स्वर्ग तक पहुँच गया हो। कवि कहते हैं कि-

"वह निर्विकल्प चेतना श्रृंग
उठ स्वर्ग क्षितिज से भी ऊपर
अंतर्गौरव में समाधिस्थ
अपनी ही सत्ता पर निर्भर।"[2]

हिमालय संसार केलिए आनन्ददायक है क्यों कि हिमालय का असीम सौन्दर्य उसके कण-कण में है। संसार को सागर से तुलना करके जीवन को सुख, दुःख, आशा और

1. 'अभिषेकता' - हिमाद्रि और समुद्र - सुमित्रानन्दन पन्त - पृ.सं 63
2. 'अभिषेकता' - हिमाद्रि और समुद्र - सुमित्रानन्दन पन्त - पृ.सं - 63

आकांक्षा से पूर्ण माना है। जिस प्रकार सागर तरंगायमान रहता है मन भी उसी प्रकार आन्दोलित रहता है। हिमालय स्वर्ग एवं मर्त्यलोक के बीच प्रहरी के समान खड़ा है। प्राचीनकाल से ही हिमालय स्वर्ग की सीढ़ी के रूप में विख्यात है। हिमाद्रि तथा समुद्र दोनों एक ही चेतन तत्व के दो प्रतीक है। हिमाद्रि चेतनता का ऊर्ध्व और समुद्र चेतनता का निम्न प्रतीक है। जड़ पदार्थों में चैतन्य शक्ति प्रसुप्त रहती है कि उसका आभास नहीं होता। हिमालय की ऊँचाई आकाश की गहराई में है तथा समुद्र की गहराई धरती की ऊँचाई में नापा गया है। प्रकाश के बिना छाया का अस्तित्व नहीं है उसी प्रकार सुख के बिना दुःख का अस्तित्व नहीं और हिमालय के बिना सागर का अस्तित्व भी नहीं है। सागर का जल भाप बनकर आकाश पर जाकर बादल बनता; फिर मेघ वर्षा बनकर पुनः सागर पर लौट आता है हिमालय का हिम सूर्य की किरणों के कारण पिधलघर जल बनकर सागर में गिरता है।

हिमालय को सांसारिक विषमता एवं समस्याओं से दूर खड़ा एक तपस्वी माना है जबकि सागर विषयासक्तियों से लिप्त है। जैसे–

"हिमगिरि की गहराई ऊँची
सागर की ऊँचाई गहरी
छाया-प्रकाश की संसृति के
जीवन रहस्य में है छहरी।"[1]

पंत जैसे कवि हिमालय के प्राकृतिक वातावरण का चित्रण करते हुए वहाँ आध्यात्मिक सत्ता का आभास पाते हैं–

"दृग अगोचर, - वेणु हो
एकान्त निर्जन में बजाता!
बज मृदंग ढ़िमिक ढ़िमिक स्वन

---

1. 'अभिषेकता' - हिमाद्रि और समुद्र - पन्त - पृ.सं - 63

चकित कर देते श्रवण मन
हिमशिलाओं में छिपा नद
भेद सत्ता का बताता।"[1]

भगवान कृष्ण के वेणु का स्वर इस एकान्त निर्जन में सुनाई देता है तथा शिव के ताण्डव का ढ़िमिक ढ़िमिक स्वन आँख तथा मन को चकित कर देता है यहाँ के हिमशिलाओं से निसृत होकर आनेवाली नदियों में परमात्मा का आभास होता है। कवि कहते हैं कि–

"दूर जाती दृष्टि निश्चल
शुभ्र घन हिम शशि केवल,
अकथनीय असंग सित सुख
समाधिस्थ स्वयं विधाता।"[2]

हिमालय में केवल शुभ्र हिम की ही राशि है इसे देखकर कवि को ऐसा लगता है कि ब्रह्मा यहीं समाधिस्थ होकर बैठा है।

'हिमाद्रि स्तवन' कविता में पंत ने हिमालय संबन्धी इसी आध्यात्मिकता को ओर भी पुष्ठ किया है।

"जय हिमाद्रि, जय हे!
जयति, स्वर्ग भाल अमर,
जयति, विश्व हृदय शिखर,
जयति, सत्य शिव सुन्दर,
शाश्वत अक्षय है।"[3]

1. 'चित्रांगता' - हिम अंचल - पन्त - पृ.सं - 171
2. 'चित्रांगता' - हिम अंचल - पन्त - पृ.सं - 171
3. 'गन्धवीथी' - हिमाद्रि-स्तवन - पन्त - पृ.सं - 219

इन पंक्तियों में हिमालय का जयजयकार करते हुए इसे स्वर्ग अर्थात् देवताओं का वास स्थान तक पहूँचनेवाला बताया है। विश्व शिखर हृदय से मतलब उसी भगवान से है जो कि समस्त विश्व के हृदय में निरन्तर वर्तमान रहता है। सत्य, शिव, सुन्दर स्वरूपी शाश्वत् और अक्षय भगवान का रूप भी वे हिमालय में देखते हैं। स्वयं कवि ने कहा है कि हिमालय '*देवनिलय*' है। इसी कारण यह आध्यात्मिक एवं सांसारिक दोनों बातों को मिलानेवाला पुण्यसेतु रह गया है। हिमालय का शान्तिमय वातावरण तथा यहाँ के वातावरण की निर्भयता सब कुछ उसकी आध्यात्मिकता की ओर ही लक्ष्य करती है। हिमालय संयमी तपस्वियों की तपस्या एवं उससे उत्पन्न फल '*मुक्ति का द्वारा है*' । इसी कारण वह चिर मंगलमय भी है। पावन सुर सरि की धारा वहन करने के कारण हिमालय का आध्यात्मिक महत्व ओर बढ़ गया है। हिमालय अपने में '*स्वर्णिम रव*' यानि तेजोमय एवं शब्दमय ओंकार-रूपी ईश्वर का प्रतिरूप है जहाँ पर जड़ और चेतन का समाश्रय होता है।

महादेवी वर्मा '*हे चिर महान*' कविता में हिमालय के आध्यात्मिक स्वरूप पर प्रकाश डालती हैं। इसके संबन्ध में वह कहती है कि –

"यह स्वर्ण रश्मि छू श्वेत भाल,
बरसा जाती रंगीन हास;
सेली बनता है इन्द्र धनुष,
परिमल मल मल जाता बतास!
पर रागहीन तू हिम निधान!"[1]

कूटस्थ अचल शिखरी हिमालय आत्मरूप में चिरस्थित है। हिमालय को छूनेवाली सुनहली सूर्य रश्मियाँ दिव्य ज्ञान का संकेत करती है। उसका श्वेत भाल

1. 'साध्यगीत' - हे चिर महान - महादेवी वर्मा - पृ.सं - 114

सत्तवोद्रेक का प्रतीक है। शुभ्र रूप रंग के साथ निरन्तर ऊपर उठनेवाली हिमालय की प्रवृत्ति उसके सत्व गुण का ही लक्षण है। किरणें हिमालय केलिए नाना रंगों तथा आकर्षणों का आयोजन करती है और रंगों का अविश्लेषणीय स्वरूप इन्द्रधनुष योगियों की माला की तरह हिमालय के सारी बाह्य प्रवृत्तियों को समेटकर अन्तर्मुखी कर लेता है। सुगन्धित वायु का उसे सूक्ष्म स्पर्श मिलता है। इस प्रकार सूर्य, इन्द्रधनुष और वायु आदि उसकी परिचर्या करते रहते हैं। हिमालय राग द्वेष से ऊपर उठकर शान्त रस में निमग्न है। प्रकृति का अतिक्रमण करके उसका चित्त सत्वमय बन जाता है। कवि सुमित्रानन्दन पन्त ने 'हिमाद्रि' कविता में हिमालय को अपना शिक्षक स्वीकार कर उसके आध्यात्मवृत्ति पर प्रकाश डाला है। हिमालय के इस आध्यात्म स्वरूप को कवि इस प्रकार उजागर करते हैं–

"जो तुम स्वर्गिक गरिमा भू पर
बरसाते रहते न अपरिमित!
शिखर - शिखर ऊपर उठ तुमने
मानव आत्मा कर दी ज्योतित,
हे असीम आत्मानुभूति में
लीन, ज्योति श्रृंगों के भूभृत्।"[1]

हिमालय ने अपरिमित स्वर्गिक गरिमा से इस धरती को संपन्न किया है। हिमालय को ऋषि एवं तपस्वियों की तपोभूमि माना गया है। *'शिखर-शिखर ऊपर उठ'* कहकर कवि ने उसके समाधिस्थ होकर बैठने या ध्यानावस्थित रहने का संकेत किया है। यहाँ आकर तपस्या करने से मानव मन शांत हो जाता है तथा मानव आत्मा को ज्योतित करता है। आगे वे कहते हैं –

1. 'तारापथ' हिमाद्रि - सुमित्रानन्दन पंत - पृ.सं - 105

"घनिभूत अध्यात्म तत्व -से
जिससे ज्योति सरित शत निःसृत
प्राणों की हरियाली से स्मित
पृथ्वी तुमसे महिमा मंडित।
स्फटिक सौध -से श्री शोभा के
रश्मि रेख श्रृंगों से कल्पित,
स्वर्ग खंड तुम इस वसुधा पर
पुण्य तीर्थ है, देव प्रतिष्ठित।"[1]

अपनी असीम आत्मानुभूति में लीन हिमालय घनी भूत आध्यात्म तत्व से मंडित है। यहाँ से निःसृत होकर आनेवाली सरिताओं ने इस धरती को प्राणवत् बनाया तथा उसे हरा-भरा किया है। इस प्रकार पृथ्वी को हरितिमा प्रदान करनेवाले हिमालय की महिमा अवर्णनीय है। यह वसुन्धरा स्वर्ग खण्ड के समान हिमालय की महिमा से मण्डित है।

इस प्रकार छायावादी हिन्दी कविता में हिमालय के आध्यात्मिक संदर्भ के अन्तर्गत हिमालय की यज्ञ- संस्कृति पर प्रकाश डाला गया है। प्रलय पश्चात् मनु द्वारा पाक यज्ञ संपन्न कराने तथा किलात और आकुली द्वारा पशुवध कर यज्ञ कराने का उल्लेख हुआ है। हिमालय को परमात्मा तथा हिमतनया गंगा को आत्मा मानकर हिमालय पर पूर्ण रूप से आश्रित बताकर हिमालय को योगी समान दृढ़ एवं स्थिर बताया है। हिमालय और सागर की तुलना कर हिमालय को मौन, गंभीर, ऊर्ध्व, स्थिर, निरभलाषी *'निर्विकल्प चेतना श्रृंग'* कहा है। पर सागर तरंगायमान है दुःख, आशा, आकांक्षा से पूरित है। हिमालय और सागर को एक ही चेतन तत्व के दो प्रतीक माना है। हिमालय के प्राकृतिक वातावरण में भगवान कृष्ण,

---

1. 'तारापथ' हिमाद्रि - सुमित्रानन्दन पंत - पृ.सं - 105

शिव तथा ब्रह्मा का आभास देखा गया है। हिमालय को 'स्वर्ग द्वार' या '*मुक्ति द्वार*' बताकर उसे मर्त्यलोक एवं स्वर्ग के बीच की सीढ़ी बताया है।

छायावादी कविता में हिमालय के नैतिक संदर्भ

हर युग के कवियों ने हिमालय में मानव सहज गुणों को पाने का संकेत किया है। भारतीय संस्कृति के गौरव चिह्नों में एक हिमालय भी रहा है। इसलिए छायावादी कवियों ने भी किसी सद्व्यवहार की अभिव्यक्ति केलिए हिमालय को चुनना सर्वथा उचित माना। हिमालय इनकेलिए मानव सहज श्रेष्ठ गुणों का भण्डार रहा। छायावादी कवयित्रि महादेवी वर्मा कहती है कि "*हिमालय अपना सिर ऊपर उठाकर इस प्रकार खड़ा है मानो वह अपने आत्म-सम्मान में अडिग है। किन्तु जीवन के लघुतम रूपों से भी उसे सहानुभूति और ममता है। इसलिए धूल जैसी नगण्य वस्तु को भी वह अपनी गोद में लिए रहता है। संसार-व्यापी दुःख को देखकर हिमालय का मन पिघलकर जलस्रोतों के रूप में प्रवाहित हो उठता है और उसका साधनाशील शरीर वज्र के आघात को भी सह लेता है।*" इस प्रकार हिमालय अपनी साधना में दृढ़ एवं कठोर होकर भी अपनी भावना में अत्यन्त कोमल एवं सदय है। हिमालय अपने नैतिक सद्व्यवहार से ममता, सहानुभूति एवं करुणा का भण्डार है। छायावादी कवयित्रि महादेवी वर्मा लिखती हैं –

"नभ में गर्वित झुकता न शीश,
पर अंक लिये है दीन क्षार
मन गल जाता नत विश्व देख,
तन सह लेता है कुलिश भार।
कितने मृदु कितने कठिन प्राण।"[1]

1. '*सान्ध्यगीत*' - हे चिर महान - महादेवी वर्मा - पृ.सं - 83

छायावादी कवयित्रि ने आगे हिमालय में एक तपस्वी सहज गुण पाया है। भारतीय संस्कृति ने स्वार्थ को हेय मानकर परोपकार को प्रश्रय दिया है। तपस्वी के समान हिमालय भी मौन-व्रत धारी है, जनमंगल करनेवाला है, तथा अपनी समाधि में अडिग रहनेवाला यह पर्वत त्याग एवं दानशीलता आदि गुणों से युक्त भी है। शिव की समाधि पीठ रहते-रहते स्वयं हिमालय भी समाधिस्थ हो गया है और अपनी समाधि में अविचल और स्थिर है। सांसारिक उलझनें, झंझट, विघ्न, बाधाएं उसका कुछ नहीं बिगाड़ सक्ती। वह अड़चनों से हतप्रभ नहीं होता। उसके सामने बाधाएं स्वयं हार मान लेती है। ऐसा दृढ़व्रती हिमालय छोटे से उत्तप्त कण की पुकार सुनकर झरनों, नदियों के रूप में करुणा के आँसू बहाता है और उसकी जलन को शांत करने का प्रयत्न करता है। हिमालय स्थितप्रज्ञ की तरह सौम्य, संतुलित और शान्ति में अडिग रहता है। बाहरी परिस्थितियाँ उसका कुछ भी बिगाड़ नहीं सकती। कवयित्रि अपने भाव को इस प्रकार शब्दबद्ध करती है–

"टूटी है कब तेरी समाधि,
झंझा लौटे शात हार-हार,
बह चला दृगों से किन्तु नीर,
सुनकर जलते कण की पुकार।
सुख से विरक्त दुःख में समान।"[1]

हिमालय अपने नैतिक गुणों से इतना श्रेष्ठ है कि छायावादी कवि उससे गहरे रूप से प्रभावित होते हैं। महादेवी वर्मा जैसी कवयित्रि का आग्रह यह है कि चुपचाप शन्तिपूर्वक उसका जीवन हिमालय के व्यक्तित्व और प्रभाव से आज पूर्ण तादात्म्य हो जाए, जिससे उसका शरीर हिमालय की साधना सी दृढ़ता पा ले, और मन उसकी असीम करुणा की थाह पाकर उसी की तरह करुणापूर्ण बन जाए। कवयित्रि कहती है –

1. 'सान्ध्यगीत' - हे चिर महान - महादेवी वर्मा - पृ.सं - 84

"मेरे जीवन का आज मूक,
तेरी छाया से हो मिलाप,
तन तेरी साधकता छू ले
मन ले करुणा की थाह नाप
उर में पावस दृग में विहान।"[1]

जिसप्रव ार हिमालय के हृदय में करुणा का आवास और दृष्टि में ज्योति का उल्लास है उसी प्रकार कवयित्रि का हृदय करुणापूर्ण और उसकी दृष्टि दिव्य ज्योति से समान्वित हो जाता है। हिमालय एक ओर कठोर एवं दृढ़ है तो दूसरी ओर करुणा एवं त्याग की मूर्ति है। हिमालय के इस अनोखे व्यक्तित्व ने कवयित्री को प्रभावित किया है।

छायावादी कवि प्रकृति प्रेमी रहे थे। हिमालय का प्रकृति - चित्रण करते हुए इन कवियों ने हिमालय में मानव सहज गुणों को पाया है। हिमालय ने सहानुभूति, ममता, त्याग, मानसिक दृढ़ता, करुणा आदि गुणों का संकेत कराकर प्रस्तुत युग की जनता को इन्हें अपनाने का आह्वान दिया। प्रसाद ने हिमालय को मानव के समान हँसने,[2] तपस्या करने,[3] बोलने, अकड़ने या आकाश को छूने केलिए मचलने[4] का चित्रण किया है। कवि कहते हैं-

"छूने को अंबर मचली-सी बढ़ी जा रही सतत ऊँचाई!
विक्षत उसके अंग, प्रकट थे भीषण खड्ड भयकरी खाई।"[5]

---

1. 'सान्ध्यगीत' - हे चिर महान - महादेवी वर्मा - पृ.सं - 84
2. 'कामायनी' - आशा सर्ग - प्रसाद - पृ.सं - 9
   "उस असीम नीले अंचल में...... फूट चली करती कल गान।"
3. 'कामायनी' - इडा सर्ग - प्रसाद - पृ.सं - 50
   "देख मैं ने वे शैल श्रृंग
   जो अचल हिमानि से रजित, उन्मुखत उपेक्षा भरे तुंग
   अपने जड़ गोरव के प्रतीक वसुधा का कर अभिमान भंग
   अपनी समाधि में रहे सुखी, वह जाती है नदियाँ अबाध।"
4. 'कामायनी' - रहस्य सर्ग - प्रसाद - पृ.सं - 102
5. 'कामायनी' - रहस्य सर्ग - प्रसाद - पृ.सं 102

अर्थात् हिमालय की ऊँचाई इतनी अधिक थी कि उसे देखकर यह प्रतीत होता था कि मानो वह आकाश को छूने केलिए मचल उठी हो और इसलिए निरन्तर बढ़ती जा रही है। पर्वत में जहाँ-तहाँ भीषण और भयंकर गड्ढे तथा खाई थी जो पर्वत के टूटे-फूटे अंग के समान दिखाई देते थे। इसमें हिमालय का मानवीकरण हुआ है। हिमालय को आत्मसम्मान में अडिग बताया है।[1] हिमालय इतना श्रेष्ठ है कि उसे अपने आप पर गर्व है। हिमालय को अपने अतुल वैभव पर गर्वित होकर चारों ओर देखने का चित्रण किया है। छायावादी कवि स्वतन्त्रता के आकांक्षी अवश्य रहे थे। ये अपनी बातों को सीधे ठंग से स्पष्ट करने से भी अधिक हिमालय जैसे उपादान के माध्यम से स्पष्ट करते थे। अंग्रेज़ों की गुलामी व्यवस्था से मुक्त होने केलिए सबसे पहले भारतीय जनता में आत्माभिमान रहें। हिमालय का यह आत्माभिमानी स्वरूप दिखाने का उद्देश्य भी यही रहा। हिमालय का परोपकारी गुण दिखाते हुए कवि प्रसाद लिखते हैं कि प्रलय सागर में डूबती धरती का हाथ पकडकर उद्धार करनेवाला या उसे सहारा देनेवाला है हिमालय[2] तथा विश्व के निर्माण करनेवाले सृष्टा के मन में उठनेवाले उच्च विचारों के समान हिमालय सबको सुख, शीतलता और संतोष प्रदान करता है। छायावादी कवि कहते हैं कि हिमालय के अतुल वैभव, स्वरूप एवं गुणों ने उसे एक यशस्वी राजा का रूप प्रदान किया है। प्रसाद इस भाव को इस प्रकार व्यंजित करते हैं कि पुराने ज़माने में सम्राटों के दरबारों में चारण लोग रहा करते थे जो सम्राट की वीरता,

---

1. 'कामायनी' - रहस्य सर्ग - प्रसाद - पृ.सं - 102
   "ऊर्ध्व देश उस नील तमस में स्तब्ध हो रही अचल हिमानी,
   पथ थक कर हैं लीन, चतुर्दिक देख रहा वह गिरि अभिमानी।"
2. 'कामायनी' - आशा सर्ग - प्रसाद - पृ.सं - 9
   "विश्व-कल्पना-सा ऊँचा वह सुख-शीतल-संतोष-निदान
   और डूबती-सी अचला का अवलंबन-मणि-रत्न-निधान।"

पराक्रम, दृढ़ता आदि का यशोगान कर उनका प्रचार करते थे और यथेच्छ पुरस्कार भी पाते थे। पवन को चारण तथा हिमालय को यशस्वी राजा बनानावाले कवि लिखते हैं-

"शिला-सन्धियों से टकराकर पवन भर रहा था गुंजार
उस दुर्भेद्य अचल दृढ़ता का करता चारण सदृश प्रचार"[1]

पवन हिमालय की शिला संधियों से टकराकर गुंजार भर रहा था अर्थात हिमालय की दुर्भेद्य अचलता एवं दृढ़ता का पवन चारण सदृश्य प्रचार कर रहा था। छायावादी कविता में हिमालय के नैतिक गुणों पर प्रकाश डालने से यही स्पष्ट हो जाता है कि हिमालय में भी मानव सहज श्रेष्ठ गुण पाया गया है। इसमें ममता, सहानुभूति, करुणा, आत्माभिमान, परोपकार, जनमंगल, त्याग, दानशीलता, दृढ़व्रती, सौम्य, संतुलित आदि गुण पाए गए हैं। हिमालय के इस अनोखे व्यक्तित्व से प्रभावित होकर कवयित्री इन्हें अपनाना चाहती है। छायावादी कवि हिमालय में इन गुणों को दिखाकर जनता को उद्‌बोधित करते हैं।

छायावादी कविता में हिमालय के राष्ट्रीय संदर्भ

छायावादी कविता में हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ को उद्‌घाटित करने केलिए हिमालय के राष्ट्रीय पक्ष पर भी विचार किया गया है। छायावाद के कवियों ने हिमालय संबन्धी राष्ट्रीय कविताएं बहुत कम ही लिखी हैं। फिर भी भारत के प्राकृतिक वर्णन में हिमालय को स्थान देते हुए उसके राष्ट्रीय महत्व को उजागर किया है। इनके गीतों में भारत माँ के प्रति प्रेम और श्रद्धा की स्पष्ट अभिव्यक्ति हुई है। प्रस्तुत युग के कवियों ने हिमालय संबन्धी गीतों के माध्यम से सांस्कृतिक नव जागरण, अतीत गौरव गान एवं राष्ट्रीय वन्दना की है। इन कवियों ने हिमालय जैसे देश के भौगोलिक मान बिन्दुओं के प्रति अनुराग प्रकट

1. 'कामायनी' - आशा सर्ग - प्रसाद - पृ.सं - 9

करते हुए देश की सांस्कृतिक निधि पर भी प्रकाश डाला है। हिमालय जो भारत का गौरव प्रतीक है जिसे कवियों ने राष्ट्रप्रेम को प्रकाशित करने तथा राष्ट्र की अखण्डता को कायम बनाकर रखने का एक उपादान माना है।

"भारती जय विजय करे
कनक - शस्य कमल धरे
लंका पदतल - शतदल
गर्जितार्मि सागर - जल,
धोती शुचि चरण - युगल
स्तव कर बहुत अर्थ भरे।
तरु-तृण-वन-लता-वसन,
अञ्चल में खचित सुमन
गंगा ज्योतिर्जल कण
धवल धार हार गले।
मुकुट शुभ्र हिम-तुषार,
प्राण प्रणव ओंकार
ध्वनित दिशाएं उदार
शतमुख शतरव मुखरे।"[1]

छायावादी कविता में भारत को देवी के साथ उपमित किया है जो कनक, शस्य और कमल को धारण किए हुए है, लंका जिसके पदतल पर है सागर जिसके श्री चरणों को अपने जल से धोता है, जिसके वसन में तरु, तृण, लता है और साड़ी के अंचल में सुमन भी जड़ित है, गंगा का जल गले का हार है, हिमालय उसका मुकुट है जहाँ से ओंकार की ध्वनि चारों ओर मुखरित होती है। भारत को देवत्व की उपाधि प्रदान करनेवाले कवि ने

---

1. 'अपरा' - भारती वन्दना - सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला पृ.सं 11

उसके श्रेष्ठ आभूषण के रूप में हिमालय से निसृत गंगा (हार) तथा हिमालय (मुकुट) को चुना है। हिमालय ऋषियों की तपस्थली है। यहाँ तपस्या करनेवाले ऋषियों के मुख से निकलनेवाली ओंकार ध्वनि चारों दिशाओं को पवित्र बनाती है। हिमालय बाहरी और भीतरी तौर से शुभ्र है। *'शतमुख-शतरव मुखरे'* कहकर कवि ने हिमालय को सौ से भी अधिक ऋषियों की तपस्या से संपन्न भूमि घोषित की है। इससे हिमालय का आध्यात्मिक स्वरूप भी सामने आ जाता है। हिमालय का इस प्रकार का आध्यात्मिक स्वरूप एक ओर राष्ट्र की दृढ़ सांस्कृतिक नींव कायम रखता है तो दूसरी ओर समाज को नैतिक बल प्रदान करता है। इस प्रकार हिमालय का राष्ट्रीय सांस्कृतिक जागृति का भव्य रूप प्रकट होता है। जयशंकर प्रसाद ने अपनी प्रसिद्ध कविता द्वारा हिमालय के राष्ट्रीय रूप दिखाकर भारतीय जनता को जगाने की कोशिश की। हिमालय के सर्वोच्च शिखर से स्वतन्त्रता की गर्जना करनेवाले कवि प्रसाद को मातृभूमि के सपूतों के प्रति गर्व है। हिमालय से निसृत राष्ट्रीय स्वर इस प्रकार उजागर होता है–

"हिमाद्रि तुंग श्रृंग से
प्रबुद्ध शुद्ध भारती
स्वयं प्रभा समुज्जवला
स्वतन्त्रता पुकारती
अमर्त्य वीर पुत्र हो,
दृढ़ प्रतिज्ञ सोच लो
प्रशस्त पुण्य पन्थ है
बढ़े चलो, बढ़े चलो।"[1]

प्रस्तुत कविता द्वारा कवि ने स्वतन्त्रता प्राप्ति केलिए कटिबद्ध जनमानस का एक ओर संस्कृति के प्रति प्रेम आकर्षण की वृद्धि करा दी तो दूसरी ओर भारत राष्ट्र के प्रति उनमें अपनत्व का भाव भी उजागर किया।

1. 'चन्द्रगुप्त' जयशंकर प्रसाद - पृ.सं 177

छायावादी कविता में राष्ट्रीय भाव को जगाने केलिए कवियों ने अवश्य ही इतिहास या अतीत का आश्रय लिया है। अतीत वैभव का चित्रण कर कवियों ने वर्तमान जनता को सचेत करना चाहा है। हिमालय जो अनादि काल से भारत भूमि पर खड़ा है वह यहाँ का एक एक ऐतिहासिक घटना का साक्षी रहा है। अतीत का स्मरण इसलिए आवश्यक है कि हम भारत के उच्चादर्शों और जीवन-मूल्यों को समझ सकें, जो हमारे जातीय अस्मिता के संवाहक रहे हैं। *'भरत'* नामक कविता में प्रसाद ने हिमालय के प्राकृतिक वातावरण का चित्रण करके, भारतीय सांस्कृतिक गरिमा को कायम रखनेवाले राजा भरत के हिमालयी परिवेश में बिताए गए बचपन का संकेत किया है। भारत नाम को सार्थक करनेवाले राजा भरत ने हिमालय की भूमि पर अपना बचपन किस प्रकार बिताया यही कविता का सार है। भारत के गर्व को कायम करनेवाले हिमालय के उन्नत शिखर का कवि इस प्रकार चित्रण करते हैं–

"हिमगिरि के उत्तुंग शिखर है सामने
खड़े बताता है भारत के गर्व को
पड़ती इस पर जब माला रवि रश्मि की
मणिमय हो जाता है नवल प्रभातम।"[1]

अतीत में हिमालय का प्राकृतिक वातावरण इतना रमणीय था कि कवि उसे इस प्रकार शब्दबद्ध करता है –

"हिमालय के इस वातावरण में सांसारिक ताप नहीं,
सूर्य ताप भी सुखद होता है, हिम - शिखरों में
कमल खिले हैं, कहीं दुःख या संकोच नहीं है,
चन्द्रप्रभा में भी हिम गलकर नदी बन जाते हैं,
चन्द्रकान्त के समान ये हिमखंड मनोज्ञ हैं, तपस्वी
हिमालय की जटा समान श्रृंगों पर लताएं लटकी हुई है।"[2]

---

1. 'प्रसाद ग्रंथावली - 1 काव्य' - काननकुसुम भरत - पृ.सं - 149
2. 'प्रसाद ग्रंथावली - 1 काव्य' - काननकुसुम भरत - पृ.सं - 149

हिमालय में अनेक स्वादिष्ट फलों से भरा कानन है। हिमालय की ऐसी रम्य अधित्यिका के समीप ऋषि कश्यप का आश्रम है। इसके पास एक बालक शिशु सिंह के मुंह खोलकर दाँत गिनने की कोशिश करता है। इस वीर बालक के औदात्य को देखकर सिंहिनी गरजने लगती है तो वह उसे डाँटता है और भाग जाने की चेतावनी देता है। इसी वीर बालक भरत ने अपनी बलशाली भुजदण्ड से भारत का साम्राज्य प्रथम बार स्थापित किया था। अतीत घटना को ताज़ा करके कवि यही दिखाना चाहते हैं कि हिमालय की अधित्यिका यद्यपि शांत एवं सुन्दर है फिर भी उसने वीर, शूर, साहसी योद्धाओं को साहस का पाठ अवश्य पढ़ाया है। इस प्रकार संस्कृति को रूपायित करने में अतीत घटनाओं का बहुत बड़ा स्थान रहा है।

छायावादी कविता में हिमालय को राष्ट्रप्रेम जगाने, राष्ट्र की अखण्डता को कायम करने, मातृभूमि के स्तवन के संदर्भ में लेकर उसके राष्ट्रीय रूप पर विचार हुआ है। राष्ट्र की वर्तमान परिस्थितियों से जनता को अवगत कराने केलिए हिमालय में घटित अतीतकालीन घटनाओं का दृढ संबल लेते हैं। कवि ने भरत जैसे वीर, शूर, पराक्रमी का हिमालय भूमिसे संबन्ध दिखाकर हमारे राष्ट्रीय गौरव को बढ़ाया है। हिमालय के माध्यम से अतीतकालीन सांस्कृतिक उत्कर्ष तथा वर्तमान सांस्कृतिक ह्रास दिखाकर जनता को सचेत किया है।

छायावादी कविता में हिमालय सम्बन्धी कविताओं का सृजन एवं उद्देश्य

छायावाद के प्रमुख हस्ताक्षर प्रसाद का '*भरत*' तथा 'प्रयाण गीत' राष्ट्रीय संदर्भ को प्रमुखता देनेवाली कविताएं है। '*भरत*' तथा 'कामायनी' की कथा की आधार भूमि हिमालय है। दोनों का नायक इतिहास में श्रेष्ठ है। भरत, भारत का प्रथम सम्राट और मनु, मानव संस्कृति का आदि पुरुष। दुष्यन्त द्वारा परित्यक्त शकुन्तला को तथा प्रलय पश्चात्

बचे हुए देव संस्कृति के प्रतीक मनु को हिमालय ने शरण दिया है। हिमालय इस प्रकार अपने अभय में आनेवालों केलिए शरण स्थान हैं। हिमालय स्वयं भारतीयों के सम्मुख उदाहरण बन जाता है। कवि हिमालय की प्रकृति में मानवीय सहज सद्गुणों का चित्रण कर आम जनता को उद्बोधित करना चाहता है। भारतीय संस्कृति को श्रेष्ठ बनानेवाले नैतिक आयामों को इस हिम भूमि पर उतार देने में कवि सक्षम रहे हैं। हिमालय को स्वयं अपने वैभव पर गर्व करता हुआ, यहाँ से निस्तृत नदियों द्वारा इसका गौरव गान करने, यहाँ बहनेवाले पवन का चारण मानकर कवि हिमालय के गौरव को बढाता है। कश्यपाश्रम, मानसरोवर, कैलास, सरस्वती नदी, गंगा जैसे भौगोलिक मान बिन्धुओं पर विचार किया गया है। कामायनी के अंत में बताया है कि कैलास पर्वत पर पहुँचकर मनु श्रद्धा तथा सारस्वतवासियों में आनन्द, उमंग एवं उल्लास छाया रहता है। प्रसाद के हिमालय संबन्धी काव्यों का मुख्य उद्देश्य यहाँ के प्राकृतिक और पौराणिक घटनओं को ताज़ा कर भारतीय संस्कृति में इसके स्थान का अंकन करना रहा है।

सुमित्रानन्दन पन्त के प्राकृतिक कविताओं का वर्णय विषय अधिकांशतः हिमालय ही रहा है। 'हिमाद्रि' कविता में कवि हिमालय के प्रकृति को अपना शिक्षक मानते हैं हिमालय का कवि के जीवन में स्थान को अंकित कर उसके सुन्दर प्रकृति तथा मदन-दहन जैसे पौराणिक प्रसंग पर प्रकाश डाला है। 'हिम-अंचल' कविता हिमालय में ईश्वरीय सत्ता (भगवान कृष्णा, शिव एवं ब्रह्मा) का आभास पाया है कवि इसके आध्यात्मिक संदर्भ को उजागर करता है। *'हिमाद्रि स्तवन'* में हिमालय की स्तुति करके उसकी महानता पर विचार किया गया है। *'हिमाद्रि और समुद्र'* में भी हिमालय का आध्यात्मिक रूप सामने आ जाता है हिमालय तपस्वी समान *'निर्विकल्प चेतना श्रृंग'* है *'पर्वत प्रदेश में पावस ऋतु'* नामक कविता में हिमालय के बदलते प्राकृतिक परिवेश का चित्रण कर इसका मानवीकरण किया है।

'पहाड़ी प्रान्त एक स्मृति', *'कूर्माचल के प्रति'*, *'शैशव और प्रकृति'* ये सभी कविताएं कवि का हिमालय के प्राकृतिक परिवेश से गहरे संबन्ध को द्योतित करता है।

छायावादी कवि निराला की कविता *'भारती-वन्दना'* में हिमालय का राष्ट्रीय स्वरूप को प्रखर बताया है। *'तुम और मैं'* नामक कविता में हिमालय के आध्यात्मिक स्वरूप दिखाकर हिमालय को परमात्मा बताया है छायावाद का प्रमुख लक्षण काल्पनिकता निराला के हिमालय संबन्धी कविता 'कैलाश में शरद' में पाया जाता है।

छायावादी कवयित्रि महादेवी वर्मा ने *'हे चिर महान'*, *'वेष धरे'*, *'तू भू के प्राणों का शतदल'* तथा *'हिमालय'* आदि कविताओं के ज़रिए हिमालय के प्रति अपने अनन्य प्रेम एवं आदर को सूचित किया है। प्रत्येक कविता में हिमालय को खास दृष्टिकोण से देखा गया है। महादेवी वर्मा ने *'हे चिर महान'* काव्य का सृजन करके हिमालय में मानवीय सहज गुण करुणा, त्याग, दृढ़ता, सहानुभूति, ममता, शान्ति आदि नैतिक आयामों को अंकित किया है। प्रस्तुत कविता में महादेवी जी का मूल भाव अध्यात्म का बहुत ही सरस मोहन रूप है। इस कविता में कवयित्रि और हिमालय का तादात्म्य इस बात को पुष्ट करता है कि हिमालय के सारे कथित गुण और उसकी सम्पूर्ण विशेषताएं कवयित्रि में सूक्ष्म रूप से अवस्थित है अतः दोनों में समात्मभाव है।

कवि में जो सहज गुण होना चाहिए वह कवयित्रि ने हिमालय में पाया है। हिमालय सत्वस्थ है। उत्तम काव्य रचना केलिए कवि का सत्वस्थ होना अनिवार्य है। अनासक्त (सभी से एक प्रकार विरक्त) होने के कारण सत्वस्थ चित्त ही सात्विक सौन्दर्य की सृष्टि और उसका उपभोग कर सकता है। हिमालय योगी की भांति समाधिस्थ है। कवि भी अपनी बाहरी वृत्तियों को समेटकर अन्तमुर्खी कर लेता है – समाधिस्थ हो जाता है, अन्यथा काव्य रचना उदात्त नहीं हो सकती। एक ओर हिमालय के नैतिक गुण एवं आध्यात्मिक

स्वरूप को दिखाकर स्वयं हिमालय को तपस्वी माना है तो दूसरी ओर हिमालय और कवि का लोकमंगलदायी रूप इस कविता से स्पष्ट किया है। हिमालय के ऊर्ध्व स्थल से जिस प्रकार सरस स्रोत फुट निकलते हैं, उसी प्रकार कवि चेतना के ऊर्ध्व तल से सरस कविता का प्रवाह बह निकलता है। सूर्य किरणों की ऊष्मा से विगलित होकर हिमालय का हिम धरती की तृषा शान्त करते हुए उसे उर्वर बनाते हुए समतल में प्रवाहित होने लगता है। कवि भी जीवन की अनुभूतियों की ऊष्मा से द्रवित होकर कविता के रूप में विश्व मंगल का विधान करता है। सूर्य का प्रकाश ज्ञान जैसे हिम के विगलन का कारण है, वैसे ही जीवन का ज्ञान कविता का कारण है। सूर्य किरण और हिम के सम्पर्क से जिस अविश्लेषणीय इन्द्रधनुषी सौन्दर्य की सृष्टि होती है, वही सौन्दर्य कवि का भी मूलाधार है। जल स्रोतों के रूप में हिमालय का आत्मत्याग प्रत्यक्ष है तो कविता के रूप में कवि का आत्मत्याग ही संचित रहता है। हिम का रूपान्तरित रूप जल धरती को हरी भरी पल्लावित - पुष्पित बनाता है, तो कवि भी अपने काव्य रस से विश्व जीवन को समृद्ध, सम्पन्न और सार्थक बनाता है। हिमालय पर अचल और अविकार हिम का अनासक्त प्रसार एवं प्राचुर्य है, जो अचल, अविकार और अनासक्ति का प्रतीक है, किन्तु वही हिम लोक मंगल की साधना और सार्थकता केलिए द्रवित होकर करुणा के प्रवाह के रूप में संसार के प्रति अनासक्त होकर निरन्तर प्रवाहित, गतिशील और कार्यरत रहता है। आत्मस्थ कवि अध्यात्म के उच्च-शिखर पर आरूढ़ होते हुए भी लोक मंगल की साधना में संलान रहता है।

'तू भू के प्राणों का शतदल' कविता में भूमि का सबसे सुन्दर श्वेत कमल के साथ हिमालय की तुलना की है। हिमालय की धवलिमा को संसार के सबसे धवल चीज़ों के साथ तुलना करते हुए कवयित्रि ने हिमालय के अनुपम सौन्दर्य को दिखाया है।

'वंष धरे' कविता में हिमालय को भगवान कृष्ण के रूप में देखा गया है। प्रस्तुत कविता द्वारा कवयित्रि ने हिमालय वे धार्मिक महत्व को चित्रित किया है।

चीन युद्ध के पश्चात् *'हिमालय'* नामक संकलन को प्रकाशित करने में कवयित्रि का राष्ट्रीय उद्देश्य रहा है। पुराणों से लेकर आधुनिक हिन्दी कवियों की कविताओं की झलक दिखाकर कवयित्रि ने हिमालय की ओर जनता को सचेत किया है। इस प्रकार महादेवी वर्मा के हिमालय संबन्धी कविताओं के सृजन में वैविद्यता पायी जाती है।

निष्कर्ष

संक्षेप में छायावादी युग में ही हिमालय से सम्बन्धित श्रेष्ठ एवं अधिक कविताएं पायी जाती है। हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ को उद्घाटित करने केलिए प्रस्तुत युग के प्रमुख कवियों ने जैसे महादेवी वर्मा, प्रसाद, पंत, निराला ने हिमालय के भौगोलिक, प्राकृतिक, धार्मिक, नैतिक, आध्यात्मिक एवं राष्ट्रीय स्वरूप पर प्रकाश डाला है। महादेवी वर्मा हिमालय को कृष्ण के रूप में पाती है तो प्रसाद इसे भगवान शंकर एवं उमा का वास स्थान मानकर इसमें भगवान शिव का आभास पाता है (जो इनके शैवागम संप्रदाय का परिणाम है)। मातृ अंचल से वंछित पंत ने हिमालय को माँ के रूप में देखा जो उनकेलिए बचपन की शिक्षिका रही। हिमालय से सबसे अधिक कविताएं पंत ने लिखी है। छायावाद का सबसे प्रमुख महाकाव्य कामायनी का आरंभ और परिसमप्ति हिमालय की गोद में करते हुए प्रसाद ने हिमालय को आदि पुरुष मनु का वास स्थान बताकर प्रलय पश्चात् मानव सृष्टि का विकास हिमालय में करते हुए मानवीय सहज क्रियाकलापों को प्रकृति (हिमालय) में दिखाकर इसके सांस्कृतिक महत्व को उद्घाटित किया है।

चौथा अध्याय

प्रगतिवादी हिन्दी कविता में हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ

प्रगतिवादी हिन्दी कविता में हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ

प्रगतिवादी हिन्दी काव्य एवं काव्यागत प्रवृत्तियाँ - एक परिचय

सन् 1936 ई में छायावाद-युग की समाप्ति के पश्चात् एक नयी सामाजिक चेतना को लिए हुए जिस काव्य-युग की प्रतिष्ठा हिन्दी-साहित्य के क्षेत्र में हुई, उसके कृतित्व को सामान्यतः प्रगतिवादी अथवा प्रगतिशील काव्य इन नामों से पुकारा जाता है। प्रगतिवाद आधुनिक हिन्दी साहित्य की एक प्रमुख प्रवृत्ति है। आज का प्रगतिवादी मार्क्सवाद का समर्थक है। वह मार्क्सवाद के सिद्धान्तों के आधार पर समाज की उन्नति केलिए प्रयत्नशील है। राजनीतिक क्षेत्र में जो सिद्धान्त मार्क्सवाद या समाजवाद के नाम से विख्यात है, वही साहित्य क्षेत्र में प्रगतिवाद कहलाता है।

प्रगतिवाद का प्रेरणा स्रोत मार्क्स का द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद है। मार्क्स के अनुसार सृष्टि में दो तत्व है - स्वीकारात्मक और नकारात्मक। इन दोनों तत्वों के संघर्ष का नाम ही जीवन है। मार्क्सवाद पर आधारित प्रगतिवाद के सिद्धान्तों के अनुसार भौतिक जीवन ही सत्य है। मानव के भौतिक जीवन का संबन्ध समाज से है। समाज की उन्नति अर्थिक व्यवस्था पर आधारित है। धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष में प्रगतिवादी केवल '*अर्थ*' को ही स्वीकार करते हैं। मार्क्सवादी विचार धारा का समर्थक प्रगतिवादी साहित्यकार अर्थिक विषमता को ही वर्तमान दुःख एवं अशान्ति का कारण स्वीकार करता है। इस अर्थिक विषमता के कारण समाज में दो वर्ग स्थापित हो चुके है। एक वर्ग का अर्थ पर पूरा प्रभुत्व है - पूँजीपति वर्ग; दूसरा शोषक वर्ग है, जिसके श्रम पर पूँजीपति वर्ग फूलता - फलता है।

आज का प्रगतिवादी वर्गविहीन समाज की स्थापना में विश्वास रखता है। प्रगतिवादी समाजवाद का समर्थन एवं पूँजीवाद का विरोधी है। प्रगतिवादी किसान, मज़दूर

आदि निम्न वर्ग के प्रति सहानुभूति दिखाता है। प्रगतिवादी साहित्यकार संस्कृति और कला का मार्क्सवादी दृष्टिकोण से मूल्यांकन करता है। वह पुरानी सड़ी-गली संस्कृति का नव निर्माण करना चाहता है। वह कला को कला केलिए न मानकर कला को जीवन केलिए मानता है कला को जनसाधारण की उपभोग की वस्तु बनाना चाहता है। प्रगतिवादी कवि अपनी कविता में इसी भौतिक जगत् का चित्र प्रस्तुत करता है। कविता का सम्बन्ध एक आदर्श एवं मनोरम कल्पना लोक से नहीं, अपितु इस ठोस धरती से है।

प्रगतिवादी, साहित्य में यथार्थवाद को प्रमुख स्थान देता है। समाज की ज्वलन्त समस्याओं की ओर जनता का ध्यान आकृष्ट करने केलिए समाज की समस्त बुराइयों के यथार्थ चित्र अंकित करता हैं। वर्गहीन समाज की प्रतिष्ठा केलिए प्रगतिवादी समाज के परम्परागत पुराने रूप को बदल देना चाहता है। समाज के अमूल परिवर्तन केलिए आज का प्रगतिवादी क्रांन्ति का स्वागत करता है। समाज में प्रचलित पुरानी कुप्रथाओं, अन्धविश्वासों एवं रूढ़ियों को समूल नष्ट करने केलिए वह महाप्रलय, विनाश, विस्फोट, अग्निकाण्ड आदि का समर्थन करता है।

प्रगतिवादी कविता की एक प्रमुख प्रवृत्ति है राष्ट्रीयता एवं देश प्रेम। देश की धरती हो अथवा उसका निवासी, उसका अतीत हो अथवा वर्तमान प्रगतिवादी कवि को सभी से समान रूप से प्रेम है। धरती उसकेलिए माता समान है जो देश की सुख-समृद्धि की मूल उपादान है। देश की स्वाधीनता केलिए संघर्ष करती हुई जनता प्रगतिवादी कवियों द्वारा अभिनन्दित हुई है। उन्होंने उन शहीदों के प्रति भी अपनी श्रद्धांजलियाँ अर्पित की हैं जो देश का गौरव बन चुके हैं। राष्ट्रीय धारा के कवियों के समान ही इन कवियों ने भी देश की स्वतन्त्रता की वेदी पर बलिदान हो जाने की भावना को पर्याप्त महत्व प्रदान किया। जहाँ तक देश के अतीत का सम्बन्ध है, रूढ़ियों का विरोध करते हुए उसने अनेक पौराणिक एवं

ऐतिहासिक आख्यानों को नये रूपों में प्रस्तुत किया है। उसकी सांस्कृतिक निधि को नाना प्रकार से उद्घाटित किया है। उसके गत वैभव पर गौरव प्रकट किया है। प्रगतिवादी कवि की राष्ट्रीयता व देश प्रेम ने उसके काव्य को देश की धरती के साथ अभिन्न रूप से संबद्ध कर दिया है। आस्था, विश्वास, दृढ़ता की गूँज प्रगतिवादी काव्य की प्रवृत्ति है। प्रकृति-वर्णन में काल्पनिकता के स्थान पर यर्थाथता को महत्व दिया है। प्रगतिवादियों की भाषा सरल तथा जन-जीवन की भाषा के बहुत निकट है।

प्रगतिवादी हिन्दी कवि और उनकी हिमालय सम्बन्धी कविताएं - एक परिचय

प्रगतिवादी हिन्दी कवियों ने हिमालय सम्बन्धी कविताओं में यथार्थ का चित्रण, प्रकृति का सुन्दर तथा भयानक दोनों रूपों, हिमालय के पौराणिक परिप्रेक्ष्य की नये रूप में प्रतिष्ठा, देश-प्रेम एवं राष्ट्रीयता सैनिकों की श्रद्धांजलि, देश की मिट्ठी के प्रति प्रेम, क्रांति का भाव आदि को अभिव्यक्त किया है। हिमालय को अपने काव्य का विषय बनानेवाले प्रगतिवादी कवि नरेन्द्रशर्मा ने *'कौसानी'* (पलाशवन) तथा *'कूर्माचल'* (पलाशवन) में हिमालय के इन रमणीय स्थानों का परिचय कराया है। शिवमंगलसिंह *'सुमन'* ने विन्ध्य-हिमालय नामक काव्य - संकलन में *'वातायन से हिमालय दर्शन'*, *'काठमण्डू की पहली साँझ'*, *'आह्वान'*, *'चित्रकार के प्रति'*, *'दुर्गम पथ पर गीतों के झरने से'* *'आज देश की मिट्ठी बोल उठी'* आदि कविताएं प्रस्तुत की हैं जो कवि के नेपाल प्रवास के संदर्भ में लिखी गई हैं। शम्भूनाथ सिंह का *'हिमालय'*, *'रसमय-हिमालय'* (खण्डित सेतु) तथा नागार्जुन की *'बादल को घिरते देखा है'* (युग धारा) *'बरफ़ पड़ी है'* (युग धारा) *'सिन्धु नद'* (युग धारा) *'कालिदास'*, *'सजीले प्रिय देवदार'* (सतरंगे पर्खोवाली), *'देवदारू'*, *'सफ़ेद बादल'* (हज़ार हज़ार बाहोंवाली), *'बलाका'*, *'हिम-कुसुमों का चंचरीक'* आदि कविताएं प्रकृतिपरक होने के साथ कालिदासकालीन परिवेश का स्मरण कराते हैं। केदारनाथ आग्रवाल का *'गुरु-गौरव-*

गिरि सीमा पर; नीरज का *'सैनिकों का प्रयाग गीत'* (गीत भी अगीत भी), काश्मीर के नाम (नीरज की पाती), मनुष्य की एवरस्ट विजय पर (प्राण-गीत), मानसरोवर आमुख है; रामाधारी सिंह दिनकर का हिमालय, हिमालय का संदेश (नीलकुसुम), पहाड़ के फटने की आवाज़ (नीलकुसुम), परशुराम की प्रतीक्षा आदि प्रगतिवादी युग की हिमालय संबन्धी प्रमुख कविताएं है।

नरेन्द्रशर्मा

नरेन्द्र शर्मा के पलाश वन काव्य संग्रह का मुख्य विषय प्रकृति है। *'कूर्माचल'* और *'कौसानी'* कविताओं में हिमालय के प्राकृतिक दृश्यों का कवि ने बड़ी तन्मयता से वर्णन किया है। लक्ष्मीनारायण शर्मा हिमालय के प्रति कवि के लगाव को इसप्रकार अभिव्यक्त करते हैं जैसे, 'कुछ रचनाओं से कवि ने अपने गीतों के बारे में कहा है कि, *"उनके, स्वर समस्त संसार को झंकृत करते हुए देवदारु के हरित शिखरों पर अपना अन्तिम नीड़ बनाए और शुभ्र हिमालय की छाया उन्हें अपने में विलय कर अमरत्व दे।"*[1] पंतजी की भाँति नरेन्द्र शर्मा ने भी कूर्माचल प्रदेश से प्रेरणा प्राप्त की है। पर्वतीय प्रदेश के रमणीय और भयानक चित्रों का वर्णन इस संग्रह की विशेषता है। इनमें हिमालय के प्रमुख स्थान कौसानी और कूर्माचल के वर्णन मुख्य है।

'कौसानी' नामक कविता में अल्मोड़ा के निकट के रम्य पर्वतीय स्थल का चित्रण करते हुए कवि ने इसे *'कूर्माचल भर की पटरानी'* माना है। कौसानी को पार्वती का वास-स्थान तथा इसके सामने खड़े पर्वत को शिव का वास स्थान माना है। पावस ऋतु के आगमन से कौसानी में होनेवाले प्राकृतिक परिवर्तनों को दिखाकर कवि ने प्रकृति के सुन्दर तथा भयानक दोनों रूपों पर प्रकाश डाला है। कौसानी की धरती की महिमा को उजागर करने

---

1. 'नरेन्द्रशर्मा और उनका काव्य' लक्ष्मी नारायण शर्मा भूमिका

केलिए इसी धरती पर गाँधीजी के *'अनासक्ति-योग'* के नाम से गीता का भाष्य करने का चित्रण किया है।[1] *'कूर्माचल'* नामक कविता में हिमालय के इस रम्य स्थान को वसुन्धरा और स्वर्गलोक का लाल, लाड़ला, स्वर्ग सीढ़ी आदि माना गया है।[2] कूर्माचल के प्राकृतिक सौन्दर्य पर प्रकाश डालनेवाले कवि मोती की लड़ियों समान निर्झर, चीड़ वन, देवदारू कानन, फल-फूल विहगों से युक्त कूर्माचल को सबसे सुन्दर जगह माना है। कवि का अभिप्राय है-

"यों तो चिर सुन्दर निखिल सृष्टि, पर सबसे सुन्दर कूर्माचल।
वह सुन्दर से सुन्दरतर है। सुन्दरतम है वह कूर्माचल।"[3]

नरेन्द्र शर्मा की उपर्युक्त हिमालय सम्बन्धी कविताओं में हिमालय का प्राकृतिक सौन्दर्य खींचा गया है।

शिवमंगल सिंह 'सुमन'

प्रगतिवादी कवि शिवमंगल सिंह सुमन का 'विन्ध्य-हिमालय' नामक काव्य-संकलन कवि के मालव निवास और नेपाल प्रवास की संचित राशि है। विन्ध्य-हिमालय नामकरण इसी भाव भूमि का परिचायक है। हिमालय के अनुपम सौन्दर्य से कवि इतने आकर्षित हुए थे कि विन्ध्य - हिमालय नामक काव्य-संग्रह की भूमिका में हिमालय के संबन्ध में कवि स्वयं लिखते हैं कि *"नेपाल में हिमालय का अभ्रभेदी उदात्त संभार देखा तो अवाक् रह गया। जीवन में ऐसी विराट् शुभ्रता, स्वर्ग के प्रति धरती का ऐसा उल्लास मैं ने कभी नहीं देखा*

1. 'पलाश वन' - कौसानी - नरेन्द्र शर्मा - पृ.सं 30-34
2. 'पलाश वन' कूर्माचल - नरेन्द्र शर्मा - पृ.सं - 28
3. 'पलाश वन' कूर्माचल - नरेन्द्र शर्मा - पृ.सं - 28

था। पाँच वर्ष उसके अभिराम क्रोड़ में क्रीड़ा करके फिर मालवा लौट आया पाँच वर्ष बितने पर भी उसकी नैसर्गिक सुषमा एवं रमणीय सौन्दर्य आँख में समा गया।"[1]

कवि ने विन्ध्य एवं हिमालय पर्वत दोनों की तुलना की। दोनों अपनी-अपनी जगह लावण्यमय एवं प्रभामय है। कवि इन दोनों पर्वतों की विशेषताओं को इस प्रकार शब्दबद्ध करते हैं-

"हिमालय कौपीन मेखलाधारी शुभ्रवेषी सन्यासी, उद्ग्रीव हिरण्यगर्भ, जिसके तपोदीप्त शरीर से विगलित स्वर्ण रजत आशीषों का अजस्र प्रवाह और विन्ध्य नाना वर्ण गंधमय छबीला छैल जिसकी सहस्रार्जुनी प्रलंब बाहों के आलिंगन में सरिताओं और निर्झरों की अदम्य अठखेलियाँ। हिमालय, सात्विक अखण्डता का मानदण्ड; विन्धय, राजसिक उन्माद का उन्माथित कालखण्ड। हिमालय शिव की शिवता का सम्यक् संकल्प और विन्ध्य अगस्त की तपस्या की पावन प्रणति। दोनों का आंतरिक उल्लास गंगा और नर्मदा के रूप में सुमुछ्वसित, उत्तर और दक्षिण के सांस्कृतिक -संचारण की समुज्जवल अर्चनाएं।"[2]

विन्ध्य-हिमालय काव्य संग्रह दो खण्डों में विभक्त है। पहले खण्ड में विन्ध्य की स्मृतियाँ हैं तो दूसरे खण्ड में हिमालय की। हिमालय से सम्बन्धित कविताएं लिखने की प्रेरणा के सम्बन्ध में कवि कहते हैं कि - "हिमालय की डयोढ़ी में मेरा प्रवेश बड़े ही नाटकीय ढंग से हुआ। संस्कार रूप में हिमालय के प्रति मेरे मन का सम्मोहन जननान्तर सौहार्द के किसी अवचेतन में जैसे अबोधपूर्वक इस घड़ी की प्रतीक्षा ही कर रहा था।"[3] कालिदास ने हिमालय के सौन्दर्य की झीनी चादर की ओट से एक आधी झलक दिखाकर कवि के मन में हिमालय

---

1. 'विन्ध्य-हिमालय' भूमिका शिवमंगल सिंह 'सुमन'
2. 'विन्ध्य-हिमालय' - भूमिका - शिवमंगल सिंह 'सुमन'
3. 'विन्ध्य-हिमालय' भूमिका - शिवमंगल सिंह 'सुमन'

से साक्षात्कार की व्यग्रता बढ़ा दी थी। कवि के इस पर्युत्सुक मन के पुण्य से एक दिन अनायास ही नेपाल प्रवास का संयोग आ जुटा। कवि की नियुक्ति विदेश विभाग में नेपाल स्थित भारतीय राजदूतवास में हुई और उन्हें सांस्कृतिक और सूचना सचिव का काम सौंपा गया। नित्यप्रति गिरिराज हिमालय के दर्शनों का अलभ्य सुयोग कवि पार्वती मैया के पुण्य प्रसाद का ही फल मानते हैं। कवि ने हिमालय की शुभ्र, उदात्त सौन्दर्य राशि की कल्पना नहीं की थी। सुबह से शाम तक गौरीशंकर, अन्नपूर्णा, गणेश-हिमाल के श्वेतकर्पूरी शिखरों को देखते हुए वे थक नहीं जाते थे।

विन्ध्य-हिमालय काव्य-संग्रह की पहली कविता (हिमालय खण्ड) '*आह्वान*' में अन्नपूर्ण एवं गौरीशंकर जैसे सुन्दर हिम-शिखरों को देखकर उठनेवाले कवि के मन में उस विराट् सुन्दरता के कारणकर्ता भगवान पशुपतिनाथ की सेवा करने तथा उस भगवान की ऊँचाई तथा महत्व को मानने से अपने मन को शुद्ध करने का आग्रह भी है।[1]

'*काठमांडू की पहली साँझ*' कविता में मालवा में रहनेवाली पत्नी की हिमालय के वातावरण में आकर कवि याद करता है। हिमालय के धुएँ के साथ कवि अपने विह्वल मन की तुलना करते हैं पत्नी के वियोग से कवि का मन विह्वल है। वह जिस तरह अपने अन्दर विह्वलता की बड़ी ज्वाला को समेटे हैं उसी तरह हिमालय के इन पहाड़ों के हृदय में उठनेवाला धुआँ उसकी व्यथा समान प्रतीत होता है।[2]

'*वातायन से हिमालय दर्शन*' नामक कविता में कवि का विस्मय-विमुग्ध हिमालय दर्शन लालसा की विह्वल अभिव्यक्ति है। हिमालय एक अलौकिक लोक है। नित्य खिड़की से इसका दर्शन पाना कवि केलिए सौभाग्य है। '*तुम्हारा रूप पीना*' कहकर कवि हिमालय

---

1. 'विन्ध्य-हिमालय' - आह्वान - शिवमंगल सिंह 'सुमन' पृ.सं - 77
२. 'विन्ध्य-हिमालय' - काठमांडू की पहली सांझ 'सुमन' - पृ.सं - 83

के सौन्दर्य का पूर्ण आस्वादन करना चाहते हैं। हिमालय के श्वेत, निर्मल शुभ्र कर्पूरी कपोलों को देखकर कवि को पत्नी की याद आ जाती है। वातायन से हिमालय का दर्शन करनेवाले कवि हिमालय को देवताओं का वासस्थान मानते हैं। हिमालय तपो भूमि है। यहाँ आकर साधना करनेवाले साधकों की प्रतीक्षा की तितीक्षा में गंगा, जमुना और कामनाओं की तरंगित अलकनन्दा बहती है।[1]

'दुर्गम पथ पर गीतों के झरने से' कविता में कवि की प्रगतिपरक विचार-धारा प्रकट है। हिमालय की महिमा यही है कि इसके गर्वोन्नत मस्तक पर आकर मनु के चरणों को बढ़ाई मिली थी अथार्त् मानव संस्कृति का विकास यहीं हुआ था। हिमालय की जर्मा हुई बर्फ़ अथार्त् अन्धविश्वास इसे आज मिटाकर चेतना के नव स्रोत बहाते हैं। हिमालय में भी परिवर्तन हो रहा है। आधुनिक युग में विज्ञान के प्रभाव से अनेक बदलाव आ गया है ब्रह्मसरोवर में बाँध बाँधना, स्वर्गंगा में नहरें छूटने नन्दनवन की क्यारियों को काटना आदि। कवि यथार्थ को प्रस्तुत कविता में चित्रित करते हैं।[2]

'चित्रकार के प्रति' कविता में हिमालय को इश्वर द्वारा बनायी रंग रेखाओं से बँधा हुआ एक सुन्दर चित्र मानते हैं। भगवान का यह सुन्दर चित्र जन-जन के मन में अडिग रह गया है।[3] विन्ध्य-हिमालय काव्य-संकलन की ये कविताएं प्रगतिवादी कवि सुमन के वैयक्तिक अनुभव को लेकर चित्रित हैं।

नागार्जुन

नागार्जुन ने *'बादल को घिरते देखा है'* कविता में हिमालय के प्राकृतिक वातावरण के चित्रण में मानसरोवर तथा हिमालय की दुर्गम घाटियों को प्रस्तुत किया है। नागार्जुन के

---

1. 'विन्ध्य-हिमालय' - वातायन से हिमालय दर्शन - 'सुमन' - पृ.सं - 89
2. 'विन्ध्य-हिमालय' - दुर्गम पथ पर गीतों के झरने से - 'सुमन' - पृ.सं - 92
3. 'विन्ध्य-हिमालय' - चित्रकार के प्रति - 'सुमन' - पृ.सं - 102

इस प्रकृतिपरक काव्य में हिमालय का वर्णन एक अनोखे ढंग से हुआ है। बादल से घिरे हुए अमल धवल गिरि मन में कालिदासकालीन परिवेश उभारता है। हिमालय के गिरि-शिखरों पर बादलों के घिरने, मानसरोवर के स्वर्णिम कमलों तथा यहाँ के झीलों में हंसों के तिरने, चकवा-चकवी तथा कस्तूरी-मृग से युक्त हिम-भूमि कवि कल्पना न होकर प्रत्यक्ष अनुभव है। प्रारंभिक खण्डों में हिमालय वर्णन के संदर्भ में कवि नागार्जुन ने कालिदास की उस शैली को अपनाया जो भारतीय सृजन प्रतिभा का प्रतिनिधि है। नागार्जुन मार्क्सवादी विचार-धारा के कवि हैं। मार्क्स के अनुसार वस्तु ही सत्य है अर्थात् भौतिक जगत में जितनी प्रकार की चीज़ों को हम महसूस करते हैं वे सत्य हैं। प्रत्येक वस्तु में दो तत्व होते हैं। विकास और विनाश। नागार्जुन ने हिमालय का सुन्दर चित्रण करने के साथ ही उसके वास्तविक भीषण रूप को भी दिखाया है। अपनी काव्य प्रवृत्ति की पृष्ठभूमि के रूप में कवि पौराणिक प्रसंगों तथा पुराण प्रसिद्ध हिमालय को स्वीकार कर अपनी प्रगतिवादी दृष्टि की स्थापना एक ओर ठंग से करते हैं। कवि आमुख के रूप से कालिदास के पदचिन्हों पर अपना पाँव रखकर आगे चलते हैं और सच्चाइयों का सामना करते हुए यह बताते हैं कि "हिमालय में कुबेर की अलकापुरी आज रही नहीं, कालिदास के मेघदूत की व्योमागमी गंगा की ढूँढ कवि ने बहुत की लेकिन वह कवि कल्पित था तथा नभ चुम्बी केलाश शिखरों पर झोंका देनेवाले भीषण वायु प्रवाह को कवि ने महसूस किया।"[1]

"*अमल धवल गिरि के शिखरों पर बादल को घिरते देखा है*" कविता के सम्बन्ध में कवि नागार्जुन लिखते हैं कि "कालिदास के कुमारसंभवम् के हिमालय वर्णन से जो लोग वाकिफ़ है वे मेरे इस कथन की ताईद करेंगे कि नागार्जुन की यह कविता अपनी सीमित परिधि में भी हिमालय की वैसे ही अनुभूति देती है और संस्कृत की क्लासिकल शैली की

1. 'नागार्जुन चुनी हुई रचनाएं' - भाग 2 - पृ.सं - 9

अनुरूपता में ओर भी प्रगाढ़ कर देती है।"[1] परन्तु यह कविता कालिदास की अनुकृति नहीं है, यह नागार्जुन की अपनी देखी हुई प्रकृति है जिसका वे बार-बार उल्लेख करते हैं। कालिदास का यक्ष, उनका रामगिरि, उनका अलका, उनकी व्योमगंगा तो कल्पित थीं, किन्तु नागार्जुन बड़े विश्वास से कहते हैं कि जो कुछ चित्रित कर रहे हैं वह उनका अपना देखा है।

नागार्जुन ने *'कालिदास'* नामक अपनी कविता में कालिदास के महान पात्रों के दर्द को कालिदास पर आरोपित करके सर्ग शक्ति के महत्व एवं सर्गात्मक पीड़ा के विश्लेषण केलिए कालिदास की सहायता ली है। इन्दुमति की मृत्युशोक से अज के रोने, शिवजी की तीसरी आँख से कामदेव के भस्म होने, मेघदूत के नायक यक्ष-विरह आदि हिमालय पर घटित घटनाओं को याद कराया है। कवि नागार्जुन कालिदास को हिमालय का प्रशंसक अवश्य स्वीकार करते हैं। जितनी भी हिमालय सम्बन्धी कविताएं हैं उन सब में कालिदास का स्मरण अवश्य हो जाता है। प्रगतिवादी कवि के विचारों में क्रान्तिकारी विचार होते हैं, जो कल्पना लोक से भिन्न होकर यथार्थ का चित्र खींचते हैं।[2]

नागार्जुन ने *'सिन्धु नद'* नामक कविता में हिमालय से निसृत होकर आनेवाली नदियों जैसे गंगा, यमुना, ब्रह्मपुत्रा, कृष्णा, कावेरी को भारत भूमि में बहकर इस धरती को कृतार्थ करनेवाली तथा सिन्धु नदी को निर्मम कहा हैं क्योंकि वह पश्चिम की ओर बहती है। इस देश के खून को चूसकर उसे हाड़ बनाती है। हिमालय से निसृत इस सिन्धु नदी तट पर सिकन्दर, चन्द्रगुप्त जैसे वीरों के सम्बन्ध को स्थापित करने के पश्चात् इसको उपनिषदों का आत्म ज्ञान तथा (ऋक्, यजुर, साम, अथर्व) की भूमि मानते हैं। ऋषि यही सन्ध्या वन्दना करते थे। हिमालय की श्रेष्ठता का उद्घोष करते हुए कवि सिन्धु नदी के तट को

---

1. 'नागार्जुन चुनी हुई रचनाएं' भाग 2 - पृ.सं - 9
2. 'सतरगे पखोंवाली' - कालिदास - नागार्जुन - पृ.सं - 45

आदिम मानव की संस्कृति का विकास स्थान मानता है। नागार्जुन ने *'सिन्धु नद'* नामक कविता में हिमालय से निसृत होकर आनेवाली सिन्धु नदी के महत्व को दिखाया है।[1]

'हिम-कुसुमों का चंचरीक' नामक कविता में नागार्जुन ने हिमालय को उस कुसुम के समान माना है जिसकी सुरक्षा केलिए सैनिक चंचरीक या भ्रमर समान लगे रहते हैं। देशवासियों का ध्यान आकृष्ट कराने केलिए कवि कहते हैं कि हिमालय के सैनिक जाग्रत रहते हैं, हिम-कुसुमों को तोड़ने या नष्ट करने केलिए कभी भी शत्रु आ सकते हैं। इस कविता में हिमालय के राष्ट्रीय महत्व को प्रस्तुत करता है कवि।[2]

नागार्जुन *'देवदारु'* नामक कविता में यह बताते हैं कि, देवदारू का पालन पोषण हिमालय की भूमि में ही संभव हैं। हिम भूमि के गुण इसमें भी पाए जाते है।[3] *'सफ़ेद बादल'* नामक कविता में कवि हिमालय को संबोधित करते हुए पूछते हैं कि नगपति, तेरे हिमशिखरों पर सफ़ेद बादल छाए हुए हैं नीचे बर्फ़ की चोटियाँ है ऊपर नील गगन है। कवि कालिदास के मेघदूत के यक्ष का स्मरण करते हुए हिमालय से पूछते हैं कि हिमालय पर छाए हुए ये सफ़ेद बादल किस विरही का सन्देश लाये हैं। क्या ये अलका जाएँगे या किसी विरहिनी को दुःख देंगे या किसी के मन को शीतल करेंगे या अन्त में थक कर हिमालय में ही उतर आएगे।[4]

केदारनाथ अग्रवाल

केदारनाथ अग्रवाल का *'गुरु-गौरव-गिरि सीमा'* पर कविता में हिमालय का राष्ट्रीय महत्व उजागर होता है। हिमालय को भारत के उत्तर के उन्नत मानदण्ड माननेवाले

---

1. 'पुरानी जूतियों का कोरस' - सिन्धु नद - नागार्जुन पृ.सं - 98-103
2. 'नागार्जुन चुनी हुई रचनाएं' भाग 2 - पृ.सं - 148
3. 'हज़ार हज़ार बाहोंवाली' - देवदारु - नागार्जुन - पृ.सं - 100
4. 'हज़ार हज़ार बाहोंवाली' सफ़ेद बादल - नागार्जुन पृ.सं 102

कवि इसपर आक्रमण करनेवाले चीन से प्रतिकार करना चाहते हैं। भारतवासियों से इस मोक्ष द्वार पर, मानदण्ड का मान प्राप्त कर, जय का अनहद नाद सुनाने का आग्रह करते हैं।[1]

नीरज

'*काश्मीर के नाम*' कविता में नीरज ने फूलों के सुगन्ध तथा भंवरों की गुनगुनाहट से भरी काश्मीर के रागात्मक भूमि से दुश्मनों की ललकार को सुनने तथा शत्रु का डटकर मुकाबला करने का आग्रह किया है। '*मानसरोवर आमुख है*' कविता में हिमालय को अपने प्राणों से भी ज़्यादा प्यारा मानते हुए कवि नीरज उसके भौगोलिक स्थान लद्दाख, नेफा, आसाम, कैलास आदि पर प्रकाश डालते हैं।[2]

रामधारी सिंह दिनकर

रामधारी सिंह दिनकर की हिमालय संबन्धी कविताओं में एक प्रकार का क्रांतिकारी एवं सशक्त राष्ट्रीय भाव पाया जाता है।[3] इसलिए इनकी हिमालय संबन्धी कविताओं को प्रस्तुत अध्याय में संकलित किया है। दिनकर की सर्वप्रथम कविता है '*मेरे नगपति, मेरे विशाल*' जिसने उन को हिन्दी के एक समर्थ और महान कलाकार की पदवी प्रदान की है। 'हिमालय' देश-भक्ति की बजोड़ कविता है। देश एवं देश की वस्तुओं एवं स्थानों, मिट्टी, पहाड़, सागर आदि से अपनत्व का यह भाव राष्ट्र प्रेमी का सच्चा चित्र प्रस्तुत करने में सक्षम है। कवि जब हिमालय के अतीतकालीन एश्वर्य की कल्पना करते हुए वर्तमान की धरती पर उतरते हैं, तो दोनों में महान अन्तर दृष्टिगत होता है। कवि के मानस में हिमालय के भव्य चित्र घूमने लगते हैं जिनकी रेखाओं में हिमालय ने अपनी ज्योति की

---

1. 'नीरज की पाती' - गोपालदास नीरज - पृ.सं - 36
2. 'हिमालय'-महादेवी वर्मा - पृ.सं - 177
3. 'रश्मिलोक'-रामधारीसिंह - पृ.सं - (ऊ)

रंग भरा था, जिनकी जड़ता इन रेखाओं में स्पन्दित हो गयी थी। प्रस्तुत कविता में कवि हिमालय के वैभव एवं श्रेष्ठता को प्रदर्शित कर हिमालय से आह्वान करते हैं कि वह अपनी चिर समाधि से नीचे उतरकर काल-चक्र के इस प्रत्यवर्तन का अवलोकन करें, अपने स्वप्नलोक का परित्याग कर आज की ठोस धरती पर उतरें। तभी उनके अन्तकरण में क्रांति उत्पन्न होगी। वास्तव में कवि हिमालय को आह्वानित करने के बहाने भारतीय जनता को सच्चाई या यथार्थ से अवगत कराना चाहते हैं। हिमालय के अन्तकरण का क्रांति का लक्ष्य भारतीयों में क्रांति भाव उत्पन्न करना ही है। 'रश्मिलोक' की भूमिका में कहा गया कि '*हिमालय*', '*ताण्डव*' आदि कविताओं को पढ़कर लोगों ने मुझे क्रांतिकारी कवि मान लिया था।

हिमालय की श्रेष्ठता को द्योतित करनेवाली एक प्रमुख कविता है '*हिमालय का सन्देश*।'[1] '*हिमालय का संदेश*' नामक कविता वास्तव में भारत का ही संदेश है। इस कविता का धरातक दार्शनिक है, पर कवि की मुख्य चिन्ता यही है कि स्वाधीन भारत शान्ति साधना केलिए क्या करें, वह व्यष्टि, समाष्टि, प्रजासत्ता और अधिनायकवाद एवं अहिंसा के बीच समाधान कैसे प्राप्त करें। आज के संसार में समय के बढ़ने के साथ ही उद्भ्रान्दि, अन्धकार, अशान्ति और हाहाकार बढ़ गया है। आज के नये युग में ऐसे आविष्कारों और ऐसा ज्ञान का संचार हुआ कि सारी सृष्टि में अन्धकार छा गया। इन्सान ने (वैज्ञानिक प्रगति से) खुद अपने आप को ईश्वर माना और अपने बल पर अहंकार किया, प्रकृति को भी जीता और खुद यन्त्र एवं चक्रों का गुलाम बना। नगर, नदी, समुद्र, जीव-जन्तु, वन सभी को इसने कलुषित बनाया है धरती को निस्तैल किया और खानिज भी लूट लिया। इन्सान ने धरती को खगालना और हरियालियों को जलाना ही अपनी उन्नति माना है। आज प्रकृति का विनाश कर कल वह निश्चय ही पछताएगा। वैयक्तिक सुख-दुःखों को त्यागकर समाज की भलाई

1. 'नीलकुसुम' - हिमालय का सन्देश दिनकर - पृ.सं 62

करने से ही संसार की उन्नति होगी। हिमालय स्वयं गलकर (नदियों के स्रोतों का संचारक) जल बनकर जगती की व्यास बुझकर लोक कल्याण करता है। एक-एक बूँद मिलकर सागर का पानी बनता और धरती से उठकर जल कण मेघ बनकर आकाश पर छाते हैं और फिर वर्षा बनकर धरती पर गिरते हैं। एक दूसरे के सहयोग से ही प्रगति संभव है। यही हिमालय का सन्देश है। रामधारी सिंह दिनकर ने *'परशुराम की प्रतीक्षा'* कविता द्वारा हिमालय के भौगोलिक परिवेश से जुड़ी एक प्राचीन घटना को प्रस्तुत करते हुए उसे नवीन आदर्शों की नमूना बनाकर हिमालय के धार्मिक संदर्भ को प्रस्तुत किया है। परशुराम पर मात्र हत्या का पाप चढ़ा, तो वे उससे मुक्ति पाने को सभी तीर्थों में घूमते फिरे, किन्तु कहीं भी परशु पर से उनकी वज्रमुठ नहीं खुली अर्थात् उनके मन से पाप का भान नहीं दूर हुआ। तब पिता ने कहा कि, *"कैलास के समीप जो ब्रह्मकुण्ड है, उसमें स्नान करने से पाप छूटा जाएगा।"* परशुराम हिमालय पर चढ़कर कैलास पहूँचे और ब्रह्मकुण्ड में उन्होंने स्नान किया ब्रह्मकुण्ड में डुबकी लगते ही परशु उनके हाथ से छूट कर गिर गया और उनका मन पाप मुक्त हो गया। हिमालय को परम पवित्र तीर्थ बतानेवाले दिनकर आगे कहते हैं कि हिमालय के तीर्थ को इतना जाग्रत देखकर परशुराम के मन में यह भाव जगा कि इस कुंड के पवित्र जल को पृथ्वी पर उतार देना चाहिए। उतएव उन्होंने पर्वत काटकर कुंड़ से एक धारा निकाली जिसका नाम ब्रह्मपुत्र हुआ। ब्रह्मकुंड का एक नाम लोहित कुंड भी मिलता है। एक जगह यह भी लिखा है कि ब्रह्मपुत्र की धारा परशुराम ने ब्रह्मकुंड से ही निकाली थी, किन्तु आगे चलकर वह धारा लोहित कुंड नामक एक अन्य कुंड में समा गयी। परशुराम ने उस कुंड से धारा को आगे निकाला इसलिए ब्रह्मपुत्र का एक नाम लोहित भी मिलता है। स्वयं कालिदास ने ब्रह्मपुत्र को लोहित नाम से अभिहित किया है। और जहाँ ब्रह्मपुत्र नदी पर्वत से पृथ्वी पर अवतीर्ण होती है वहाँ आज भी परशुराम कुंड मौजूद है जो हिन्दुओं का परम पवित्र तीर्थ माना जाता है। लोहित में गिरकर जब परशुराम का कुठार पाप मुक्त हो गया, तब

उस कुठार से उन्होंने एक सौ वर्ष तक लड़ाईयाँ लड़ी और समन्तपंचक में पाँच शोणित हद बनाकर उन्होंने पितरों का तर्पण किया। जब उनका प्रतिशोध शान्त हो गया। उन्होंने कोंकण के पास पहुँचकर अपना कुठार समुद्र में फेंक दिया और वे नवनिर्माण में प्रवृत्त हो गए। लोहित भारत वर्ष का बड़ा ही पवित्र भाग है जो हिमालय में स्थित है जहाँ पुरा काल में परशुराम का पाप मोचन हुआ था।[1] *'परशुराम की प्रतीक्षा'* में हिमालय की भूमि पर पराजित सौनिकों से उस पराजय के कारण के सम्बन्ध में कवि पुछते हैं। अन्त में राष्ट्र के नवनिर्माण की प्रेरणा दी है। दिनकर की हिमालय सम्बन्धी कविताओं में आक्रोश, क्रांति आदि राष्ट्रीय भाव प्रखर रहे हैं। इस प्रकार हिमालय प्रगतिवादी हिन्दी कवियों का भी काव्य विषय रहा है।

प्रगतिवादी हिन्दी कविता में हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ

प्रगतिवादी हिन्दी कविता में हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ को उद्‌घाटित करने केलिए संस्कृति को रूपायित करनेवाले उसके उपादान जैसे भौगोलिक एवं प्राकृतिक, धार्मिक, आध्यात्मिक, नैतिक एवं राष्ट्रीय आयामों के आधार पर प्रस्तुत युग की हिमालय सम्बन्धी कविताओं का अध्ययन हुआ है।

प्रगतिवादी हिन्दी कविता में हिमालय के भौगोलिक एवं प्राकृतिक सन्दर्भ

प्रगतिवादी हिन्दी कविता में हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ को उद्‌घाटित करने केलिए सबसे पहले उसके भौगोलिक एवं प्राकृतिक संदर्भ पर विचार किया गया है। नागार्जुन, नरेन्द्र शर्मा एवं शिवमंगलसिंह सुमन आदि प्रगतिवादी कवि हिमालय के भौगोलिक एवं प्राकृतिक वातावरण से भली भाँति परिचित थे। प्रगतिवादी कविता में हिमालय के भौगोलिक एवं प्राकृतिक उपादान जैसे हिमालय के प्रमुख पर्वत-शिखर, नदियाँ, जन-जाति,

वन-संपदा पर विचार किया गया है। प्रगतिवादी हिन्दी कविता में कैलास[1], गौरी-शंकर[2], नन्दादेवी[3] जैसे पर्वत-शिखरों, गंगा[4], यमुना[5], ब्रह्मपुत्रा[6], सिन्धु[7] अलकनन्दा[8] जैसी नदियों; डल झील[9], मानसरोवर[10], ब्रह्मकुण्ड[11] तथा कूर्माचल[12], कौसानी[13], नेपाल[14], काठमण्डु[15], कश्मीर[16], अलकापुरी[17] जैसे रमणीय स्थानों तथा यक्ष[18], किन्नर-किन्नरी[19] जैसी जनजातियाँ का संकेत किया गया है। हिमालय की वन-संपदा में कमल[20], शैवाल[21], भोजपत्र[22], साल[23],

---

1. 'युग धारा' - बादल को घिरते देखा है - नागार्जुन - पृ.सं - 67
2. 'विन्ध्य-हिमालय' - आह्वान - 'सुमन' पृ.सं - 77
3. 'पलाश वन' - कौसानी - नरेन्द्र शर्मा - पृ.सं 30
4. 'हुंकार' हिमालय' - दिनकर- पृ.स 54
5. 'हुंकार' हिमालय' दिनकर- पृ.स 54
6. 'हुंकार' हिमालय' - दिनकर- पृ.स 54
7. 'हुंकार' हिमालय' दिनकर- पृ.स 54
8. 'विन्ध्य - हिमालय' - वातायन से हिमालय दर्शन - सुमन - पृ.स- 90
9. 'कोयला और कवित्व' - डल शैल का कमल - दिनकर - पृ.सं - 10
10. 'युग धारा' बादल को घिरते देखा है - नागार्जुन - पृ.सं 67
11. 'परशुराम की प्रतीक्षा' दिनकर - भूमिका
12. 'पलाश वन' - कूर्माचल - नरेन्द्र शर्मा - पृ.सं - 26
13. 'पलाश वन' - कौसानी - नरेन्द्र शर्मा - पृ.सं - 30
14. 'विन्ध्य हिमालय' भूमिका - सुमन
15. 'विन्ध्य हिमालय' - काठमण्डु की पहली साँझ - सुमन - पृ.सं - 83
16. 'नीरज की पाती' - काश्मीर के नाम - नीरज
17. 'हज़ार हज़ार बाहों वाली' - सफेद बादल - नागार्जुन - पृ.सं - 102
18. 'सतरंगे पंखोंवाली' - कालिदास - नागार्जुन - पृ.सं - 49
19. 'युगधारा' - बादल को घिरते देखा है - नागार्जुन - पृ.सं - 68
20. 'युगधारा' बादल को घिरते देखा है - नागार्जुन - पृ.सं - 68
21. 'युगधारा' - बादल को घिरते देखा है - नागार्जुन - पृ.सं - 68
22. 'युगधारा' - बादल को घिरते देखा है - नागार्जुन - पृ.सं - 68
23. 'पुरानी जुतियों का कोरस' - सिन्धु नद - नागार्जुन - पृ.सं- 101

देवदारू[1], पारद[2], चीड़[3], बाज़[4] तथा जीव-जन्तुओं में हंस[5], चकवा-चकई[6], कस्तूरी मृग[7], कपिला गायें[8], भँवर[9] आदि पाए जाते हैं।

हिमालय के भौगोलिक उपादानों में यहाँ से निसृत होनेवाली नदियों का विशेष स्थान रहा है। हिमालय की करुणा या उदारता के फल हैं इस पुण्य भूमि पर बहनेवाली सिन्धु, ब्रह्मपुत्र, गंगा, यमुना आदि नदियाँ। इन नदियों का जल देश की मिट्ठी को उर्वर बनाकर देश में सुख-समृद्धि को कायम रखता है। इनके तट पर अनेक संस्कृतियाँ जन्म लेती हैं और जनता का पालन पोषण करनेवाली ये नदियाँ हिमालय के जड़ स्वरूप को चेतनता प्रदान करती हैं। कवि कहते हैं–

"सुख सिन्धु, पंचनद, ब्रह्मपुत्र
गंगा जमुना की अमिय धार,
जिस पुण्य भूमि की ओर बही
तेरी विगलित करुणा उदार।"[10]

हिमालय से निसृत होकर आनेवाली नदियों में सिन्धु नदी उल्लेखनीय रही है। प्रगतिवादी कवि नागार्जुन ने 'सिन्धु नद' नामक कविता में इसका उल्लेख किया है। भारत विभाजन के बाद इसका अधिकांश भाग पाकिस्तान में रहा है।

---

1. 'पलाश वन' - कूर्माचल - नरेन्द्र शर्मा - पृ.सं - 28
2. 'पलाश वन' - कूर्माचल - नरेन्द्र शर्मा - पृ.सं - 28
3. 'पलाश वन' - कूर्माचल - नरेन्द्र शर्मा - पृ.सं - 28
4. 'पलाश वन' - कूर्माचल - नरेन्द्र शर्मा - पृ.सं - 28
5. 'युग धारा' - बादल को घिरते देखा है - नागार्जुन - पृ.सं 67
6. 'युग धारा' - बादल को घिरते देखा है - नागार्जुन पृ.सं 67
7. 'युग धारा' बादल को घिरते देखा है - नागार्जुन - पृ.सं 67
8. 'पुरानी जुतियों का कोरस' - सिन्धु नद - नागार्जुन - पृ.सं- 101
9. 'हिमालय' - रसमय हिमालय - शम्भूनाथ सिंह - पृ.सं - 143
10. 'हुंकार' - हिमालय - रामधारी सिंह दिनकर - पृ.सं - 53

कवि इस सिन्धु नदी का परिचय कराते हैं–

"तुम आए कल कल छल छल कर
उस मानसरोवर से चलकर
पच्छिम हटकर फिर उत्तर से
हिमगिरि के वक्षस्थल पर से
हे सिन्धु, देख तव अमिय धार।"[1]

नागार्जुन ने सिन्धु नदी की अमृत धारा को, मानसरोवर से चलकर पच्छिम हटकर उत्तर से हिमगिरि के वक्षस्थल से होकर बहता हुआ पाया है।

हिमालय के भौगोलिक वातावरण के अन्तर्गत जीव-जन्तुओं को भी विशेष स्थान दिया गया है। प्रगतिवादी कवियों ने भी अपनी प्रकृतिपरक कविताओं में हिमालय के विशेष सौन्दर्य पर बल दिया है। नागार्जुन जैसे कवि की कविता में बादल से घिरे अमल धवल गिरि हिमालय मन में कालिदासकालीन सौन्दर्य उभार लाता है। हिमगिरि के गिरि शिखरों पर बादलों का घिरना, मानसरोवर के स्वर्णिम कमलों पर छोटे - छोटे मोती जैसे शीतल तुहिन कणों का गिरना कवि कल्पना नहीं प्रत्यक्ष अनुभव है। हिमालय में हंस, चकवा-चकवी, कस्तूरी-मृग का चित्रण कवि इस प्रकार करते हैं – तुंग हिमालय में असंख्य छोटे-बड़े झील हैं इन शीतल नील झीलों में समतल देशों से पावस की उमस से व्याकुल होव र आए हंसों को तिक्त-मधुर बिसतन्तु को खोजते[2], हिमालय के महान सरोवरों के शैवाल भरे तीरों से चकवा-चकवी का प्रणय कलह सुनाना[3], दुर्गम बर्फानी घाटी में शत सहस्र फुट की ऊँचाई पर अलख नाभि से उठनेवाले उन्मादक परिमल से धावित होकर अपने पर चिढ़नेवाले कस्तूरी मृग का उल्लेख किया है–

---

1. पुरानी जूतियों का कोरम - सिन्धु नद - नागार्जुन - पृ.सं - 98
2. युग धारा - बादल को घिरते देखा है - नागार्जुन - पृ.सं - 67
3. युग धारा - बादल को घिरते देखा है - नागार्जुन - पृ.सं - 67

"दुर्गम बर्फानी घाटी में
शत सहस्त्र फुट की ऊँचाई पर
अलख नाभि से उठनेवाले
निज के ही उन्मादक परिमल
के पीछे धावित हो होकर
तरल तरुण कस्तूरी मृग को
अपने पर चिढ़ते देखा है,
बादल को घिरते देखा है।"[1]

हिमालय से निसृत सिन्धु नदी तट पर चरनेवाली कपिला गायों का चित्रण इस प्रकार हुआ है–

"तेरे तट पर दाएँ बाएँ
चरती होंगी कपिला गायें
चरते होंगे सित असित मेष
तज स्वर्गिक सुख, तज यज्ञ भाग
तज तज कर अपना हव्य भाग
वे इन्द्र वरुण अर्यमा आदि
उन सीधे साधे पशुओं का
बन जाते होंगे सहज बन्धु
घर चरवाहों का सरल भेष"[2]

कवि नागार्जुन हिमालय में ही दिखाई देनेवाले देवदारु वृक्ष की खासियत के बारे में बताते हैं घन निबिड़ शाखाओंवाला देवदारु का वृक्ष भयानक ग्रीष्म हो या शिशिर कभी

---

1. 'पुरानी' जूतियों का कोरस - सिन्धु नद - नागार्जुन - पृ.सं - 101
2. 'पुरानी' जूतियों का कोरस - सिन्धु नद - नागार्जुन - पृ.सं - 101

भी मुरझाता या सुखता नहीं। ऋतु परिवर्तन से यह भीत या पीत नहीं होता। कड़ी सर्दी धारनेवाला यह देवदारु सदैव सुन्दर ही लगता है। सुई जैसे पत्रों से युक्त सरल, सीधी डालोंवाले देवदारु की शाखा इस प्रकार अपना सिर तानकर खड़ी है मानो वह नभ की ओर स्नेह विभोर होकर देख रही है। हिमालय के लाड़ला है देवदार या इसने हिमालय के वातावरण से समझौता किया है। कवि इस प्रकार कहते हैं–

'हिमालय के लाल
देवदारु विशाल
गिरि शिखर के पास
व्याप्त है हिमहास
थक गया हूँ देख
अति धवल अभिषेक।'[1]

देवदारु वृक्ष हिमालय का सजीला है उसका प्रिय वृक्ष है देवदारु वृक्ष की ऊँचाई देखकर कवि आश्चर्यचकित होता है वह पूछता है कि जलाधि तट से इतनी ऊँचाई तक इसे कौन लाया होगा? इसकी ऊँचाई सात आठ नौ हज़ार फुट से भी ऊपर है कवि लिखते हैं;

"कौन भला तुमको-
यहाँ पर लाया उतार?
तुम्हारी निवास भूमि
जलाधि तल से
ऊपर, अति ऊपर
फुट जहाँ सात-आठ-नौ हज़ार
ओ हे तुम
पहाड़ी तरुओं में पाहुन उदार
सजीले प्रिय देवदार।"[2]

---

1. हज़ार हज़ार बाहोंवाली - देवदारु - नागार्जुन पृ.सं 100
2. सतरंगे पंखोंवाली - सजिले प्रिय देवदार - नागार्जुन - पृ.सं - 46

प्रगतिवादी हिन्दी कविता में हिमालय का मानवीकरण हुआ है। मालवा में रहनेवाली पत्नी को हिमालय के वातावरण में आकर कवि याद करते हैं। कवि जिस तरह अपने अन्तर विह्वलता की बड़ी ज्वाला को समेटे हैं उसी तरह (हिमालय के) पहाड़ों के हृदय में उठनेवाला धुआँ उसकी व्यथा समान प्रतीत होता है। कवि ने अपने मन की व्यथा का, हिमालय के हृदय से उठनेवाले धुआँ के साथ तुलना की है।

पहाड़ी ढाल पर
धुँधली सफ़ेदी उड़ रही आतुर
पहाड़ों के हृदय में भी
उठा करता धुआँ अहरह
अचल का चल अतल
दह दह बड़ी ज्वाला समेटे है,
कि जिसकी तरलता का तार
सादियों से नहीं टूटा,
इसी हिममय हृदय का
एक सोता ढल रहा मुझ में
शिखर की मूक बिखरन सा। [1]

कवि को हिमालय शैल धरती की हथेली पर उबलता चाय का प्याला लगता जिससे उड़नेवाली भाप उसके अन्तर में धुमड़नेवाली व्यथा है। कवि नरेन्द्र शर्मा ने कौसानी की सुन्दर भूमि को युवती माना है।

"कोसी की हरित भरित घाटी
करती है सुख से शान्त शयन
प्रहसित संकुचित गात शोभित

1. विन्ध्य हिमालय - काठमण्डू की पहली साँझ - शिवमंगल सिंह 'सुमन' - पृ.सं 85

नव-धान-वरन परिधान पहिन!
सिरहोने रखा शीश-मुकुट
वह कहलाती है कौसानी! "[1]

हिमालय का रमणीय स्थान है कौसानी[2] जिसकी हरी-भरी घाटी को युवती के साथ तुलना करते हैं जो सुख से शान्त शयन करती है जो नव धान रूपी वस्त्र पहने हुए संकुचित गातवाली जिसने शीश-मुकुट रखा है इसकारण इसे '*कूर्मांचल की पटरानी*' कहा गया है। यहाँ की ऊर्वर घाटियाँ हरे रेशमी दामन ओढ़े युवती जैसी दिखाई देती है जिसकी नील अलकें है यहाँ की निर्झरिणियाँ।

"ज्यों हरे रेशमी दामन सी
घेरे ऊर्वर घटियाँ पड़ी,
कुछ मुक्त नील अलकों सी
जिन पर पड़ी हुई हैं निर्झरिणी।[3]

कूर्मांचल के प्राकृतिक सौन्दर्य को और उजागर करने केलिए कवि ने चीड़, बाँज, देवदारु से युक्त हिमालय की वन-संपदा को चित्रित किया है। कवि कहते हैं–

---

1. 'पलाश वन' - कौसानी - नरेन्द्र शर्मा - पृ.सं - 31
2. 'पथ के साथी' - महादेवी वर्मा - पृ.सं - 83

   कौसानी की सुषमा का बहुत ही सुन्दर अंकन महादेवी वर्मा ने इन शब्दों में किया है – "कौसानी मानो कूर्मांचल का सुन्दर हृदय है। वहाँ हिमश्रेणियाँ, रजत वर्णमाला में लिखे सौन्दर्य के उज्जवल पृष्ठ के समान खुली रहती हैं। उस कत्यूर घाटी के बीच खड़े होकर हम एक ओर हिमदुकूलिनी चोटियों को और दूसरी ओर चीड़, देवतारुओं की हरितिमा से अवगुण्ठित कौसानी को देखते हैं; तब हमें ऐसा जान पढ़ता है मानो हिमशिखरों की उज्जवल रेखाओं ने सौन्दर्य की कथा लिखी है और कौसानी ने अपने मरकत अंचल में हिमानी का छंद आँका है।"

4. 'पलाश वन' - कौसानी - नरेन्द्र शर्मा - पृ.सं - 32

"जिसके सुन्दर विश्वासों से दृढ़ सरल चीड़ वह कूर्माचल,
जिस देवभूमि में देवालय से देवदारु
सुशोभित शीतल,
औ ' बुद्ध बाँज जिनमें जीवन की धूप छाँह वह कूर्माचल! "[1]

किसी के सुन्दर विश्वास के समान दृढ़ चीड़, हिमालय की देव-भूमि में खड़े देवदारु भी पूजनीय है।

कहीं-कहीं हिमालय की भयानक प्रकृति का भी चित्रण हुआ है। पर्वत-प्रदेश में पावस ऋतु के आगमन से सारा वातावरण बादल से ढक जाता है। ज़ोर से हवा चलने लगती है, पर्वत का वन प्रदेश पल में ही कांपने लगता है। पशु-पक्षी सब चिल्लाकर भागने लगे और कोटर-खोह खोजने लगे। बाँज, देवदारु के वृक्ष हिलने लगे ऊँचे-ऊँचे चीड़ कराह कर गिरने लगे जिससे चिड़िया अपने ध्वस्त नीड़ों को छोड़कर उड़ने लगे।

"कड़-कड़ चड़-चड़ टूटते पेड़
करती कौसानी शक्ति नृत्य
विद्युत से प्रतिबिम्बित, नार्तित
छाया-प्रेतों से दास भृत्य
दे पद-प्रहार घन्नाद-ताल
नाचती मत्त काली कराल,
लो, तड़क गया नभ इस्पाती
नेत्रों से निकली तड़ित-ज्वाल। "[2]

जब कभी हिमालय की प्रकृति की वर्णन करना हो तो कवि नागार्जुन जैसे कवि कालिदासकालीन परिवेश का पुनः सृजन करने का प्रयत्न करते हैं। पावस ऋतु का आगमन

---

1. 'पलाश वन' - कूर्माचल नरेन्द्रशर्मा - पृ.सं - 28
2. 'पलाश वन' - कौसानी - नरेन्द्रशर्मा - पृ.सं - 33

होते ही हिमालय के नील गगन में अपने पंख फड़ फड़ाकर उडनेवाले विमल बलाका को देखकर कवि को लगता है धवल पताका फहरा रही हो या कलिंदी के श्यामल सलिल में अविरल गति से बहनेवाले श्वेत सहस्र पत्र-पद्मों की बनी बनायी लम्बी माला हो। आकाश में उठनेवाले काले बादल कालिदास के मेघदूत की याद दिलाते हैं। आकाश में उड़नेवाले सुन्दर बलाका का चित्रण इस प्रकार हुआ है–

"उड़ी जा रही नील गगन में
पवन पंख पर विमल बलाका
मानो विस्तृत कालिंदी के
श्याम सलिल में अविरल गति से
बहती चली जा रही कोई
श्वेत सहस्र पत्र-पद्मों की
बनी बनायी लम्बी माला
पावस की आगमन सूचना
देने आयी प्रकृति सुन्दरी
फहरा-फहरा कर धवल पताका
उड़ी जा रही नील गगन में
पवन पंख पर विमल बलाका।"[1]

कालिदास के हिमालयीन प्राकृतिक वातावरण से तादात्म्य प्राप्त करते हुए कवि पूछता है कि कालिदास ही रोए थे या यक्ष रोए थे। वर्षा ऋतु की स्निग्ध भूमिका या आषाढ़ मास का प्रथम दिवस आकाश में श्याम घन घटा देखकर यक्ष की मानसिक व्यथा तथा पुष्करावर्त मेघों का संदेशवाहक बनकर जाने का चित्रण किया है। कालिदास का वह वर्णन इतना सजीव था कि कवि कहते हैं–

---

1. 'हज़ार हज़ार बाहोंवाली' - बलाका - नागार्जुन - पृ.सं - 101

"अमल धवल गिरि के शिखरों पर
प्रियवर, तुम कब तक रोए थे?
रोया यक्ष कि तुम रोये थे?
कालिदास सच-सच बतलाना।"[1]

नागार्जुन ने हिमालय निवासी किन्नर-किन्नरियों की वेश-भूषा तथा जीवन- पद्धति को दिखाकर उनकी विशेष संस्कृति को उभारा है। देवदारु के कानन में शत-शत निर्झरों के कल रव से तथा शोणित धवल भोजपत्रों से छाई कुटीर में रंग-विरंगे और सुगन्धित फूलों से कुन्तल को सजाए तथा शंख के समान सुन्दर गले में इन्द्रनील की माला डाले हुए किन्नर-किन्नरियों को हमेशा वंशी बजाते तथा उनके कोमल उंगलियों को देखकर लगता है हिमालय पर बादल छा रहा है।

"शत-शत निर्झर-निर्झरिणी-कल
मुखरित देवदारु कानन में,
शोणित-धवल भोजपत्रों से
छाई हुई कुटी के भीतर
रंग विरंगे और सुगन्धित
फूलों से कुन्तल को साजे,

मदिरारुण आँखोंवाले उन
उन्मद किन्नर - किन्नरियों को
मृदुल मनोरम अंगुलियों को
वंशी पर फिरते देखा है
बादल को घिरते देखा है।"[2]

1. 'सतरंगे पंखोंवाली' - कालिदास - नागार्जुन - पृ.सं - 45
1. 'युगधारा' - बादल को घिरते देखा है - नागार्जुन - पृ.सं - 68

कालिदास के कुमारसंभव में बताया है कि– *"बाँसों के झरमुट भी हिमालय पर अत्यन्त सघन है। बाँस भीतर से खोखले लगते हैं लेकिन अन्दर से बजने लगते हैं और ऐसा प्रतीत होता है कि किन्नरों के साथ वे भी गीतों को गाने में योग दे रहे हो।"*[1] हिमालय के शिखरों के ऊपर छाए सफ़ेद बादल को देखकर कवि हिमालय से पुछ उठते हैं–

"नगपति, तव हिममय शिखरों पर
ये सफ़ेद बादल छाये हैं,
नीचे हैं बर्फानी चोटी
ऊपर ऊपर नील गगन है
और बीच में श्वेत मेघ के
दृश्य देख कवि हृदय मग्न है।"[2]

इसे देखने से ऐसा लगता है कि यह किसी विरही के सन्देश लाए हैं, क्या यह कालिदास कल्पित कुबेर की अलका जायेंगे, इसे देख किसी विरहित के नयन नीर छलका आयेंगे। इसे देखकर किसी का दिल शीतल होगा किसी का तापित होगा।

अतः प्रस्तुत अध्याय के भौगोलिक एवं प्राकृतिक उपादान हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ को उद्घाटित करने में सहायक रहे हैं। नरेन्द्र शर्मा, सुमन, नागार्जुन जैसे प्रगतिवादी कवियों ने हिमालय के भौगोलिक वातावरण से परिचित थे और इन्होंने अपने आँखों देखा प्राकृतिक सौन्दर्य का चित्रण किया है। सिन्धु नदी का भौगोलिक महत्व, बादलों से घिरे अमल धवल गिरि, मानसरोवर का स्वर्णिम कमल, विशाल देवदारु आदि का चित्रण कर कूर्माचल, कौसानी तथा काश्मीर की वन-संपदा पर विचार हुआ है। हिमालय को प्रकृति का मानवीकरण हुआ है। हिमालय के धुएँ से मानव मन की विह्वलता तथा कौसानी की सुन्दर

---

1. 'कुमारसंभव' - सर्ग 1/8 - कालिदास
2. 'हज़ार हज़ार बाहोंवाली' - बलाका - नागार्जुन - पृ.सं - 102

प्रकृति को हरे रेशमी दामन ओढ़े युवती के साथ तुलना की है। कालिदासकालीन हिमालय प्रकृति का स्मरण हुआ है।

प्रगतिवादी हिन्दी कविता में हिमालय के धार्मिक संदर्भ

प्रगतिवादी हिन्दी कविता में हिमालय के धार्मिक संदर्भ पर विचार करते हुए उसके सांस्कृतिक पक्ष को उद्‌घाटित किया है। 'कौसानी' नामक कविता में कौसानी को पार्वती तथा उसके सामने खड़े पर्वत को शिव का वासस्थान मानते हैं/इसके सम्बन्ध में कवि नरेन्द्र शर्मा कहते हैं कि–

"यह गिरि गिरिजा कौसानी की
सामने पड़ा शिव का पड़ाव,
कौसानी और हिमालय में
तिल भर न परस्पर उर दुराव।
नन्दादेवी के तुंग शिखर से
देख-देख शोभा शंकर
हो गए हिमालय में विजड़ित
तज ताण्डव नर्तन प्रलयंकर।"[1]

प्रगतिवादी कवि शिवमंगल सिंह '*सुमन*' हिमालय के पवित्र वातावरण में आकर अपने आप को अनुग्रहीत मानता है। जिस प्रकार भगवान के चरणों में दास अपना अहं और सब कुछ सौंपता है उसी प्रकार गौरी शंकर के चरणों में कवि अपना सब कुछ न्योछावर करता है। इसप्रकार भगवान की ऊँचाइ एवं महत्व को मानने तथा उनकी सेवा करने से मन का कलुष-खोट सब कुछ नष्ट हो जाएगा तथा भगवान प्रसन्न होकर पाशुपतास्त्र सर्वश्रेष्ठ धनुर्धारि अर्जुन को दिया था। भगवान शिव क्षिप्र ही प्रसन्न हो जाते हैं। '*आह्वान*' नामक

1. पलाश वन - कौसानी - नरेन्द्र शर्मा - पृ.सं - 32

कविता में कवि ने पौराणिक प्रसंग की ओर संकेत करते हुए महभारत की कथा की ओर संकेत किया है। हिमालय को हिन्दुओं के आराध्य देवता शिव का वास स्थान माननेवाले कवि बताते हैं–

"गौरीशंकर के चरणों में
अपना अहम लुटाओ,
कुछ दिन ऊँचाई भी परखो
परसो पारस पत्थर
मैदानों के वासी निरखो
शिखरों का अभ्यन्तर।
सेवा की धूनी में शायद
कलुष-खोट जल जाए
पशुपतिनाथ प्रसन्न पशुपत
अस्त्र तुम्हें मिल जाए।"[1]

कवि शंभुनाथ सिंह ने हिमालय के पौराणिक प्रसंग को *'रसमय हिमालय'* कविता में प्रस्तुत कर हिमालय को शिव-पार्वती का वास स्थान बताया है। हिमालय को देवताओं की भूमि माननेवाले कवि उसके धार्मिक महत्व पर प्रकाश डालते हैं–

"थी पार्वती घरती जलती तप से निर्जल,
था महाकाल ज्यों समाधिस्थ निद्वेन्द अचल,
सहसा झंकृत अनंग-धनु से शर छूट पड़े,
बन पंचवाण के पुष्प बरसते थे बादल।
क्षण भर घाटी की भंवरों में कर आवर्तन,
क्षण भर शिखरों के उपलों का कर आलिंगन
इस महाशून्य की डाली से झर-झर शाश्वत्
बह रहे पवन की धारा में ये मेघ सुमन।"[2]

---

1. 'विन्ध्य-हिमालय' आह्वान - शिवमंगल सिंह सुमन - पृ.सं - 77
2. 'हिमालय' - रसमय हिमालय - शम्भूनाथ सिंह - पृ.सं - 143

कालिदास के कुमार संभव के तृतीय सर्ग का अनुकरण ही यहाँ हुआ है। हिमालय को भगवान शिव ने तपःस्थान बनाया था। हिमवान अपनी पुत्री पार्वती को शिव की सेवा में नियुक्त करते हैं। पार्वती शिव को पति के रूप में प्राप्त करना चाहती है। इसकेलिए कामदेव को नियुक्त करते हैं। शिव की समाधि को भंग करने केलिए कामदेव द्वारा पंचबाण से शर का छूटना तथा हिमालय का सारा वातावरण पुष्पों, पल्लवों से हरा-भरा बनने का चित्रण मिलता है। हिमालय का प्राकृतिक सौन्दर्य दुगुना हो जाता है। हिमालय के वातावरण को रागात्मक बनानेवाले कवि यहाँ की घाटी में भंवरों का आवर्तन करने, शिखरों के उपलों का अलिंगन करने तथा पवन की धारा में बहनेवाले मेघ रूपी सुमन आदि इस वातावरण को ओर सुन्दर बनाते हैं।

कवि नागार्जुन कालिदास के महान पात्रों का स्मरण करते हुए *'कालिदास'* कविता में हिमालय की पृष्ठभूमि में घटित उपर्युक्त पौराणिक घटना का स्मरण करते हैं। हिमालय भगवान शिव की तपोभूमि है। इस ओर संकेत करते हुए कवि बताते हैं समाधिस्थ शिव के तप को भंग करने के कारण कामदेव को शिव की तीसरी आँख से निकली हुई महाज्वाला में धृतमिश्रित सूखी समिधा सम भस्म होना पड़ा। इसकी अभिव्यक्ति इस प्रकार हुई है-

'शिवजी की तीसरी आँख से
निकली हुई महाज्वाला में
घृतमिश्रित सूखी समिधा - सम
कामदेव जब भस्म हो गया
रति का क्रन्दन सुन आँसू से
तुम ही तो दृग धोये थे।'[1]

कवि दिनकर ने *'परशुराम की प्रतीक्षा'* में हिमालय के परिप्रेक्ष्य में घटित पौराणिक घटना का स्मरण कराया है। इसके आधार पर प्रस्तुत युग की समस्याओं का

1. 'सतरंगे पंखोंवाली' - कालिदास - नागार्जुन - पृ.सं - 45

अवलोकन किया है। नेफा युद्ध के प्रसंग में भगवान् परशुराम का नाम अत्यन्त समीचिन है। जब परशुराम पर मातृहत्या का पाप चढ़ा, वे उससे मुक्ति पाने को सभी तीर्थों में घूमते फिरे, किन्तु कहीं भी उनका पाप छुटा नहीं। तब पिता के करे अनुसार कैलास के समीप ब्रह्मकुण्ड में जाकर स्नान किया तो पाप से मुक्त हो गया। हिमालय को सबसे पवित्र तीर्थ मानते हैं। कवि का कहना है कि–

"माँगो, माँगो वरदान धाम चारों से,
मन्दिरों मस्जिदों, गिरजों, गुरुद्वारों से। [1]

मुक्ति को चाहनेवाले साधक या तपस्वी हिमालय के वातावरण में भटकते फिरते हैं। शिव एवं पार्वती से युक्त हिमालय योग, ज्ञान, तप एवं साधना का स्थान है।

"सार्थवाहों के समुन्नत पग
भटकते फिर रहे अहरह
उसी उपलब्धि के पीछे
जिसे तुमने संजोया
शुभ्र शिवता के तुषारों से

निपट आश्चर्य
बैठी पार्श्व में रत पार्वती
कुछ भी नहीं कहती
कि केवल देखती रहती
युगों से सहस्र पुंजीभूत
साधक की अचल मुद्रा। [2]

1. 'परशुराम की प्रतीक्षा' दिनकर पृ.सं - 32
2. 'विन्ध्य - हिमालय' - वातायन से हिमालय दर्शन - सुमन - पृ.सं - 90

हिमालय के महत्व के सामने नतमस्तक होकर कवि उसकी पूजा या आराधना करते हैं–

"हमारे पूर्वजों को
क्या मिला तुमसे
नहीं मालूम,
न उतनी साधना मुझ में
न उतना आत्मचिन्तन ही
मगर मैं
नवस्फटिक की स्निग्ध सिहरन में
चमकते ऊर्ध्व कलशों को
निहारा नित्य करता हूँ
यही आशा लिए मन में
कि शायद तुम कभी बोलो
हमारी अर्चना तोलो।"[1]

संक्षेप में प्रगतिवादी हिन्दी कविता में हिमालय के धार्मिक संदर्भ के अन्तर्गत कौसानी, नन्दादेवी, गौरीशंकर से कूर्मांचल, ब्रह्मकुण्ड आदि के धार्मिक महत्व पर प्रकाश डाला गया है। अतीत की घटनाओं का स्मरण करनेवाले कवि शिव का प्रसन्न होकर अर्जुन को पशुपतास्त्र देना, शिव की तपोभूमि, मदन-दहन, परशुराम की मातृ हत्या आदि पौराणिक वर्ण्य विषयों के ज़रिए अनेक तीर्थ स्थानों से युक्त हिमालय की धार्मिक भूमि का चित्र खींचा है।

प्रगतिवादी हिन्दी कविता में हिमालय के आध्यात्मिक संदर्भ

प्ररगतिवादी हिन्दी कविता में हिमालय के सांस्कृतीक संदर्भ को उद्घाटित करने केलिए प्रस्तुत युग की हिमालय सम्बन्धी कविताओं के आध्यात्मिक संदर्भ पर विचार करना

---

1. 'विन्ध्य हिमालय' वातायन से हिमालय दर्शन - सुमन पृ.सं - 90

है। कवि दिनकर हिमालय को युग-युग से अजेय, निर्बन्ध, मुक्त साकार, दिव्य, विराट मानते हैं। हिमालय के आध्यात्मिक स्वरूप पर डालते हुए कवि उसे एक तपस्वी मानते हैं कवि का कहना है–

"निस्सीम व्योम में तान रहे
युग से किस-महिमा का वितान?
कैसी अखण्ड यह चिर समाधि?
यतिवर! कैसा यह अमर ध्यान?
तू महा शून्य में खोज रहा
किस जटिल समस्या का निदान?
उलझन का कैसा विषम जाल?
मेरे नगपति! मेरे विशाल।"[1]

हिमालय को देखने पर ऐसा लगता है कि जन्म और मृत्यु के प्रश्नों का उत्तर खोजने केलिए ही आज तक उसने समाधि लगाई थी। भूमि में दार्शनिक मुद्रा में खड़ा होकर वह आज तक आकाश से वार्तालाप करता रहा है। हिमालय ने ऐसे चिन्तन मनन से प्राप्त आध्यात्मिक तत्वज्ञान भारत को दिया है। इसप्रकार आध्यात्मिक मुद्रा में खड़े हिमालय से (तपस्वी से) पल भर आँखें खोलकर देखने तथा इस पुण्यभूमि पर आज आए संकट को दूर करने की तीव्र अभिलाषा प्रकट की है। जैसे–

"ओ, मौन तपस्या लीन यति!
पल भर तो कर नयनोन्मेष,
रे ज्वालाओं से दग्ध विकल
है तडप रहा पद पर स्वदेश।"[2]

1. हुंकार - हिमालय - रामधारीसिंह दिनकर - पृ.सं - 54
2. हुंकार हिमालय रामधारी सिंह दिनकर - पृ.सं - 54

कवि नरेन्द्र शर्मा कूर्मांचल प्रदेश के आध्यात्मिक महत्व पर प्रकाश डालते हैं। कूर्मांचल धरती और स्वर्ग का लाड़ला है जो तपस्वी केलिए स्वर्ग सीढ़ी है। कूर्मांचल के शान्त अचल वातावरण को देखकर उसे सिद्धराज या तपस्वी माना है जो उन्नत ललाट से युक्त तेजस्वी है, जिसके शिर पर हिम किरीट तथा उसके ऊपर छाए अटल आकाश छत्र समान है। कूर्मांचल के शान्त अचल वातावरण में ऋषि-मुनि अपने पवित्र जीवन बिताते हैं। कूर्मांचल के आध्यात्मिक महत्व का प्रतिपादन कवि नरेन्द्र शर्मा इस प्रकार करते हैं :-

"लो स्वयम बना अब सिद्धराज स्थिर शान्त अचल वह कूर्मांचल
उन्नत ललाट तप तेजस्वी, शिर हिम किरीट नभ छत्र अटल!
ऋषि मुनि अर्पित करते अपने पाव जीवन के दुर्लभ पल!"[1]

हिमालय में कौसानी के ऊपर छाए हुए नभ को योगी के निर्मल चित्त से तुलना की है–

"नभ ज्यों योगी सा निर्मल चित
है धरा मौन ज्यों विनत भक्ति।"[2]

हिमालय से निसृत सिन्धु नदी के तट पर बैठकर कवि सन्ध्या वन्दना करते हैं, कवि नागार्जुन इसको अभिव्यक्त करते हैं–

"तेरी धारा में नहा-नहा
नव जपा कुसुम के फूल बहा
कुछ खड़े-खड़े ही स्तोत्र मध्य
तो कुछ तट पर ही बैठ-बैठ
ऋषि गण सन्ध्या-वन्दन करते

---

1. 'पलाश वन' कूर्मांचल - नरेन्द्र शर्मा पृ.सं 27
2. 'पलाश वन' - कौसानी - नरेन्द्र शर्मा पृ.सं - 34

शुक चंचुसदृश लालीवाले
या सोने की थालीवाले
शिशु रवि का अभिनन्दन करते
ऋषिगण सन्ध्या वन्दन करते।"[1]

इसमें हिमालय से निसृत सिन्धु नदी के तट पर बैठकर ऋषि-गण द्वारा सन्ध्या-वन्दना करने, पूजा के समय इसकी धारा में बहा दिया जानावाले फलों, यहीं इसी के तट पर खड़े होकर ऋषि गण द्वारा स्तोत्र पढ़ने, सूर्योदय के समय उदित होकर आनेवाले सूर्य का अभिनन्दन करने का चित्रण किया है। हिन्दुओं के पूजा कर्म तथा धार्मिक रिवाज़ों को सिन्धु नदी तट पर दिखाकर हिमालय के आध्यात्मिक संदर्भ को उद्घाटित किया है।

प्राचीन काल से ही भारतीय संस्कृति आध्यात्मिक रही है और हिमालय प्रारंभ से लेकर आज तक इसका साक्षी बनकर खड़ा है। अपनी आध्यात्मिकता के कारण प्राचीन काल से ही भारतीय संस्कृति समन्वयात्मक रही है। इस समन्वयात्मका ने संपन्नता को कायम रखने में सहायता पहुँचायी है। नागार्जुन के शब्दों में–

"गंगा जमुना औ 'ब्रह्मपुत्र
कृष्णा कावेरी औ ' रेवा
अपने को करती हैं कृतार्थ
इस पुण्य भूमि की कर सेवा
पर सिन्धु, तुम्हारी बात और
आख्यान और इतिहास और
इस महादेश की जनता का
तेरे प्रति है विश्वास और
हे दूत महान हिमालय के।"[2]

1. 'पुरानी जूतियों का कोरस' सिन्धु नद - नागार्जुन - पृ.सं 102
2. 'पुरानी जूतियों का कोरस' सिन्धु नद - नागार्जुन पृ.सं - 99

हिमालय और हिमालय की पृष्ठभूमि हमेशा भारतीय जनता केलिए संपूर्ण विश्वास लेकर उसके पीछे खड़ी है। इस दिव्य भूमि के कण-कण में हिमालय का यह धवल हास भली-भाँति अंकित रहा है।

"लीलाएं क्या क्या हुई नहीं
तेरे इस अद्‌भुत प्रांगण में।"[1]

ये अनन्त लीलाएं आध्यात्मिकता को लेकर चित्रित हुई है जिनमें आदर्श या मूल्यों के प्रति आदर था या विभिन्न संस्कृतियों का समन्वय था। अरुणोदय की शुभ वेला में आदिम मानव हिमालय से बहनेवाली नदियों की धाराओं में ही जलविहार करता रहा था और इन्द्र, वरुण, अर्यमा सब अपने स्वर्गिक सुख का त्याग कर इन नदियों के तट पर चरनेवाले सीधे-साधे पशुओं का सहज बन्धु बन जाते थे। भारत की आध्यात्मिक संस्कृति हिमालय की पृष्ठभूमि में सर्वाधिक पनपी थी। नागार्जुन का कहना है–

"वह ऋचापाठ वह मन्त्रागान
तेरे हिय पट पर अंकित है
उपनिषदों का वह आत्मज्ञान
ऋक्, यजुर, साम, अथर्व
संस्कृति का वह उद्योग पर्व
कल्पना यहीं अंकुरित हुई
चेतना यहीं संस्फुरित हुई।"[2]

देव, दानव, दस्यु और मानव सभी संस्कृतियों का समन्वय हिमालय की पृष्ठभूमि में ही हुआ है। ऋषि गणों का सन्ध्या वन्दन, सूफी सन्तों की तान, बौद्ध और जैनों

1. 'पुरानी जूतियों का कोरस' सिन्धु नद - नागार्जुन - पृ.सं - 100
2. 'पुरानी जूतियों का कोरस' - सिन्धु नद - नागार्जुन - पृ.सं - 101

की अहिंसा, इस्लाम और सिख धर्म का विश्वास, सब यहीं पर एक साथ पाए गए। भारत की जनता के पराधीन होते हुए अपनी आध्यात्मिक संस्कृति की प्रबलता के कारण हिमालय हमेशा स्वतन्त्र रहा। जब-जब हमारी संस्कृति का नाव डूबने को हुई तब-तब हिमालय ने उसको बचाया। लेकिन आज हिमालय उदासीन जैसा लग रहा है। कवि हिमालय से प्रार्थना करते हैं-

"तुम बने रहो यों उदासीन
दिन-दिन हम होते जाए क्षीण
अपनी निधि, अपना अमृत द्रव
अपना जीवन, बस सबका सब
लेकर पच्छिम की ओर बहे
हे निर्मम तुमको कौन कहे
हो गया हाय, पूरब उजाड़
खींच गया खून, रह गया हाड़।"[1]

आगे कवि हिमालय से यही प्रार्थना करते हैं कि आज नष्ट प्राय आध्यात्मिक संस्कृति, जो आजकल, पश्चिम के अनुकरण पर क्षुद्र और शुष्क बनती जा रही है उसे अपनी नदियों की संस्कृतियों से सरस बना दें।

हिमालय के आध्यात्मिक स्वरूप पर प्रकाश डालते हुए कवि सुमन लिखते हैं कि-

"अलौकिक कौन - सा अपरूप है
जिसको छिपाने को
बनाया मुग्ध अवगुंठन
कि जिसकी ओट ॠतु और सत्य
रह रह झिलमिलाता है
सहस्रों पारदर्शो समस्तरों के पार
'तपसो अध्यजायत' कौंध जाता है।"[2]

---

1. 'पुरानी जूतियों का कोरस' - सिन्धु नद - नागार्जुन - पृ.सं - 98
2. 'विन्ध्य - हिमालय' वातायन से हिमालय दर्शन सुमन पृ.स- 89

प्रगतिवादी हिन्दी कविता में हिमालय को दार्शनिक मुद्रा में खड़ा होकर चिन्तन मनन कर जन्म और मृत्यु के प्रश्न का उत्तर खोजनेवाला तपस्वी समान माना है। लेकिन मौन व्रत धारी हिमालय से आज सिंहनाद कर जागने का आग्रह करते है कवि। कूर्माचल के नीरव शान्त प्रकृति को देखकर उसे तपस्वी तथा यहाँ के वातावरण को तपस्या केलिए अति उत्तम बताया है। हिम सुतासिन्धु नदी तट पर ऋषियों का सन्ध्या वन्दना, ऋषिगणों द्वारा स्तोत्र पाठ, इसकी धारा में बहाए जानेवाले फूल आदि धार्मिक रिवाज़ हिमालय की आध्यात्मिक संस्कृति को द्योतित करती है। भारत की आध्यात्मिक संस्कृति को द्योतित करती है। भारत की आध्यात्मिक संस्कृति को समन्वयात्मक बताकर सिन्धु नदी से इसका संबन्ध बताया है।

प्रगतिवादी हिन्दी कविता में हिमालय के नैतिक सन्दर्भ

प्रगतिवादी हिन्दी कविता में हिमालय के गुणों तथा उसके स्वरूप का वर्णन करते हुए उसके नैतिक संदर्भ पर प्रकाश डाला गया है। दिनकर जैसे कवि इसे साकर, दिव्य, गौरव, विराट और पौरुष के पुंजिभूत ज्वाला कहकर संबोधित करते हैं–

"युग युग अजेय, निर्बन्ध, मुक्त
युग-युग गर्वोन्नत, नित महान्।"[1]

'हिमालय का संदेश' नामक कविता में आज के संसार की स्थिति पर विचार करते हुए कवि कहते हैं कि संसार में उद्भ्रान्ति, अन्धकार, अशान्ति और हाहाकार बढ़ गया है। इनसान ने (वैज्ञानिक प्रगति से) खुद अपने आप को ईश्वर माना और अपने बल पर अहंकार किया, प्रकृति को जीत लिया और खुद यन्त्रों एवं चक्रों का गुलाम बना। नगर, नदी,

1. 'हुंकार' - हिमालय दिनकर पृ.सं 54

समुद्र, जीव-जन्तु, वन सभी को इसने कलुषित बनाया है धरती को निस्तैल किया और खनिज भी लूट लिया इन्सान ने धरती को खँगालना और हरियालियों को जलाना ही अपनी उन्नति माना है। आज प्रकृति का विनाश कर कल वह निश्चय ही पछताएगा। वैयक्तिक सुख-दु:खों को त्यागकर समाज की भलाई करने से ही संसार की उन्नति होगी। हिमालय स्वयं गलकर (नदियों के स्रोतों का संचारक) जल बनकर जगती की प्यास बुझाकर लोक कल्याण करता है। एक-एक बूँद मिलकर सागर का पानी बनता और धरती से उठकर जलकण मेघ बनकर आकाश पर छाते हैं और फिर वर्षा बनकर धरती पर गिरते हैं। एक दूसरे के सहयोग से ही प्रगति संभव है। प्राकृतिक उपादानों का उदाहरण देकर कवि यही भाव व्यक्त करते हैं। भारत को प्रेम तथा प्रेम के महामन्त्र का पालन करनेवाला देश मानते हैं। आज के युग में साधना या व्रत का पालन करना सरल कार्य नहीं है चारों ओर आहिंसा या गरल है। जब मनुष्य के मन में कोमल भावना जगेगी तब गरल की जगह शीतल गंगाजल बहेगा।

"तब उतरेगी शान्ति, मनुज का मन जब कोमल होगा,
जहाँ आज है गरल, वहाँ शीतल गंगाजल होगा।"[1]

प्रगतिवादी कवि नागार्जुन हिमालय एवं हिमालय के वातावरण में लिखे गए कालिदास के काव्यों से अत्यधिक प्रभावित दिखाई देते हैं। उनके मत में हिमालय, उसकी तराईयाँ उसके सफ़ेद बादल, बर्फानी चोटियाँ सब कवियों के हृदय केलिए विश्राम प्रदान करनेवाले हैं। कालिदास से नागार्जुन तक कई कवि हिमालय के प्राकृतिक एवं सांस्कृतिक महत्व पर रिझानेवाले हैं। कालिदास के मेघदूत में यक्ष और विरहिणी यक्षिणी केलिए संदेश लेकर जानेवाला बादल इसी हिमालय का रहा है। इसी हिमालय की पृष्ठभूमि पर दुष्यन्त-

1. रश्मिलोक - हिमालय का संदेश दिनकर पृ.सं 264

शकुन्तला का मिलन हुआ जो प्रेमियों के हृदय के साथ-साथ सहृदयों के हृदय को भी शीतल बनाता है। लेकिन यहीं पर दुर्वासा के शाप का ताप भी निहित रहा जो इस बात की सूचना दे गया *'सभी क्रियाओं केलिए सम एवं विषम प्रतिक्रियाएं होनी चाहिए'* कर्मवाद का यह नैतिक सिद्धान्त आज भी उसी महत्व के साथ स्वीकार करना पड़ेगा। लेकिन आज का मानव इसकेलिए तैयार नहीं है। नागार्जुन के शब्दों में स्पष्ट है कि यह सारे के सारे विचार आजकल क्रान्ति में लीन हो गए हैं। उन्हें अबसोस है कि प्राचीन नैतिकता या मूल्यों के प्रति उदार भाव आज नष्ट हो गया है। वे कहते हैं-

"कालिदास का साथ छोड़कर
मन्दाक्रान्त छन्दा तोड़कर
क्या जाने तेरी गोदी में
कब के थके उतर आए हैं।"[1]

कालिदास ने जिस हिमालय के वर्णन में मन्दाक्रान्ता छन्द का प्रयोग किया था प्रगतिवादी कवि इसका त्याग करते हैं। इसकी भाषा में क्रान्ति है छन्द मुक्त है प्रगतिवादी कवि जानते हैं कि कालिदासकालीन परिवेश के हिमालय की तुलना में उनकी कविता नगण्य रही है।

प्रगतिवादी कवि ने गंगा और हिमालय के बीच के सम्बन्ध को एक नए ढंग से प्रस्तुत किया है। प्रगतिवादी युगीन प्रवृतियों से ओत प्रोत इस कविता में कवि (माखनलाल चतुर्वेदी अपने आपको निम्न वर्ग के प्रतिनिधि के रूप में प्रस्तुत करता है, वह स्वयं मार्क्सवादी होने की घोषणा करते हैं कवि अपनी बातों को गंगा के मुँह से निसृत कराते हैं। प्रस्तुत कविता में हिमालय को उच्च वर्ग के प्रतीक के रूप में स्वीकार किया है। ऊँचे-ऊँचे शिखरों से निसृत होकर आनेवाली गंगा जनता के बीच उतर आने को चाहती है, वह खुद

कहती है "मुझको पतन स्वीकार था।" हर एक निम्न पथ उसकेलिए हरिद्वार है। ऊँचाई से नीचे गिरते हुए अपने अवेग से पथ पत्थरों को तोड़कर घरती को हिलोरकर उसमें परिवर्तन लाकर उसे हरीतिमा से पूर्ण बनाना चाहता है। कवि वास्तव में अपने अन्तर मन के आवेग से सामाजिक परिवर्तन करना चाहता है। गंगा कृषक के जीवन से जुड़ी हुई है उसकी संस्कृति का प्रतिनिधित्व करता है। हिमालय देवताओं का वास स्थान है अडिंग है अपनी कर्महीनता को स्पष्ट करता है। गंगा अपने पतन से अपनी गति से अपनी अन्तर्निहित शक्ति से जनता के बीच से होती हुई जनता को सुखी रखने केलिए प्रयत्नशील है। हिमालय उच्च वर्ग का प्रतिनिधि है गंगा निम्न वर्ग की है। (हिमालय से निसृत होकर आनेवाली नदी है गंगा। हिमालय के करुणा का फल है ये नदियाँ)। उच्चवर्ग अकर्मण्य है और अपने आप को देव या देवसमान स्वीकार करते हैं प्रगति के प्रति उनके मन में आशा आकांक्षा नहीं निम्न वर्ग कर्मशील है अपनी कमियों को स्वीकार करते हैं और प्र गति केलिए प्रयत्नशील है। कार्ल मार्क्स के वर्ग संघर्ष के सिद्धान्त को साधारण जनता की भाषा से कवि ने प्रस्तुत किया है।

"मुझको पतन स्वीकार था
हे हिमशिखर !
तुम विमल ऊँचों की कथा, मैं करुण दलितों की व्यथा
तुम 'कर्महीन' देवता मैं गतिमयी बलि की प्रथा;
जड उच्चता में, जन्म मम विद्रोह का अवतार था
मुझको पतन स्वीकार था।"[1]

भारतीय संस्कृति मानव को हमेशा कर्मशील रहने का उपदेश देती है। हिमालय अकर्मण्य है वह देवों या उच्च वर्ग का प्रतिनिधि है परन्तु उसमें से निसृत गंगा कर्मशील है एवं आम कृषक का प्रतिनिधि है। उच्चवर्ग सब सुख सुविधाओं को पाकर चुप है उच्च वर्ग

---

1. 'माता' - उच्चत्व से पतन स्वीकार था - माखनलाल चतुर्वेदी - पृ.सं - 114

के समान जड़ है। निम्नवर्ग के लोग समाज में होनेवाले शोषण से सचेत हैं इसलिए वे चिल्ला उठते हैं उनमें विद्रोह का स्वर है। गंगा की भाँति सबकुछ बहाकर नए का सृजन करने की चाह है।

प्रगतिवादी हिन्दी कविता में हिमालय के नैतिक संदर्भ के अन्तर्गत एक ओर हिमालय को स्वयं गलकर जल बनकर जगती का व्यास बुझानेवाला लोककल्याणकारी माना है तो दूसरी ओर उसे अकर्मण्य या उच्चवर्ग का प्रतिनिधि माना है जो अडिग है लेकिन हिमतनया गंगा को कर्मण्य बताया है। हिमालय के इस दुहरे व्यक्तित्व प्रगतिवादी कविता में ही पाया गया है।

प्रगतिवादी हिन्दी कविता में हिमालय के राष्ट्रीय संदर्भ

प्रगतिवादी हिन्दी कविता में हिमालय सम्बन्धी राष्ट्रीय कविताओं में हिमालय को जगने तथा देश रक्षा करने, हिमालय पर पहरा देनेवाले सैनिकों की स्तुति, 1962 चीन आक्रमण के विरोध करते हुए हिमालय की राष्ट्रीय महत्व पर बल दिया गया है।

भारत पर चीन के आक्रमण के विरोध में लिखी गई कविता है - 'गुरु-गौरव-गिरि सीमा पर। भारत के उत्तर में उन्नत मानदण्ड समान खड़े हिमालय के जीवित जाग्रत मर्यादाओं को विदीर्ण कर, शुभ्र शान्ति की सौम्य मूर्ति को, चीन आक्रमणकारियों ने पदघात तथा आक्रमण से विकीर्ण कर इतिहास विरोधी, युग अवरोधी श्रेष्ठ-शील - संस्कार निरोधी आक्रमण किया है। युद्ध में राम के समान ध्यान से इन्द्रायुध के समान शक्तिशाली अस्त्र से शत्रु का पूर्ण संहार करेंगे। हिमालय को *'गुरु-गौरव-गिरि सीमा'* कहकर उसके राष्ट्ररक्षक रूप, *'मोक्षद्वार'* कहकर उसके आध्यात्मिक रूप तथा *'मानदण्ड'* कहकर राष्ट्रीय रूप पर प्रकाश डाला है। भारत के मानदण्ड का मान रखने केलिए भारतवासियों को शत्रु से लड़कर विजय का अनहद नाद सुनाने का आग्रह किया है। कवि केदारनाथ अग्रवाल लिखते हैं कि-

"भारत के उत्तर के उन्नत मानदण्ड की
जीवित जाग्रत मर्यादाओं को विदीर्ण कर,
पदाघात से जीर्णशीर्ण कर
शुभ्र शान्ति की सौम्य मूर्ति को हत - विकीर्ण कर,
तुमने जो
इतिहास विरोधी, युग अवरोधी
श्रेष्ठ - शील संस्कार निरोधी
आक्रमण किया है
हम उसका प्रतिकार करेंगे।"[1]

प्रगतिवादी कवि नागार्जुन ने हिमालय को देश रक्षक मानते हुए एक ओर हिमालय की स्तुति की तो दूसरी ओर उस पर पहरा देनेवाले सैनिकों का यशोगान भी किया है। देश की सुरक्षा का भार अपने कन्धों पर उठाकर अपने वैयक्तिक सुख-दुखों को त्यागकर हिमालय पर कर्तव्यनिर्वाह करनेवाले सैनिक आदरणीय है। जिस प्रकार सुगन्धित पुष्प के चारों ओर भंवर घिरते रहते हैं उसी प्रकार ये सैनिक हिमालय रूपी पुष्प पर भैंरे के समान (घिरते) उसकी सुरक्षा में लगे रहते हैं। काश्मीर को कवियों ने *'पृथ्वी का स्वर्ग'* कहा है तथा काश्मीर प्रकृति-सुषमा से युक्त भूमि थी पर अब उसे नन्दन वन नहीं कहा जा सकता है; वहाँ का झील इतना स्वच्छ था कि वह दर्पण समान लगता था, लेकिन आज युद्ध की भीषणता से यह झील कलुषित है। यहाँ के सैनिक चौबीसों घंटे हिम से आच्छादित इस इलाके पर पहराव का कर्तव्य एक व्रत के समान कर रहे हैं। परन्तु इनके मन में गाँव की स्मृतियाँ कौन्ध आती है। ग्रामीण ज़िन्दगी जीनेवाले युवकों के कन्धों पर हल की जगह आज देश सुरक्षार्थ बन्दुक का भार है। कवि कहते हैं –

---

1. 'हिमालय' गुरु गौरव गिरि सीमा पर - केदारनाथ अग्रवाल पृ.सं - 177

"वह कोटि-कोटि की तरुणाई का है प्रतीक
वह देश-भक्ति का अर्थ जानता ठीक-ठीक
अलसी के ताज़े फूल बटोरे नील गगन
अमराई की मंजरियों में ऋतु रहे मग्न
पर उसका मन है हिम कुसुमों का चंचरीक,
वह कोटि-कोटि तरुणाई का है प्रतीक।"[1]

हिमालय पर पहरा देनेवाले ये सैनिक देश-भक्ति के सही अर्थ को पहचाननेवाले कोटि-कोटि नौजवानों का प्रतीक है। हिमालय से संबन्धित इस राष्ट्रीय गीत के द्वारा राष्ट्रसुरक्षा बलिदान एवं सैनिकों का यशोगान किया गया है।

दिनकर जैसे कवि हिमालय के बलिदान स्वरूप का चित्रण इस प्रकार करते हैं-

'जिसके द्वारों पर खड़े क्रान्त
सीमापति! तू ने की पुकार
पद दलित इसे करना पीछे
पहले ले मेरा सिर उतार।'[2]

हिमालय की महानता एवं श्रेष्ठता इसमें है कि वह स्वयं भारत देश के सामने ऐसे खड़ा है कि "*सबसे पहले मेरा सर ले।*" इस प्रकार इस सीमापति ने स्वयं नमूना बनकर देशवासियों को बलिदान या देश केलिए कुरबान होने का न्योता दिया है।

जनता में राष्ट्रप्रेम जगाने केलिए कविगण कभी-कभी अतीत का सहारा लेते हैं। अतीत का वैभव चित्रण करते हुए कवि वर्तमान विसंगतियों की ओर जनता का ध्यान आकर्षित करते हैं। वर्तमान की स्थितियों में सुधार लाना ही इनका उदेश्य रहा है। हिमालय

---

1. 'नागार्जुन चुनी हुई रचनाएं' भाग 2 पृ.सं 148
2. 'हुंकार' हिमालय - दिनकर पृ.सं - 56

देश को गैरवान्वित करनेवाला भौगोलिक उपादान है जो अतीत के वैभवों का साक्षी रहा है। कवि दिनकर अतीत का गौरव गान करते हुए हिमालय की ओर जनता का ध्यान आकर्षित करता हैं। कवि कहते हैं - "प्राचीन भारत समस्त वैभवों एवं गरिमा से मंडित देश था। विदेशी शक्तियाँ एक-एक करके भारत आती रही ओर यहाँ का समस्त धन लूटती रहीं। देशवासियों के साथ इन्होंने अत्याचार भी किया है। राम, बलराम, अशोक, चन्द्रगुप्त आदि वीर युवकों का यह देश आज विपन्नावस्था में है। मिथिला, वैशाली, लिच्छवी, गंडकी आदि स्थानों के नष्ट हुए वैभव पर दुःखित कवि पुछते हैं कि कपिलवस्तु में जन्मे बुद्ध देव ने तिब्बत, ईरान, जापान चीन आदि को मंगल संदेश दिया था आज उसका फ़ायदा ही क्या है। युधिष्ठिर जैसे वीर स्वर्ग जाए लेकिन गंडीव तथा गदाधारी अर्जुन एवं भीम लौटकर आए। अर्थात भारत को अब अर्जुन और भीम जैसे वीर योद्धाओं की वीरता एवं साहसिकता की सख्त ज़रूरत है। तथा अब देश रक्षा का समय आया है। भारत सदैव युद्ध या हिंसा का विरोधी रहा है। हमारी संस्कृति ने यही पाठ पढ़ाया कि विनय, त्याग एवं दानशीलता, अहिंसा ही श्रेष्ठ है। लेकिन दूसरे देशवाले भारत को मिटाना या गुलाम बनाना चाहते तो भारतवासी कायर बनकर न बैठेगे। इसका प्रत्युत्तर ज़रूर दें। भगवान शंकर का वास स्थान हिमालय पर संकट आ पड़ा है। हमारी संस्कृति में मौन, त्याग आदि का महत्त्व रहा है। हिमालय इसका पालन करता है। यदि देश स्वतन्त्र हो तभी आदर्श पालन हो जाएगा। आज की अवस्था में हिमालय तपस्या त्यागकर सिंहनाद करके जागें। हिमालय से जागें कहकर कवि वास्तव में भारतीय जनता को जागने का आह्वान देते हैं।" कवि कहते हैं–

"तू शैलराट् ! हुंकार भरे
फट जाय कुहा, भागे प्रमाद।
तू मौन त्याग कर सिंहनाद

रे तपी! आज तप का न काल।

नव युग शंख-ध्वनि जगा रही

तू जाग, जाग मेरे विशाल।"[1]

हिमालय का यह राष्ट्रीय रूप दिखाकर जनता में क्रान्ति का भाव पैदा करना ही कवि का उद्देश्य रहा।

दिनकर ने *'परशुराम की प्रतीक्षा'* में चीन आक्रमण का विरोध तथा इस पर कवि का क्षोभ व्यक्त किया है। चीन आक्रमण ने भारतीय जनमानस को झकझोर डाला। चीनी आक्रमण ने भारतीय जनमानस में पराजय तथा निराशा के बीज बो दिए थे। पराजय ने कवियों को विश्लेषण केलिए प्रेरित किया। दो तरह की काव्य धाराएं एक साथ विकसित हुई - एक तरफ दुश्मन को *'मार भगानें'* के साथ अतीत गौरव गान था तो दूसरी तरफ अतीत गौरव के साथ वर्तमान परिस्थिति के प्रति विक्षोभ का स्वर मिलता है। राष्ट्रीय कविता के इस काल में युद्धोन्मुखी स्वर प्रबल रहे। नेफा के मैदान में जब भारतीय सेना पराजित हो गई, तब उस पराजय से देश का प्रत्येक नागरिक चिन्तित हो उठा, और हार के कारणों पर विचरने लगा। प्रस्तुत कविता में कवि ने ये ही सवाल उठाये हैं। राष्ट्र के हृदय में घुमड़नेवाली बचैनियों को कवि बारी-बारी से आभिव्यक्ति देता है और फिर कविता के अंतिम सर्ग में आकर राष्ट्र को नवनिर्माण केलिए प्रेरित करता है। लोहित भारत वर्ष का बड़ा ही पवित्र भाग है। पुराकाल में वहाँ परशुराम का पाप-मोचन हुआ था। आज एक बार फिर लोहित में भारतवर्ष का पाप छूटा है।

"ताण्डवी तेज फिर से हुंकार उठा है

लोहित में था जो गिरा, कुठार उठा है।"[2]

---

1. 'हुंकार' हिमालय - दिनकर - पृ.सं - 56

2. 'परशुराम की प्रतीक्षा' - दिनकर - पृ.सं - 31

नेफ़ा के मैदान में हारा हुआ सैनिक खड़ा है। कवि उससे प्रश्न पूछता है और सैनिक कवि को उत्तर देता है। पहला प्रश्न ही इतना तीखा है कि वह हमारी तत्कालीन रक्षा व्यवस्था पर प्रश्न-चिन्ह बन जाता है।

"गरदन पर किसका पाप वीर ढोते हो?
शोणित से तुम किसका कलंक धोते हो?"[1]

हिमालय जो कुबेर की भूमि है जो खनिज-संपदा से संपन्न है आज युद्ध-भूमि होगी सभी का नाश होगा हिमालय के पवित्र वातावरण में होनेवाले इस युद्ध के संबन्ध में कवि कहते हैं–

"पूछो कुबेर से, कब सुवर्ण वे देंगे?
यदि आज नहीं तो सुयश और कब लेंगे?
तूफान उठेगा, प्रलय-बाण छूटेगा,
है जहाँ स्वर्ण, बम वही स्यात् फूटेगा।
जो करें किन्तु कंचन यह नहीं बचेगा,
शायद, सुवर्ण पर ही संहार मचेगा।
हम पर अपने पापों का बोझ न डालें,
कह दो सब से, अपना दायित्व संभालें।"[2]

भारत माता के भव्य चरण पर चलनेवाले सैनिकों की जिह्वा पर एक ही प्रण है कि वे सीमा से नहीं हटेंगे तथा औरी या शत्रु का सिर काटेंगे। हिमालय की निर्झरी तप्त कुण्डों से रक्त फूटेगा तथा यह नगराज रण मुड़ों से भर जाएगा। यहाँ की रणचण्डी भेंट माँगेगी और लाशों पर फ़ौज बढ़ चलेगा।

---

1. 'परशुराम की प्रतीक्षा' दिनकर - पृ.सं - 1
2. 'परशुराम की प्रतीक्षा' - दिनकर - पृ.सं - 5

"फूटेगी स्वर निर्झरी तप्त कुण्डों से
भर जायेगा नगराज रण्ड-मण्डों से।"[1]

हिमालय पर होनेवाले इस आक्रमण को समस्त भारतीयों की स्वतन्त्रता पर होनेवाला वार माना है। भारत माँ के किरीट पर जो वार हुआ है उससे डरना नहीं बल्कि डटकर मुकाबला करना है। भारत के प्राकृतिक उपादानों के द्वारा कवि जनता को उद्बोधित करता है। वे कहते हैं-

"गरजो हिमाद्रि के शिखर, तुंग पाटों पर,
गुलमर्ग, विन्ध्य, पश्चिमी पूर्व घाटों पर,
भारत समुद्र की लहर, ज्वार-भाटों पर,
गरजो, गरजो मीनार और लाटों पर।"[2]

भारत के वीर युवकों को सुप्त अवस्था से जगाने केलिए भारत के प्रमुख वीर पुरुषों का स्मरण किया है। चाणक्य, चन्द्रगुप्त, राणा प्रताप, गोविन्द, शिवजी माता लक्ष्मीबाई, नेताजी, टिपु सुल्तान, आशफ़ाक, उसमान भगतसिंह आदि का उल्लेख करके व वि कहते हैं-

"जाग्रत पौरुष प्रज्वलित ज्वाल होता है
शूरत्व नहीं कोमल, कराल होता है।"[3]

शत्रुओं के इस कुव्यवहार देखकर कवि कहते हैं कि

"पर्वतपति को अमूल डोलना होगा,
शंकर को ध्वंसक नयन खोलना होगा।
सदियों में शिव का अचल ध्यान डोला है,
तोपों के भीतर से भविष्य बोला है।"[4]

---

1. 'परशुराम की प्रतीक्षा' दिनकर - पृ.सं 7
2. 'परशुराम की प्रतीक्षा' दिनकर - पृ.सं - 8
3. 'परशुराम की प्रतीक्षा' - दिनकर पृ.सं - 10
4. 'परशुराम की प्रतीक्षा' - दिनकर पृ.सं - 12

अर्थात् हिमालय पर शत्रुओं का आक्रमण होगा तो भारतीय वीरों को डटकर उनका मुकाबला करना होगा। पर्वतपति या हिमालय को ध्यानावस्था से जागना होगा तथा यहाँ के प्राकृतिक वातावरण को अब सचेत होना है। कवि हिम-भूमि पर घटित पौराणिक घटना को प्रस्तुत करते हुए शत्रुओं को चेतावनी देता है कि शिव के तप को भंग करने से कामदेव को यहीं भस्म होना पड़ा था। यहीं आज युद्ध का कोलाहल मचानेवाले शत्रु का अमूल नाश होगा।

नीरज जैसे कवि भारत का भौगोलिक परिचय कराते हुए उसकी सुरक्षा की ओर इशारा करते हैं। कवि कहते हैं लद्दाख हमारी देहरी है, नेफा घर का द्वार, आसाम आँगन है, हिमालय आँगन की दीवार। तीर्थराज कैलास के एक-एक (कण) पत्थर में शिव शंकर है जो इनकी रक्षा करता है। मानसरोवर भारत के इतिहास का आमुख है। भारत की उत्तर दिशा के प्रमुख स्थलों का परिचय कराते हुए भारत रूपी घर को शत्रुओं की कुद्रष्टि से सुरक्षित कराने का आह्वान देते हैं। इस प्रकार *'मानसरोवर आमुख है'* कविता में कवि नीरज नेफ़ा, हिमालय, कैलास, मानसरोवर का भारतीय इतिहास में स्थान निर्धारित करते हैं।

अतः प्रस्तुत अध्याय के हिमालय सम्बन्धी राष्ट्रीय कविताओं में हिमालय पर पहरा देनेवाले सैनिकों की स्तुति, भारत के उत्तर में उन्नत मानदण्ड समान खड़े हिमालय पर आक्रमण करनेवाले चीन का विरोध, *'पहले ले मेरा सिर'* कहकर आत्मबलिदान केलिए तैयार हिमालय का चित्रण, अतीत गौरव गान कर हिमालय के संदर्भ में भारतीय वीर पुरुषों का स्मरण आदि पर विचार हुआ है। हिमालय से मौन त्यागकर सिंहनाद करें कहकर कवि जनता में स्वतन्त्रता के हेतु क्रान्ति भाव उत्पन्न कराना चाहते हैं। हिमालय पर होनेवाले आक्रमण को समस्त भारतीयों की स्वतन्त्रता पर होनेवाला वार माना है।

प्रगतिवादी हिन्दी कवियों का हिमालय संबन्धी कविताओं का सृजन एवं उद्देश्य

नरेन्द्रशर्मा, शिवमंगल सिंह सुमन, नागार्जुन, केदारनाथ अग्रवाल, नीरज, दिनकर, गंगा प्रसाद पाण्डेय आदि प्रगतिवादी कवियों की कविताओं में हिमालय के भौगोलिक, प्राकृतिक, धार्मिक, आध्यात्मिक नैतिक एवं राष्ट्रीय संदर्भ देखने को मिलता है, जो प्रगतिवादी हिन्दी कविता में हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ के संदर्भ के उद्‌घाटन में सहायक रहे हैं।

सांस्कृतिक परम्परा तथा राष्ट्रीयता की भावना की अभिव्यक्ति को काव्य केलिए अनिवार्य, माननेवाले कवि नरेन्द्र शर्मा ने 'कौसानी', '*कूर्माचल*' आदि हिमालय के रमणीय स्थानों को अपनी कविताओं में स्थान देते हुए कौसानी की प्रकृति को '*कूर्माचल भर की पटरानी*' माना है। कौसानी के पर्वत प्रदेश में पावस ऋतु के आगमन से होनेवाले भयानक प्राकृतिक वातावरण का चित्रण करते हुए कौसानी को पार्वती तथा उसके सामने के नन्दादेवी के तुंग शिखर को शिव का वास स्थान माना है और हिमालय के धार्मिक महत्व पर भी प्रकाश डाला है। कूर्माचल के प्राकृतिक सौन्दर्य का प्रकाशन करते हुए कूर्माचल के संबन्ध में कवि कहते हैं कि "वह सुन्दर से सुन्दर है सुन्दरतम है वह कूर्माचल।" कूर्माचल को देवाधिदेव, सुर, मुनि, किन्नर, मानव, पार्वती किन्नरी, परी, अप्सरा की भूमि माना गया है। नागार्जुन की '*बादल को घिरते देखा है*', '*कालिदास*', 'सिन्धु नद', '*बर्फ़ बड़ी है*', 'देवदारु', '*सजीले प्रिय देवदार*', '*बलाका*', '*हिम कुसुमों का चंचरीक*', '*सफ़ेद बादल*' आदि हिमालय संबन्धी कविताओं में कालिदासकालीन प्रकृति की एक झलक पायी जाती है। हिमालय की प्रकृति को बड़े मोहक एवं सुन्दर बताने के साथ साथ उसके वास्तविक रूप को भी चित्रित किया है। नागार्जुन ने पुराण प्रसिद्ध हिमालय तथा पृष्ठभूमि के रूप में पौराणिक प्रसंगों को स्वीकार कर अपनी प्रगतिवादी दृष्टि की स्थापना ओर एक ठंग से किया है। कवि को समाज और उसकी खासियताओं का अच्छा पता था। नागार्जुन ने बादल को घिरते देखा है कविता

में हिमालय के प्रकृति सौन्दर्य प्रमुख स्थान, मानसरोवर के कमल तथा हंस, चकवा-चकई, कस्तूरी-मृग तथा हिमालय के निवासी किन्नर किन्नरियों को चित्रित किया है। नागार्जुन जैसे प्रगतिवादी कवि कल्पना लोक से भिन्न होकर हिमालय का यथार्थ चित्र खिंचता है। प्रस्तुत पंक्तियों से कवि की प्रगतिवादी क्रांतिकारी विचार प्रकट है–

"कहाँ गया धनपति कुबेर यह
कहाँ गयी उसकी वह अलका
नहीं ठिकाना कालिदास के
व्योम - प्रवाही गंगाजल का,
ढूँढा बहुत परन्तु लगा क्या
मेघदूत का पता कहीं पर
कौन बताए वह छायामय
बरस पड़ा होगा न यहीं पर
जाने दो, वह कवि कल्पित था,
मैं ने तो भीषण जाड़ों में
नभ - चुम्बी कैलाश शीर्ष पर,
महामेघ को झंझानिल से
गरज - गरज भिड़ते देखा है
बादल को घिरते देखा हैं।"

देवदार, सजीले प्रिय देवदार आदि कविताओं में हिमालय के प्राकृतिक वातावरण में पाए जानेवाले देवदारू वृक्ष की खासियताओं पर प्रकाश डालते हैं। हिमालय से निःसृत होकर आनेवाली सिन्धु नदी की सांस्कृतिक महिमा का प्रतिपादन कर सिन्धु नदी को स्वतन्त्र तथा भारतवासियों को पराधीन मानते हैं। हिमगिरि की साकर नदी को निर्मम इसलिए बताया है क्योंकि वह पश्चिम की ओर बहती है इस भूमि के खून को खींचती है। सिन्धु नदी के तट पर मीरों एवं कल्हरों ने शासन किया था। मृगया करते हुए राजा या वीर योद्धा थक जाते

तो इसी के तट पर जल पीते थे। नगपति के हिममय शिखरों के ऊपर छाए सफ़ेद बादल का प्राकृतिक सौन्दर्य, बलाकों का हिमालय के नभ में उड़ने का चित्रण किया है। कालिदास नामक कविता में कालिदास के महान पात्रों के दर्द को कालिदास पर आरोपित किया है और पृष्ठभूमि के रूप में हिमालय को अपनाया है। हिमालय के राष्ट्रीय महत्व का प्रतिपादन करनेवाली कविता है हिम कुसुमों का चंचरीक में काश्मीर के संबन्ध में बताते हैं कि काश्मीर प्रकृति सुषमा से युक्त भूमि थी पर अब नन्दन-वन नहीं रहा, वहाँ के झीलों में हमारा छहरा नहीं दिखाई पड़ता दर्पण समान स्वच्छ वह झील आज युद्ध की भीषणता से कलुषित है। हिम रूपी कुसुम को घेरनेवाले भ्रमर है सैनिक।

शिवमंगल सिंह सुमन का विन्ध्य-हिमालय नामक काव्य संग्रह कवि के नेपाल प्रवास के पश्चात् रूपायित की गई है। हिमालय को अपनी अधिकांश कविताओं की पृष्ठभूमि बनानेवाले महाकवि कालिदास का स्मरण करने वाले कवि सुमन को भी इसी हिम-भूमि का सौन्दर्य काव्य-सृजन केलिए प्रेरणा देता रहा, जो इस काव्य-संकलन की अधिकांश कविताओं में प्रतिफलित होता हुआ दिखाई देता है। इस काव्य-संकलन के भूमिका भाग में ही इसके सौन्दर्य के संबन्ध में कवि कहते हैं कि– *"हिमालय के रजत रंगशीर्ष से उद्‌भासित काठमांडू उपत्यका इंद्रपुरी की सतंरगी विभा को भी चुनौती देती प्रतीत होती थी।"* *'आह्वान'* नामक कविता में भगवान शिव द्वारा अर्जुन को पशुपतास्त्र देने की घटना का स्मरण करनेवाले कवि हिमालय की ऊँचाई, महानता तथा दैवत्व के आगे नतमस्तक होते हैं। कवि अपना कलुष खोट सबकुछ जलाकर पशुपतिनाथ से वरदान पाना चाहते हैं। *'काठमण्डू की पहली साँझ'* कविता में कवि मालवा में रहनेवाली पत्नी को याद करते हैं। इस हिमाच्छादित वातावरण में पहाड़ी ढाल से उठनेवाले धुंधले सफ़ेदी धुआँ देखकर कवि को ऐसा लगता है कि वह उसके अन्तर की पीड़ा, विह्वलता या दर्द है। दूसरी ओर कवि इस समूचे शैल-शिखर को धरती की हथेली पर उबलनेवाला चाय का प्याला मानते है जिससे साफ़ उठ रही है। वास्तव

में कवि के मन की विरह तथा व्यथा को पहाड़ों की विरह तथा व्यथा कहा है। *'वातायन से हिमालय दर्शन'* कविता में कवि यह बताता है कि हिमालय के अलौकिक लोक का दर्शन करना कवि केलिए सबसे बड़ा सौभाग्य है। यहाँ ऋषि एवं तपस्वी ज्ञान तथा मुक्ति की तलाश में भटकते फिरते हैं, शिव-पार्वती युक्त इस भूमि से गंगा, यमुना और अलकनन्दा के रूप में कामनाओं की तरंगें उमस कर फूट पड़ती है। प्रस्तुत कविता में हिमालय के आध्यात्मिक स्वरूप का चित्र खींचा हुआ है। 'दुर्गम पथ पर गीतों के झरने से' कविता में मानव संस्कृति का आरंभिक स्थान हिमालय से मनु के चरणों को बढ़ाई मिली थी। आज युग-युगों से जमी हुई हिम परतों को पिघलाता है अर्थात् प्राचीन रूढि तथा अन्धविश्वासों को मिटाना है। युगीन परिस्थितियों के अनुसार युगीन परिवर्तन भी होना है। हिम के ठिठूरन से जड़ीभूत जगत् में चेतनता का नव श्रोत बहाना है। हिम भूमि पर इस प्रकार का परिवर्तन कवि चाहते हैं जैसे ब्रह्मसरोवर में बाँध बाँधना, स्वर्गंगा में नहरें छूटना, नन्दन वन की क्यारियों को काटना, अमरलोक का गोपुर खुलना आदि। उपर्युक्त कविताओं में कवि एक ओर हिमालय का प्राकृतिक सौन्दर्य, विरह वेदना, मानसिक विह्वलता को अभिव्यक्त करता है तो दूसरी ओर युगीन परिवर्तन का आग्रह भी करता है।

रामधारी सिंह दिनकर ने *'मेरे नगपति, मेरे विशाल'* कहकर हिमालय के प्रति अपने लगाव को व्यक्त किया है। *'हिमालय'* दिनकर की देश-भक्ति की बेजोड़ कविता है। प्रस्तुत कविता में हिमालय के द्वारा भारतीय संस्कृति के नैतिक आयाम तप, मौन, त्याग, बलिदान, विनयशीलता का परिचय कराया है। संस्कृति के ये नैतिक गुण आवश्य हिमालय में है। आत्मरक्षार्थ और न्यायार्थ युद्ध और हिंसा का भी समर्थन किया। हिमालय के अतीतकालीन एश्वर्य की कल्पना करते हुए वर्तमान की धरती पर उतारते हैं तो दोनों में महान अन्तर दृष्टिगत होता है। कवि के मानस में हिमालय के भव्य चित्र घूमने लगते हैं, जिनकी रेखाओं में हिमालय ने अपनी ज्योति का रंग भरा था, जिनकी जड़ता इन रेखाओं से स्पन्दित कर

डाला। आज का परिवर्तन परिस्थितियों के प्रति जनता को अवगत कराने केलिए हिमालय जैसे उपादान को श्रेष्ठ मान लिया। कवि हिमालय से आह्वान कहते हैं कि वह अपनी चिर समाधि से नीचे उतरकर काल चक्र की इस प्रत्यावर्तन का अवलोकन करें अपनी दिव्या के स्वप्नलोक का परित्याग कर आज की ठोस धरती पर उतरें। तभी उनके अन्तकरण में क्रान्ति उत्पन्न होगी। इसके अतिरिक्त *'परशुराम की प्रतीक्षा'* कविता में परशुराम के पाप-मोचन की कथा को उद्धत कर दिनकर ने हिमालय के लोहित क्षेत्र के ब्रह्मकुण्ड ताल की पवित्रता पर प्रकाश डाला है और वर्तमान स्थिति पर आशंका प्रकट की है। हिमालय की युद्ध भूमि पर पराजित सैनिकों से उनके पराजय का कारण पूछता है कवि। इस प्रकार प्रगतिवादी हिन्दी कविता में हिमालय के बहुमुखी स्वरूप देखा जा सकता है।

निष्कर्ष

संक्षेप में हिमालय की प्रकृति का प्रत्यक्ष दर्शन करने का अवसर मिलने के कारण प्रगतिवादी कवि नागार्जुन, सुमन तथा नरेन्द्रशर्मा की हिमालय सम्बन्धी कविताओं में वास्तविक या यथार्थ चित्र प्रस्तुत किया है। कुछ कविताओं में मानवीय भावों को इसकी प्रकृति पर आरोपित किया है। हिमालय के भौगोलिक स्थान जैसे कौसानी, कूर्माचल, मानसरोवर, कैलास, ब्रह्मकुण्ड, गौरी शंकर तथा नन्दादेवी के सांस्कृतिक महत्व का निर्धारण भी हुआ है। हिमालय की प्रकृति का मानवीकरण, कालिदासकालीन परिवेश को पुनः सृजन करने का प्रयत्न, पौराणिक प्रसंग शिव का प्रसन्न होकर पशुपतास्त्र देना, महन-दहन, परशुराम का पाप मोचन, सिन्धु नदी तट पर मनाए जानेवाले धार्मिक रिज़्म, तपोभूमि हिमालय का आध्यात्मिक महत्व, स्वयं गलकर लोकमंगल करनेवाले हिमालय का कल्याणकारी रूप, सैनिकों की स्तुति हिमालय का आत्मबलिदान स्वरूप, चीन आक्रमण का विरोध आदि प्रस्तुत युग के सांस्कृतिक संदर्भों का विस्तृत अध्ययन भी हुआ है। प्रगतिवादी कवि के स्वर में क्रांति या आक्रोश है वे हिमालय से मौन त्यागकर सिंहनाद करना चाहते हैं। भारत के उत्तर के उन्नत मानदण्ड पर होनेवाले वार को भारतीयों पर होनेवाला वार माना है।

पाँचवाँ अध्याय

प्रयोगवाद और नई कविता में हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ

प्रयोगवाद और नई कविता में हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ

अज्ञेय द्वारा संपादित काव्य संग्रह-तार-सप्तक (सन् 1943 ई) से प्रयोगवाद का प्रारंभ माना जाता है। अर्थात् तार-सप्तक के प्रकाशन के साथ प्रयोगवाद ने हिन्दी कविता में अपनी स्थिति की घोषणा की और कालान्तर में वह पुष्ट और दृढ़ होता गया। दूसरा-सप्तक के प्रकाशन से यह प्रयोगवादी काव्य-धारा नए नाम को धारण करने केलिए व्याकुल प्रतीत होने लगी। यह सन् 1954 ई में डॉ० जगदीश गुप्त और डॉ० रामस्वरूप चतुर्वेदी के प्रयास से नई कविता अभिधान ग्रहण करती है। नई कविता प्रयोगवाद के ही विकास को दिखाती है।

प्रयोगवाद के सम्बन्ध में डॉ० शिवकुमार मिश्र का कथन है कि-"सन् 1943 से 1955 के समय के बीच प्रयोगवादी कविता ने हिन्दी काव्य क्षेत्र में अपना एक निश्चित स्थान बना लिया है।"[1] इस काल की काव्य-धारा पर मनोविश्लेषणवाद, प्रतीकवाद, अस्तित्ववाद, अतियथार्थवाद, मानवतावाद, बिम्बवाद आदि पाश्चात्य काव्य आन्दोलनों का प्रभाव पड़ा है। प्रयोगवादी काव्य व्यक्ति-स्वतन्त्र्यवादी विचार को मान्यता प्रदान करता है। इनके काव्य में वैयक्तिक या अहं की प्रतिष्ठा ही नहीं है अपितु अहं का विसर्जन और वैयक्तिकता का सामाजिकता में विलयन भी स्वीकृत है। एक ओर जीवन के प्रति आस्था, व्यक्तित्व के प्रति आस्था, लघुत्व के प्रति आस्था, वर्तमान के प्रति आस्था, शंका, अनिश्चय, निराशा, कुंठा और घुटन, पराजय, पलायन और दर्द आदि है तो प्रयोगवादी काव्य की दूसरी महत्वपूर्ण बात है - बौद्धिकता का समावेश। बौद्धिकता को जब काव्य में स्वीकृत किया गया तो काव्य चिन्तन की प्रक्रिया में ही परिवर्तन आ गया और इसलिए प्रयोगवाद में प्रयोग के माध्यम से सत्य की खोज की स्थापना हुई है। प्रयोगवाद ने क्षण को अत्यधिक महत्व प्रदान किया है।

1. 'नया हिन्दी काव्य' डॉ० शिवकुमार मिश्र पृ.सं 205

प्रयोगवाद ने अपनी काव्य वस्तु में व्यक्ति के अस्तित्व की प्रतिष्ठा कर नवीन युगीन यथार्थ को उसके सम्पूर्ण परिवेश के साथ स्वीकृत किया। परम्परा और रूढ़ि का भेद स्पष्ट कर सभी क्षेत्रों में रूढ़ परम्परा का खण्डन कर नवीन प्रयोग की ओर रूझान पैदा की गई है। अपनी विषय वस्तु में प्रयोगवादी काव्य ने नवीन सन्दर्भो के प्रति अपनी जिज्ञासा तथा रुचि का विस्तार किया है। उसने इसीलिए युग के यथार्थ को चाहे वह कैसा ही कुरुचिपूर्ण, भेदस और अवसादग्रस्त ही हो इन्होंने अपनी वाणी प्रदान की है। पुरानी पौराणिक गाथाओं से वस्तु लेकर प्रयोगवादी कवि न उसे नवीन सन्दर्भो में नवीन अर्थ व्याप्ति से भर दिया है। शिल्पगत दृष्टि से प्रस्तुत युग के कवियों ने शब्दों को नया अर्थ देना चाहा है उनकी राय में पुराने उपमान मैले हो गए हैं और नयों की खोज करना है, वह कम से कम शब्दों में अधिक से अधिक अर्थ भरना चाहता है, कम से कम रेखाओं के उपयोग से व्यापक चित्र अंकित करना चाहता है। संस्कृत निष्ठ पदावली से लेकर बोलचाल तक की भाषा का प्रयोग यहाँ निर्बाध रूप से हुआ है। संस्कृत, अंग्रेज़ी, उर्दु आदि से शब्द ग्रहण किये ही है इसके साथ ही उसने लोक भाषा के कितने ही शब्दों को विशुद्ध ग्राम्य अंचल में ग्रहण कर उनका प्रयोग किया है। प्रयोगवादी कवि ने अपने भावों और विचारों की अभिव्यक्ति केलिए नाना विध उपमानों, प्रतीकों और बिम्बों को स्वीकार किए है। प्रयोगवाद की सबसे बड़ी देन यही है कि इसने पुरानी लीक को तोड़ा और आगामी हिन्दी की कविता को नई लीक प्रदान की है।

'*नयी कविता*' प्रयोगवादी काव्यधारा की वह अभिधा है, जिसका प्रयोग अज्ञेय ने '*दूसरा सप्तक*' की भूमिका में प्रयोगवादी कवियों केलिए किया था। सर्वप्रथम नयी कविता में ही मानव - व्यक्तित्व के वैशिष्ट्य तथा उसके आत्मविश्वास की सुरक्षा एवं प्रतिष्ठा को पूर्णतः प्रतिफलित करने की चेष्टा की गयी है। नये कवियों ने आधुनिकता और समसामयिकता के अन्तर का निर्देशन करते हुए उनके महत्व का द्योतन किया है। प्रयोगों का आश्रय लेकर

नयी कविता ने देशगत चेतना के असामाजिक और रुग्ण भावनाओं को अभिव्यक्त करना चाहा है। काव्य सर्जना केलिए वैज्ञानिक दृष्टिकोण की आवश्यकता का निरूपण करते हुए नए कवियों ने उसकी अनिवार्यता का निर्देश किया है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण से उनका आशय उस बौद्धिक स्वतन्त्रता से है जो सदा से जीवन के प्रति निडर और अन्वेषी प्रश्न उठाता रहा है। नयी कविता की पृष्ठभूमि आधुनिक जीवन की समग्रता न होकर एक विशेष स्थिति है। जीवन के समग्रगत परिप्रेक्ष्य को ग्रहण न कर उसके एक अंश को, जो विजड़ित है, उसी को काव्य का प्रतिपाद्य स्वीकार करते हैं। नए कवियों ने प्राचीन प्रतीकों, भंगिमाओं और शब्द प्रयोगों को त्यागकर उसे नए उपमानों और प्रतीकों का अवतरण दिया है। इनका मत है कि प्राचीन काव्य में जो स्थान चरित्र का था वही आधुनिक काव्य में बिम्बों का मान लिया गया है। इसका कारण यह है कि नये कवियों को बिखरी अनुभूतियों और जटिल संवेदनाओं को रूपायित करने केलिए चरित्र की अपेक्षा बिम्बों से अधिक सफलता मिली है। राजेन्द्र किशोर, अजित कुमार, कीर्ति चौधरी, केदारनाथ सिंह, कुँवर नारायण, लक्ष्मीकान्त वर्मा तथा जगदीश गुप्त आदि नए कवियों में प्रमुख रहे हैं। नयी कविता नैतिक स्तर पर जीवन के यथार्थ से असम्पृक्त नैतिकता को स्वीकार नहीं करती। वह केवल सामाजिकता के आवरण से युक्त कला को ही महत्वपूर्ण न मानकर व्यक्तित्व से युक्त दृष्टि का समुचित सम्मान करती है। वह सांस्कृतिक आग्रहों की अपेक्षा उन सांस्कृतिक आधारों की पुष्टि करना चाहती है जो प्रत्येक स्थिति में मानव-मात्र में निष्ठावान होकर उसके विभिन्न स्तरों को अनुभूति के माध्यम से व्यक्त करता है।

प्रयोगवाद और नई कविता में हिमालय को कवियों ने नए दृष्टिकोण से आँका गया है। प्रयोगवाद और नयी कवियों की हिमालय सम्बन्धी कविताओं का आगे परिचय कराया गया है।

प्रयोगवाद और नई कविता के प्रमुख कवि और उनकी हिमालय सम्बन्धी कविताएं- एक परिचय

तार सप्तक (1943), दूसरा सप्तक (1951), तीसरा सप्तक (1959), चौथा सप्तक (1967) एवं नई कविता के कवियों की हिमालय सम्बन्धी कविताएं प्रस्तुत अध्याय में संकलित है। तार-सप्तक के कवियों में अज्ञेय की कविताएं - '*दूर्वांचल*', '*बरफ की झील*' (सुनहले शैवाल), '*असाध्यवीणा*' (आँगन के पार द्वार), '*नन्दादेवी*' (पहले मैं सन्नाटा बुनता हूँ), '*कौन सफलता*' (अदृश्य नदी); तार-सप्तक के ही एक अन्य कवि गिरिजाकुमार माथुर की कविता '*बरफ़ का चिराग*' (धूप के धान) तथा नेमिचन्द्र जैन की कविता '*सुनोगे*' (एकान्त) आदि कविताएं हिमालय से सम्बन्धित है। दूसरा सप्तक के कवियों में शमशेरबहादुर सिंह की '*सत्यमेवजयते*' (चुका भी हूँ नहीं मैं), धर्मवीर भारती का '*घाटी के बादल*'; भवानी प्रसाद मिश्र के '*शिखर-प्रश्न*', '*प्रलय*' तथा '*कमल के फूल*' तथा नरेश मेहता का '*महाप्रस्थान*', '*उषस्, उषस्-2 अश्व की वल्गा*' आदि कविताएं हिमालय की महिमा से ओतप्रोत है। तीसरा सप्तक के कवियों में विजयदेवनारायण साही के '*हिमालय की याद में एक पत्र*' (मछली घर), '*क्या करूँ*', '*अर्धभस्म देवदारु*' (मछली घर), '*तीर्थ तो है वहीं*' (मछली घर), '*हिमालय के आँसू*' (संवाद तुमसे) तथा केदारनाथ सिंह का '*भारत की सीमा पर एक नेपाली शहर*' (उत्तर कबीर तथा अन्य कविताएं)। चौथा सप्तक के कवियों में कैलाश वाजपेयी का '*हिमालय पार कर*' (तीसरा-अंधेरा), बालकृष्ण राव का '*बर्फ की दीवार*', '*नीचे तलहाटियों से*' (अर्द्धशती) आदि कविताएं ऐसी कोटि में आ जाती है। इसके अतिरिक्त नए कवि जगदीश गुप्त का '*हिम-विद्ध*' काव्य-संग्रह हिमालय पर्वत-प्रदेश में कवि के अनुभवों का चित्रण है।

अज्ञेय

तार-सप्तक के कवि अज्ञेय की कविताओं में भारतीय संस्कृति की निरन्तरता का प्रतिफलन हुआ है। संस्कृति की यह झलक हिमालय सम्बन्धी उनकी कविताओं में

यथावत् मिलती है। हिमालय प्रकृति एवं भौगोलिक परिवेश पर विशेष ध्यान देनेवाले अज्ञेय की अधिकांश हिमालय सम्बन्धी कविताएं प्रकृतिपरक है। *'दूर्वाचल'* नामक कविता में हिमालय के वातावरण में आए हुए कवि चीड़ वन, नदी तथा नीड़ों में विहग शिशु को आँख भर देखा। हिमालय के ऐसी सुन्दर एवं मन बह लाने वाले दृश्यों को देखकर कवि ने ठान ली की पुनः उसी के प्राकृतिक अंचल में अवश्य लौट आऊँगा।[1]

हिमालय की प्रकृति रमणीयता को उजागर करनेवाली एक अन्य कविता है *'असाध्यवीणा'*। सदैव शीतल या ठंडी हवा के बहाव तथा हिमावृत चोटियों से अनुग्रहीत हिमालय का प्राकृतिक वातावरण भारत के अन्य क्षेत्रों से भिन्न है इस कारण इसकी कुछ खास विशेषता भी है। *'असाध्यवीणा'* कविता का मुख्य विषय यद्यपि कलाकार की सर्गात्मक प्रतिभा की ओर संकेत करना था फिर भी इसके मूल में हिमालय के भौगोलिक वातावरण के चित्रण को प्रमुखता दी है। प्रस्तुत कविता में कवि ने उत्तराखण्ड (हिमालय) के गिरि प्रान्तर को साधकों, तपास्वियों की तपोभूमि माना है, जहाँ से बहुत समय पहले राजा के पास एक वीणा लाई गयी थी। इस वीणा का पूरा इतिहास राजा को पता नहीं था। साधक वज्रकीर्ति ने मन्त्रपूत अति प्राचीन किरीटी तरू (जो हिमालय के गिरिप्रान्तर में दिखाई देनेवाला वृक्ष) से वीणा गढ़ी थी। वीणा बनकर पूरी हुई और वज्रकीर्ति की जीवन लीला भी समाप्त हो गयी। राजा के सब जाने माने कलावन्तों ने इस वीणा को बजाने का प्रयास किया लेकिन असफल हुए। यह वीणा असाध्यवीणा के रूप में प्रसिद्ध हुई थी। तब राजा ने हिमालय के गुहा गेह से केशकम्बली प्रियंवद को बुलाकर असाध्यवीणा के सम्बन्ध में बताया और भरोसा प्रकट किया कि अब उसके जीवन की साध पूरी होगी जब यह वीणा बज उठेगी। राजा के किरीटी तरु का विस्तृत विवरण पाकर वह वीणा को गोद में रखता है, उसके तारों

1. 'इन्द्रधनु रौंदे हुए ये' दूर्वाचल अज्ञेय - पृ.सं 82

पर मस्तक टेकता है, शान्त होकर, अभिमन्त्रित वीणा को साधने की प्रक्रिया में अपने को शोधने लगता है। इस प्रक्रिया में वह किरीटी तरु और उसके परिवेश की व्यापकता में लीन हो जाता है। इसी प्रक्रिया में वह असाध्यवीणा का रहस्य पा जाता है और उसे बजाने में सफल हो जाता है। प्रस्तुत कविता से अज्ञेय ने हिमालय के बहुआयामी महत्व को अर्थात् उसके भौगोलिक, प्राकृतिक, आध्यात्मिक, नैतिक महत्व को उद्घाटित कर उसके सांस्कृतिक महत्व को यथोचित रूप से स्पष्ट किया है। हिमालय के भौगोलिक परिवेश किरीटी तर के पालन केलिए सर्वथा उपयोगी है तथा इसके प्राकृतिक परिवेश में वन-संपदा का चित्रण किया है। हिमालय अपने सद्गुणों के कारण जितना पवित्र है किरीटी तरु भी उतना ही पवित्र है इसलिए जब कोई साधारण व्यक्ति उसे बजाने केलिए उठा लेता है वह असफल हो जाता है। केवल केशकम्बली प्रियंवद जैसे साधक ही उस किरीटी तरु के परिवेश (हिमालय के वातावरण) से तादात्म्य पाता है और सफल होता है। ऋषियों एवं तपस्वियों की तपो भूमि हिमालय के हिमशिखर मन्त्रों से मुखरित है। ऋषियों के मुँह से निसृत ये पवित्र मंत्र हिमशिखर में जा टकराकर पुनः प्रतिफलित होते हैं मानो वे रहस्य कहते रहते है। इस प्रकार हिमालय का पवित्र वातावरण, हिमालय में ही दिखाई देनेवाला किरीटी तरु, हिमालय से आए हुए केशकम्बली प्रियंवद आदि प्रसंगों द्वारा उत्तराखण्ड (हिमालय) को अपनी कविताओं में प्रतिष्ठित करने का प्रयास अज्ञेय ने किया है।[1]

'नन्दादेवी' कविता में अज्ञेय ने हिमालय के प्रमुख शिखर नन्दादेवी के नष्ट होते हुए (वन कटौती) प्राकृतिक सौन्दर्य की ओर चिन्ता प्रकट की है। हिमालय की पर्यावरण की ओर विशेष ध्यान देनेवाले कवि ने आगे यह बताया है कि हिमालय को स्वर्ग का सीढ़ी माना जाता था तथा जिस ओर से पांडव स्वर्ग की ओर गए थे लेकिन आज शिखर की ओर दौड़ना

---

1. 'आँगन के पार द्वार' असाध्यवीणा अज्ञेय पृ.सं. 71

मृत्यु का वरण करना है बताकर आगे के बीस, तीस पचास वर्षों के बाद होनेवाली दारुण स्थिति का संकेत किया है।[1]

'बरफ की झील' कविता में हिमालय के प्राकृतिक वातावरण में होनेवाले बदलाव को कवि एक नए ठंग से प्रस्तुत करते हैं। सूर्य किरणों के स्पर्श से हिम शिखरों का स्वर्ण मय वर्ण होना और उनका पिघलना ये देखकर ऐसा लगाता है मानो ये वसन्त के आगमन केलिए आतुर है। हिम के पिघलकर धरती से मिल जाने से ही वसन्त का आगमन होगा।[2]

गिरिजाकुमार माथुर

तार-सप्तक के कवि गिरिजाकुमार माथुर का *'बरफ़ का चिराग'* नामक कविता में काश्मीर के राष्ट्रीय महत्व पर प्रकाश डाला गया है। कवि चीन द्वारा हुई युद्ध विभीषिका का चित्रण कर काश्मीर की शुभ्र भूमि को लहू के लाल रंग से रंगी हुई बताते हैं।[3] काश्मीर की रमणीय प्रकृति का चित्रण कर उसे इस बर्फीले धरती का कमल माना है। यहाँ का झील कटोरे के समान चमकीला है, कुसुमों से भरे ठंडे खेत, पीला केसर, लाल चीनार के पेड़ आदि से संपन्न है। धरती के इस स्वर्ग पर आज युद्ध की भयानक चिंगारी भभक रही है, परबत पर नक्कारा बज उठता है नदियाँ बिजली बनकर उतर पड़ती है। काश्मीर की सीमाओं में चीन जैसे दुघर्ष नाग धुस आया है। काश्मीर पर हुए इस वार से गिरि में निमग्न मनु की आत्मा जाग उठें और सिंहनाद करें यही कवि की चाह है। अचल हिमालय के तन पर हुए आघात को जन उन्नायक प्रलयंकर शंकर के मन पर हुआ आघात माना है। लेकिन शिव ने जिस प्रकार कालकूट विष का पान कर इस भव का मंगल किया था आज यही भगवान

---

1. 'पहले मैं सन्नाटा बुनता हूँ' नन्दादेवी अज्ञेय पृ.सं 59-75
2. 'इन्द्रधनु रौंदे हुए ये' बरफ की झील - अज्ञेय - पृ.सं - 89
3. 'धूप के धान' बरफ का चिराग - गिरिजाकुमार माथुर पृ.सं 74-76

शंकर यहाँ भभकनेवाली आग को अवश्य ही शांत करेंगे कवि ऐसा विश्वास रखते हैं। प्रस्तुत कविता में काश्मीर की युद्ध भूमि की ओर जनता का ध्यान आकृष्ट कराया है।

नेमिचन्द्र जैन

नेमिचन्द्र जैन की *'सुनो, चीड़ के पेड़'* नामक कविता में कवि अपने दुःख एवं व्यथा को सुनाना चाहता है। अतल की गहराईयों को झाँकनेवाले तथा गगन की ओर सिर तानकर गर्व से खड़े रहनेवाले चीड़ ऊर्ध्वाकांक्षी है इसी के सामने बरफ से घिरे हुए अडिग, अगम हिम चोटियाँ है। ये चीड़ के पेड़ तथा हिमशिखर को युग युगों के साथी माना गया है। लेकिन कवि ने अपने आप को शिखर के चरणों से बहुत दूर जलता हुआ मैदान या मरुस्थल माना है। कवि में भी अनेक उच्चाकांक्षाएं थी आग्रह था अब ये सब झुलसे है। अंधेरी रात में किसी की याद में जागे रहनेवाले चीड़ को कवि अपनी दुःखद कहानी सुनाना चाहता है।[1]

शमशेरबहादुर सिंह

दूसरे सप्तक के कवि शमशेरबहादूर सिंह की कविता *'सत्यमेवजयते'* में हिमालय पर आक्रमण करनेवाले चीन को धोखेबाज़ मानते हैं। जिसने भारत से दोस्त बनने का ढोंग रचा है। कवि चीन को ललकारते हुए पूछते हैं कि - हिमालय पर कोई कालिख पोत सकता है? कोई बह्मपुत्र से खिलवाड़ कर सकता है? चीन की निन्दा करते हुए कहते हैं कि- "हिमालय कोई चीन की दीवार तो नहीं, जिसे लाँघ जाओ।"[2] भारतीय संस्कृति के नैतिक आयामों में सत्य को जो महत्व दिया गया उसे हिमालय के परिप्रेक्ष्य में चित्रित किया गया है। हिमालय को शिव-लोक माननेवाले कवि कहते हैं कि यहाँ सच्चाई की उज्वलता के सिवा सब कुछ गल जाता है। भारतीयों की शक्ति आकार में नहीं बल्कि सत्य की विजय में है। प्रस्तुत कविता में हिमालय पर हुए चीन आक्रमण का विरोध हुआ है।

---

1. 'एकान्त' सुनो, चीड़ के पेड़ नेमिचन्द्र जैन पृ.सं 99
2. 'चुका भी हूँ नहीं मैं' सत्यमेवजयते - शमशेरबहादुर सिंह - 41

भवानीप्रसाद मिश्र

भवानीप्रसाद मिश्र का *'प्रलय'*, *'कमल के फूल'* आदि हिमालय सम्बन्धी कविताएं है। *'प्रलय'* कविता में महानाश करने में सक्षम प्रलय के आगमन की सूचना दी गयी है। हिमालय के उच्च-शिखर तक उठनेवाले लहरों के सम्बन्ध में कवि कहते हैं–

"हर हिमालय श्रृंग पर
उठती लहर की ताल होगी,
और बर्फीली सतह
बड़वग्नि पी कर लाल होगी,
काल होंगी तारिणी गंगा
तरणिजा व्याल होंगी।"[1]

प्रलय की कठोरता का चित्रण हिमालय के संदर्भ में हुआ है। श्वेत हिमालय के ऊँचे बर्फिले श्रृंग का बड़वाग्नि से लाल होना, मानव जीवन के अनेक पापों से उद्धार करनेवाली हिमतनया गंगा का यमराज सा बनना, शिव के कण्ठ में नरमुण्डों की माला आदि के चित्रण से इस भयानक वातावरण का संकेत हुआ है। *'कमल के फूल'* कविता में मानसरोवर से लाए गए फूल को ज्ञान का प्रतीक मानते हैं।

धर्मवीर भारती

'घाटी का बादल' नामक कविता में हिमालय के पहाड़ी प्रान्त के सुन्दर प्राकृतिक परिवेश का चित्रण हुआ है। यहाँ के वनान्त में चीड़ों का सनसनाना, चिड़ियों का चहचहाहट तथा दूर पहाड़ी गाने का स्वर भी सुनाई दे रहा है। गहन कुहा के छा जाने से जंगली रास्ता दिखाई नहीं दे रहा था। बाँज के वृक्ष, रूपाडोरी सी नदियाँ, फूल आदि यहाँ के नैसर्गिव

---

1. 'दूसरा सप्तक' अज्ञेय भवानीप्रसाद मिश्र प्रलय

सुषमा को ओर उजागर करता है। हिमालय के ऊपर छाए हुए एक अकेल चंचल बादल को देखकर कवि को लगता है कि *"चाँदी के हिरन के समान यह घाटी में चरता हो।"* प्रस्तुत कविता में हिमालय के प्राकृतिक संदर्भ पर प्रकाश डाला गया है।[1]

नरश मेहता

'दूसरा सप्तक' के कवियों में नरेश मेहता का विशेष स्थान रहा है। *'दूसरा सप्तक'* काव्य-संग्रह में संकलित कविताएं उषस, उषस-2-अश्व की वल्गा आदि कविताओं के द्वारा उन्होंने के हिमालय के प्राकृतिक सौन्दर्य को उद्‌घाटित किया है। उषस कविता में उषा के आने से हिमालय के वातावरण में होनेवाले परिवर्तनों को चित्रित किया है। अश्व की वल्गा कविता में वे उषा की यात्रा का सुन्दर चित्र खींचते हैं।[2] यह उषा मानसरोवर, हिमालय, ग्राम और खेत, यमुना का तट आदि को देखते आ रही है। इस कविता में हिमालय की रमणीय प्रकृति को दिखाने केलिए सूर्य किरणों के द्वारा हिम-भूमि से यात्रा कराई है।[3]

नरेश मेहता का खण्ड काव्य महाप्रस्थान महाभारत की पृष्ठभूमि पर लिखा गया एक विशेष काव्य है। पुराणों से विदित होता है कि जितना भी उच्च या श्रेष्ठ व्यक्ति हो अपने जीवन के अंतिम समय हिमालय की भूमि की ओर प्रस्थान करते हैं। हिमालय में जाकर तपस्या करने से मोक्ष की प्राप्ति होगी ऐसा इनका विश्वास है। हिमालय को स्वर्ग-द्वार भी माना गया है। नरेश मेहता ने इसी को आधार बनाकर पाण्डवों का हिमालय की ओर प्रस्थान करने का चित्रण किया है। भारतीय संस्कृति की विशेषता तथा उसमें हिमालय के महान स्थान को स्पष्ट करते हुए कवि भूमिका भाग में लिखते हैं कि- *"हिमालय जड़ भी है और*

---

1. 'हिमालय' महादेवी वर्मा धर्मवीर भारती घाटी का बादल पृ.सं 162
2. 'दूसरा सप्तव' अज्ञेय - पृ.सं 114
3. 'दूसरा सप्तव' अज्ञेय पृ.सं 119

चेतन भी। वह गमलाई वनस्पति के पोषकों केलिए हिमालय 'पहाड़ भर है पर अधिकांश धूसरित भारतीयता केलिए धूर्जटी (शिव) रूप है। हिम की शुभ्रता, तेजस्विता आदि हमारी पवित्रता और स्थिति पर निर्भर है। धर्म दृष्टि बदल जाने से गंगा और गन्दले जल में कोई अन्तर नहीं रह जाता। भारतीयता, शेष मानवता से इसी अर्थ में भिन्न है कि हमारी विकास यात्रा हिंसा से अहिंसा की ओर रही है जबकि शेष मानवता की यात्रा हिंसा से घोर हिंसा की ओर। भारतीयता ने जड़ को भी चेतन बना दिया जबकि शेष ने मनुष्य को जड़ बना देने का उपक्रम किया है।"[1]

महाभारत के महाप्रस्थानिक पर्व की तरह इसकी कथा का आरम्भ हस्तिनापुर राज्य से नहीं होता बल्कि हिमालय की ऊर्ध्वमुखी चोटियों के वर्णन से होता है। नरेश मेहता के महाप्रस्थान में तीन पर्व हैं– (1) यात्रा पर्व (2) स्वाहा पर्व (3) स्वर्ग पर्व। यात्रा पर्व में नरेश मेहता ने अड़िग हिमालय के शिव रूप का वर्णन किया है जिसकी ओर प्रस्थान कर रहे हैं युधिष्ठिर, अर्जुन, भीम, नकुल सहदेव तथा द्रौपदी। प्रथम भाग में हिमालय के पर्वत प्रदेश की ऊर्ध्वगामी यात्रा के विवरण द्वारा प्रकृति और हिमालय के मिथकीय प्रतीक मानव - हिम के समातनत्व को अभिव्यक्त करता है। ज्यों ज्यों यात्रा ऊर्ध्वगामी होती, जाती है त्यों-त्यों सम्बन्ध क्षीणतर हो जाते हैं। यही मानव चेतना का सहज विकास है द्वितीय भाग में युद्ध के बाद अन्तर के सत्य का शोध करने केलिए युधिष्ठिर के नेतृत्व में वल्कल पहने पाँचों पाण्डवों द्रौपदी तथा श्वान का हिमालय के ऊर्ध्वगामी शिखर की ओर जाने का उल्लेख हुआ है।

स्वाहा पर्व में हिमालय के हिम पर चलते चलते द्रौपदी भोजपत्र पर गिर जाती है और पार्थ को पुकार उठती है। द्रौपदी की पुकार सुनकर युधिष्ठिर उसे समझाते हैं कि हिमालय के इस प्रदेश में आकर सामूहिकता वैयक्तिकता में परिवर्तित होती है। अतीत

---

1. 'महाप्रस्थान' - नरेश मेहता भूमिका

की स्मृतियों से व्यथित न होकर शिवसंकल्प को वहन करना होता है। प्रतिशोध प्रतिहिंसा तथा खुलेकेशोंवाला व्यक्तित्व तक हिम में आकर हिममय हो जाता है। हिमालय की ओर संकेत करते हुए वे कहते हैं - क्या विगत की कोई मानवी पुकार इस आगत से ज्यादा मोहव है। द्रौपदी युधिष्ठिर के पास जाना चाहती है लेकिन प्रतिक्षण बढ़ता हिम का ठंडा पाश उसे जकड़ लेता है। अपनी सारी संसारिकता हिम कुण्ड में स्वाहा करती हुई वह असफल हो जाती है। हिम द्रौपदी के और पांडवों के बीच का सम्बन्ध काट रहा है। युधिष्ठिर अपने वैचारिक व्यक्तित्व को विराट में लौटा लेने केलिए हिमालय रोहण कर रहे हैं। वे जानते हैं कि सम्बन्धता, रागात्मक संसारिकता, स्मृतियाँ और इनको वहन करनेवाला व्यक्तित्व हिम में विसर्जित होता जा रहा है। व्यक्तित्व के भीतर का स्वाहा भाव ही यात्रा का स्वर्गारोहण है। स्वर्ग पर्व युधिष्ठिर अपने देहभाव को अपने से ही उतार देना चाहता है।[1] वनस्पतियाँ (सांसारिकता का प्रतीक) आकुल होकर हिमालय की ओर दौड़ती हैं पर ऊँचाईयों पर थक कर रुक जाती हैं। चीड़, देवदारु, सुवर्ण, भोजपत्र हिम का पवित्र स्पर्श कर सकता है। युधिष्ठिर का सहयात्रि श्वान मात्र रह जाता है युधिष्ठिर बताते हैं कि *"ब्रह्म मुहूर्त में ही हिमालय स्वर्ग द्वार खोलेगा और सृष्टि के सारे पुण्य उस द्वार से प्रविष्ट होंगे।"* युधिष्ठिर हिमालय पर व्यक्ति से प्रकृति बनने आये हैं। पंचतत्व की भाँति पाँचों पाण्डव विलीन हो जाते हैं। अन्त में उत्तर का द्वार अर्थात् देवद्वार खुलता है। हिमालय से स्वाहा की ध्वनी फूटती है।

महाप्रस्थान के सम्बन्ध में मीरा श्रीवास्तव लिखती है कि *"आधुनिकता के बासीपन में यह काव्य 'हिमालय व्यक्तित्व' की ताज़ी हवा का झोंका लेकर आता है, आधुनिकता की*

---

1. "पृथ्वी जब देह का बोध त्याग देती है
तब शिव के कालजयी ललाट सी
शुभ्र हिमालय हो जाती है।"
'महाप्रस्थान' स्वर्गपर्व - नरेश मेहता - पृ.सं 125

पश्चिमी या विज्ञानवादी मनोवृत्तियों से ग्रस्त हमारे व्यक्तित्व को झकझोर कर रख देता है, और हमारा भारतीय अस्मिता के झरोखों को उघाड़ता हुआ हमारे व्यक्तित्व की जड़ पत्रों को चीरता चला जाता है।"[1] इस प्रकार इस काव्य में हिमालय व्यक्तित्व का आभास पाया गया है।

विजयदेवनारायण साही

तीसरा सप्तक के कवि की हिमालय संबन्धी कविताएं है - *'हिमालय की याद में एक पत्र'* (मछली घर) *'क्या करूँ '*, *'अर्धभस्म देवदारु '*, *'तीर्थ तो है वहीं'* (मछली घर), *'हिमालय के आँसू'* आदि कविताएं। साही ने जगदीश गुप्त के साथ जो दिन हिमालय वे रमणीय वातावरण में बिताए थे, उन्हीं घटनाओं की याद करते हुए कवि एक पत्र लिखते हैं जो एक कविता के रूप में प्रस्तुत है जिसका नाम है-

'हिमालय की याद में एक पत्र'। यह कविता जगदीश गुप्त को समर्पित है। हिमालय के अंचल में बिताए गुज़ारे गए पल कवि याद करते हैं। कवि हिमालय के वन, पर्वत, सलौनी हवा में झूमता जंगल, दुपट्टे की तरह उठती निर्झर, अनेक घाटियों के पार से आता हुआ स्वर पपीहे का, ओलों भरा बादल, कटोरे की तरह चारों तरफ़ से घेरनेवाली चोटियाँ, नदी की तेज़ लापरवाह धाराएं ढलानों पर तराशी खतियाँ, जंगली- पाटल, पत्थरों से फूटता पानी का दृश्य, नीली उजली ऊँची चोटियों पर दूर मञ्जिल सी बरफ़ इनको मन भावने दृश्यों को देख कर उस दिन अवाक् या खामोश हो गए थे। कवि उस पूर्व स्मृति में लौट जाता है। हिमालय के सराहनवर्दी (मैदान) पर चलने केलिए कवि बेचैन है।

साही ने *'अर्धभस्म देवदारु'* नामक कविता में हिमालय के प्रमुख वृक्ष देवदारु को साधारण व्यक्ति का प्रतीक मानते हैं। समाज में होनेवाली मूल्य च्युति एवं मूल्य विघटन को

---

1. 'आधुनिकता से आगे: नरेश मेहता' भूमिका मीरा श्रीवास्तव

पश्चिमी या विज्ञानवादी मनोवृत्तियों से ग्रस्त हमारे व्यक्तित्व को झकझोर कर रख देता है, और हमारा भारतीय अस्मिता के झरोखों को उघाड़ता हुआ हमारे व्यक्तित्व की जड़ पत्रों को चीरता चला जाता है।"[1] इस प्रकार इस काव्य में हिमालय व्यक्तित्व का आभास पाया गया है।

विजयदेवनारायण साही

तीसरा सप्तक के कवि की हिमालय संबन्धी कविताएं है - *'हिमालय की याद में एक पत्र'* (मछली घर) *'क्या करूँ '*, *'अर्धभस्म देवदारु '*, *'तीर्थ तो है वहीं'*... (मछली घर), *'हिमालय के आँसू'* आदि कविताएं। साही ने जगदीश गुप्त के साथ जो दिन हिमालय वे रमणीय वातावरण में बिताए थे, उन्हीं घटनाओं की याद करते हुए कवि एक पत्र लिखते हैं जो एक कविता के रूप में प्रस्तुत है जिसका नाम है-

'हिमालय की याद में एक पत्र'। यह कविता जगदीश गुप्त को समर्पित है। हिमालय के अंचल में बिताए गुज़ारे गए पल कवि याद करते हैं। कवि हिमालय के वन, पर्वत, सलौनी हवा में झूमता जंगल, दुपट्टे की तरह उठती निर्झर, अनेक घाटियों के पार से आता हुआ स्वर पपीहे का, ओलों भरा बादल, कटोरे की तरह चारों तरफ़ से घेरनेवाली चोटियाँ, नदी की तेज़ लापरवाह धाराएं ढलानों पर तराशी खतियाँ, जंगली- पाटल, पत्थरों से फूटता पानी का दृश्य, नीली उजली ऊँची चोटियों पर दूर मञ्जिल सी बरफ़ इनको मन भावने दृश्यों को देख कर उस दिन अवाक् या खामोश हो गए थे। कवि उस पूर्व स्मृति में लौट जाता है। हिमालय के सराहनवर्दी (मैदान) पर चलने केलिए कवि बेचैन है।

साही ने *'अर्धभस्म देवदारु'* नामक कविता में हिमालय के प्रमुख वृक्ष देवदारु को साधारण व्यक्ति का प्रतीक मानते हैं। समाज में होनेवाली मूल्य च्युति एवं मूल्य विघटन को

---

1. 'आधुनिकता से आगे: नरेश मेहता' भूमिका मीरा श्रीवास्तव

प्रस्तुत कविता के माध्यम से व्यक्त करते हैं। आज समाज में जो परिवर्तन आते हैं बिजली की तरह आते हैं आम आदमी इससे अवगत नहीं होता है। कवि आज के संसार को बनावटी एवं कृत्रिम मानता हैं।

'*हिमालय के आँसू*' कविता में आधुनिक युग के मानव मन के दर्द एवं पीड़ा को इसमें अभिव्यक्त किया है। कवि उस दुखी हृदय से कहते है कि हैं सत्य हिमालय सा तुम ने दिल पाया था। आघातों से टूट-टूट कर रोने के सम्बन्ध में कवि कहते हैं कि "कितने कमरों में बन्द हिमालय रोते हैं"। बाहर आकर सब एक साथ मिलकर रो लें जिससे ये आँसू अंगारे बन जाएंगे और युग-युग से सुप्त ज्वालमुखी फट पड़े जिससे धरती पर पड़ी दरारों मुँद जायें। आम आदमी की विषमता को हिमालय के आँसू कहा है जो अपने अन्दर ही दुःख सहन करता है इस स्थिति में बदलाव लाने का आग्रह करते हैं कवि।

'*तीर्थ तो है वही.....*' कविता में गंगा और मानसरोवर के धार्मिक महत्वों पर विचार करनेवाले कवि मानसरोवर की ओर लौट जाना चाहते हैं।

जगदीश गुप्त

जगदीश गुप्त की हिमालय संबन्धी कविताओं का संग्रह है '*हिम-विद्ध*'। हिम-विद्ध कविता समस्त भारतीय चेतना के प्रतीक हिमालय से जुड़े हुए व्यापक भाव सत्य को व्यक्त करता है। हिमालय ने कवि मन को गहरे रूप से प्रभावित किया है। कवि में अस्तित्व बोध जगानेवाले हिमालय के प्रति वह आभारी है। हिम-विद्ध की भूमिका भाग में कवि लिखते हैं कि – "अपने अन्तर्मन में ही नहीं बाहर के वातावरण में भी, रचनाकार के नाते जो रिक्तता का अनुभव हुआ था हिम देश के सम्पर्क ने रिक्तता के इस कठोर तिक्त अनुभव को बहुत दूर तक भाव की कोमल स्निग्ध समृद्धि से भर दिया है। यह भाव स्वर जीवन के

अन्तरंग सत्य की गरिमा है, व्यक्ति विशिष्ट रूप ही नहीं, स्वयं अस्तित्व है।"[1] "हिम-विद्ध की सारी भाव श्रेणियों के बीच मुझे लगता रहा है कि अब अपने साथ केवल मैं ही हूँ। जो कोमलता इन कविताओं में आयी है वह पाषाणों के आगे पकी ईट की कोमलता है। उसके प्रति मन में अपार कृतज्ञता बची क्योंकि उसी के द्वारा मुझे अपने अस्तित्व का प्राथमिक बोध हुआ।"[2]

कवि मानते हैं कि जो सत्य प्रतिमा से युक्त देवालयों में प्राप्त नहीं होता वह हिमालय में अजस्र उपलब्ध होता है। हिमालय की अपार सुन्दरता के आगे विनत होकर कवि ने गौरव का अनुभव किया है। इसके शिखरों की अगणित श्रृंखलाओं से आबद्ध होकर कवि को ऐसा लगता है कि उसकी मानसिक सीमाएं टूट रही हों।

भारतीय दृष्टि तत्वतः मांगलिकता और पवित्रता को केन्द्र में रखकर जीवन वे स्वरूप का आकलन करती है। पाषाणमय हिमालय भी उसके आगे कल्याणमय शिव ही रहा है। जड़ में भी चैतन्य शक्ति का सौन्दर्य उसमें लक्षित होता है। हिम देश के निवासियों का अभावमय अविकसित एवं विषण्ण जीवन इनके बहुसंख्यक रेखाचित्रों में अंकित मिलता है।

हिम-विद्ध कविता संग्रह में पर्वत प्रदेश के कवि के अनुभवों का चित्रण है। यह सात छोटे खण्डों में विभक्त है। (1) आँख भर देखा कहाँ (2) पुनः सृष्टि (3) बादलों का वलय (4) ठाकुरी के भोर (5) वन-रपन्दन (6) स्मरण जल (7) मैं वह क्यों नहीं हुआ। '*आँख भर देखा कहाँ*' खण्ड में कवि ने हिमालय का सर्वप्रथम नमन किया है। कवि हिमालय के श्रृंग को एक शिशु के अधउगे दाँत मानते हैं। हिम-शिखर, निर्झर, नदी-पथ, चीड़ वन ये दृश्य आँखों से होकर मन में बस गए और मन में हिम सौन्दर्य ही जम गया। पंक्तिबद्ध

---

1. 'हिम-विद्ध' भूमिका जगदीश गुप्त
2. 'हिम-विद्ध' भूमिका जगदीश गुप्त

देवदारु, जलदों से युक्त सरोवर, कस्तूरी के गन्ध बदरी, केदार शिखरों के पार दूसरे शिखर इन सब को क्षण भर देखने में ही कवि का मन तृप्त हो उठाता है।

आधुनिक जीवन की यही विडम्बना रही है कि प्रकृति से कटकर महानगरों का जीवन यांत्रिकता के भयानक ऊमस से बोझिल है। बाह्य वातावरण शान्त एवं ठंडा होने पर भी मन बेचैन एवं तापित है। हिमालय के वातावरण में पहुँचकर भी कवि का मन बेचैन है। हिम-जल्द, हिम-श्रृंग, हिम-छवि, हिम-दिवस हिम-रात, हिम-पुलिन, हिम-पन्थ, हिम तरु, हिम-क्षितिज हिम पात आँख ने हिम रूप को जी भर देखा है। सब कहीं हिम है, पर कवि के मन में अभी तक स्पन्दनों का उष्ण जलवाही विभामय स्रोत अविरल बह रहा है।[1] बादलों के वलय खण्ड में हिम-शिखरों के ऊपर छानेवाले बादलों के सम्बन्ध में कवि कहते हैं कि ये हिमशिखर बादल रूपी चादर ओढ़कर भी ठिठुरते रहते हैं। कवि एक हल्की सी चादर ओढ़ने से पसीज जाते हैं। अपने मन की विह्वलता को अभिव्यक्त करते हैं।[2]

हिमालय के बाहरी वातावरण तथा अपने अन्तर जगत् के परिवेश को एक नया भावात्मक रूप प्रदान करने में जगदीश गुप्त का *'हिम-विद्ध'* एक हद तक सफल रहा है।

प्रयोगवाद और नई कविता में हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ

प्रयोगवाद और नई कविता में हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ को उद्घाटित करने केलिए प्रस्तुत युग की हिमालय सम्बन्धी कविताओं के भौगोलिक, प्राकृतिक, धार्मिक, आध्यात्मिक, नैतिक एवं राष्ट्रीय संदर्भों पर विचार किया गया है।

प्रयोगवाद और नई कविता में हिमालय के भौगोलिक एवं प्राकृतिक संदर्भ

प्रयोगवाद और नई कविता में हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ को स्पष्ट करने केलिए सबसे पहले हिमालय के भौगोलिक एवं प्राकृतिक संदर्भ पर विचार किया गया है।

---

1. 'हिम-विद्ध' - पुनःसृष्टि - जगदीश गुप्त - पृ.सं - 29-31
2. 'हिम-विद्ध' - बादलों के वलय - जगदीश गुप्त - पृ.सं - 43

अज्ञेय, विजयदेवनारायण साही, जगदीश गुप्त जैसे कवि इसके भौगोलिक वातावरण से भली भाँति परिचित थे। प्रस्तुत युग की हिमालय सम्बन्धी कविताओं में हिमालय के प्रमुख पर्वत-शिखर कैलास[1], नन्दादेवी[2], गौरी शंकर[3] तथा हिमालय की प्रमुख नदी अलकनन्दा[4], मानसरोवर[5] तथा बदरीनाथ केदारनाथ[6] जैसे तीर्थस्थानों का उल्लेख हुआ है। हिमालय की वन संपदा के अन्तर्गत जंगली पाटल[7], देवदार[8], भोजपत्र[9], चीड-फूल[10], औषधियाँ[11], पाखीदल[12], ब्रह्मी[13] जैसे वृक्षों तथा पपीहा[14], भंवर[15], हंस[16], मधुमखी[17] याव[18], वृषभ[19], कस्तूरी-मृग[20], कृष्णा-कपिलाओं[21], भेड़[22] आदि का वर्णन मिलता है।

1. 'चुका भी हूँ नहीं मैं' सत्यमेवजयते शमशेरबहादूर सिंह पृ.सं 39
2. 'पहले मैं सन्नाटा बुनता हूँ' - नन्दादेवी - अज्ञेय - पृ.सं - 60
3. 'पहले मैं सन्नाटा बुनता हूँ' - नन्दादेवी - अज्ञेय - पृ.सं - 65
4. 'हिम-विद्ध' जगदीश गुप्त पृ.सं - 23
5. 'महाप्रस्थान' नरेश मेहता - पृ.सं - 28
6. 'हिम-विद्ध' जगदीश गुप्त पृ.सं - 26
7. 'मछली घर' हिमालय की याद में एक पत्र साही पृ.सं 54
8. 'मछली घर' अर्धभस्म देवदारु साही पृ.सं 56
9. 'महाप्रस्थान' नरेश मेहता पृ.सं 27
10. 'महाप्रस्थान' नरेश मेहता - पृ.सं 29
11. 'महाप्रस्थान' नरेश मेहता - पृ.सं - 28
12. 'महाप्रस्थान' नरेश मेहता - पृ.सं - 29
13. 'महाप्रस्थान' नरेश मेहता - पृ.सं - 29
14. 'मछलीघर' हिमालय की याद में एक पत्र साही पृ.सं. 54
15. 'हिम-विद्ध' जगदीश गुप्त पृ.सं 67
16. 'दूसरा सप्तव' अज्ञेय - नरेश मेहता - उषस् - पृ.सं - 119
17. 'मछली घर' अर्धभस्म देवदारु साही पृ.सं - 58
18. 'महाप्रस्थान' नरेश मेहता - पृ.सं - 27
19. 'महाप्रस्थान' नरेश मेहता पृ.सं 27
20. 'महाप्रस्थान' नरेश मेहता - पृ.सं - 28
21. 'महाप्रस्थान' नरेश मेहता - पृ.सं - 30
22. 'पहले मैं सन्नाटा बुनता हूँ' - नन्दादेवी - अज्ञेय - पृ.सं - 80

प्रयोगवाद एवं नई कविता में भी हिमालय के प्राकृतिक सौन्दर्य का उद्घाटन कहीं-कहीं मिल जाता है। कवि अज्ञेय ने *'दूर्वाचल'* नामक कविता में हिमालय के गिरि-प्रान्तर के सुन्दर तथा सुहावने वातावरण का चित्रण करते हुए यहाँ के चीड़ वन, नदी तथा नीड़ों में रहनेवाले विहग शिशु को आँख भर देखा। एक बार देखे इस प्रकृति सौन्दर्य से अतृप्त होकर कवि अपने मन को दिलासा देते हैं कि पुनः यहाँ आऊँगा चाहे बरस, दिन या अनगिन युग ही बीत जाए। कवि कहते हैं–

"पार्श्व गिरि का नम्र चीड़ों में
डगर चढ़ती उमंगों सी।
बिछी पैरों में नदी, ज्यों दर्द की रेखा।
विहग शिशु मौन नीड़ों में
मैं ने आँख भर देखा।
दिया मन को दिलासा पुनः आऊँगा
भले ही बरस दिन-अनगिन युगों के बाद।"[1]

इस प्रकार कवि हिमालय के प्राकृतिक सौन्दर्य से हठात् आकर्षित होकर पुनः आने की ठान लेते हैं। कवि जगदीश गुप्त की कविता *'आँख भर देखा कहाँ'* में कवि पंक्तिबद्ध देवदारु, श्यामल कस्तूरी की गन्ध, जलदों की छाया का हिम-श्रृंगों पर छाना आदि हिमालय के प्रकृति रमणीय दृश्य देखकर भी कवि तृप्त नहीं होते। कवि कहते हैं–

"आँख भर देखा कहाँ, आँख भर आयी।
अटकी ही रही दीठ
वह हिमगिरिमाल ढीठ,

चन्दन पर श्यामल कस्तूरी की गन्ध-सी
जलदों की छाया हिम-श्रृंगों पर छायी।
आँख भर देखा कहाँ, आँख भर आयी।"[2]

---

1. 'इन्द्रधनु रौंदे हुए ये' - दूर्वांचल - अज्ञेय पृ.सं 82
2. 'हिम-विद्ध' - आँख भर देखा कहाँ जगदीश गुप्त - पृ.सं 26

हिमालय के वन-संपदा पर प्रकाश डालनेवाले कवि उसके वन, नदी, पर्वत, तर्रार सैलानी हवा में झुमते जंगल, दुपट्टे की तरह उड़ते हुए निर्झर, अनेक घाटियों के पार से आता हुआ पपीहे का स्वर, ओलों भरा बादल, ज़रा से रास्ते केलिए सब कुछ तोड़नेवाली नदी की तेज़ लापरवाह धाराएं, जंगली पाटल, पत्थरों से फूटता पानी इने मन भावने दृश्यों का चित्रण कर आगे कहते हैं कि हिमालय में जहाँ कहीं भी देखें बरफ़ ही बरफ़ है।

"बरफ़ उजली, बरफ़ नीली
बरफ़ मिट्टी मिली बेताब हाथों में पिघलने को
बरफ बेदाग ढालों पर लहरियादार पानी-सी
बरफ वह अखिरी आज़ाद "[1]

हिमालय के प्राकृतिक वातावरण में आकर सब कहीं हिम ही हिम देखकर, उस सुहावने या शीतल वातावरण में आकर भी कवि का मन बेचैन है। गुप्त जी ने अपने मन के दर्द एवं पीड़ा की अभिव्यक्ति दी है। प्राकृतिक सौन्दर्य एवं शीतलता का कवि मन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। कवि कहते हैं –

"हिम जलद, हिम श्रृंग
हिम छवि,
हिम दिवस, हिम रात,
हिम पुलिन, हिम पन्थ;
हिम तरु,
हिम-क्षितिज, हिम-पात।
आँख ने
हिम रूप को

---

1. 'मछली घर' हिमालय की याद में एक पत्र - विजयदेवनारायण साही - पृ.सं - 54

जी भर सहा है।

सब कहीं हिम है

मगर मन में अभी तक

स्पन्दनों का

उष्ण - जलवाही विभामय स्रोत

अविरल बह रहा है।"[1]

अपने मन की विह्वलता को अभिव्यक्त करने केलिए हिमालय के प्राकृतिक वातावरण का आश्रय देते हैं। हिमालय के शिखरों के ऊपर बादल छाए हुए हैं कवि कहते हैं कि हिमालय के ये शिखर कई बादलों के थुल्म ओढ़ने के बाद भी ठिठुरते रहते हैं। लेकिन कवि एक हल्की धूप की चादर को अपने बदन पर डालकर देह से ही नहीं मन से भी पसीज जाता है। हिमालय ने कवि मन को गहरे ढंग से प्रभावित किया और उसमें अस्तित्वबोध जगाया कवि कहते हैं–

"प्रथम बार

मेरे हिम के

अस्तित्वों में स्पर्श हुआ,

मुझे लगा

मैं ने नहीं, हिम ने ही मुझे छुआ।"[2]

हिमालय के प्राकृतिक सौन्दर्य सूर्य किरणों के कारण अति उज्वल बन जाता है। कवि इसकी ओर संकेत करते हैं कि -*"दिन भर से थके सूरज के रश्मियों को हिम शिखरों ने रोक लिया जिसे देखकर ऐसा लगता है मानो गोरी उगालियों रूपी शिखरों पर मेहंदी रच*

---

1. 'हिम-विद्ध' - उष्ण स्रोत - जगदीश गुप्त - पृ.सं - 31
2. 'हिम-विद्ध' - हिम-स्पर्श - जगदीश गुप्त - पृ.सं - 33

गयी हो।"[1] यहाँ सूर्यास्त का सुन्दर चित्रण हुआ है। हिमालय के शुभ्र शिखरों को उगलियाँ तथा उनपर पड़नेवाले सूरज के अरुण पीत किरणों को मेहंदी बताया गया है।

हिमालय पर्वत घाटी के ऊपर छाए बादल का सुन्दर चित्रण *'घाटी का बादल'* कविता में हुआ है। गहन कुहा, मदमाती गन्धोंवाली चीड़ों, तथा सहमी चिड़िया से युक्त हिमालय के प्राकृतिक वातावरण से पहाड़ी गाने का स्वर सुनाई दे रहा है। दो शिखरों के बीच झरते सूरज का धुँधला प्रकाश, रूपाडोरी समान नीचे की ओर बहनेवाली नदियाँ, इनमें झाँककर देखनेवाले बाँज के वृक्ष, पिघले हुए सोने के पानी समान टपकनेवाले धूप, फूलों से भरा वन हिमालय के सौन्दर्य को दुगुना करते हैं। हिमालय के ऊपर छाए बादल के सम्बन्ध में कवि बताते हैं कि-

"बादल जैसे आया वैसे लौट गया है
केवल कुछ बादल के पीछे छूटे टुकड़े
छायादार झाड़ियों में विश्रम कर रहे
जैसे धौरी - उजली गायें।

एक अकेला चंचल बादल
चाँदी के हिरने-सा घाटी में चरता है।"[2]

हिमालय के ऊपर छाए शुभ्र बादल को धौरी उजली गायें तथा चाँदी के हिरन आदि से तुलना की है।

मानसरोवर में जल पीने केलिए आनेवाले हंसों के सम्बन्ध में कवि कहते हैं कि-

"याक सरीखे
धर्मवृषभ इस हिम प्रदेश में
यहीं-कहीं

---

1. 'हिम-विद्ध' - जगदीश गुप्त - पृ.सं - 58
2. 'हिमालय' - घाटी का बादल - धर्मवीर भारती - पृ.सं - 162

कहते है हंस - वाणियाँ सुन पड़ती है
यहीं कहीं
सूर्य - प्रियाएँ मानस जल पीने आती हैं।"[1]

हिमालय का प्राकृतिक सौन्दर्य इतना मनभावना है कि उन भोजपत्रों की आरण्यकता, चीड़ के वे सुरम्य वन, औषधियोंवाली वनस्पति सम्पन्न, वे माधवी वनानियाँ, स्वर्णजल की झील जैसे गेहुओं के वे सोपानी खेत, घास की अयालो में कंधी करते एकान्त हवाएँ, मुँह में अधकुचली घास दबाये आहट लेते चौकन्ने कस्तूरी-मृग, नाना वर्ण-गन्ध के फूलों वाली उपत्यकाएँ हिमालय के सौन्दर्य को दुगुना करता है।

हिमालय प्रकृति रमणीय है पर उसकी ऊर्ध्वता पर केवल भोजपत्र ही दिखाई देता है। वनस्पतियाँ आकुल हो वर्ण-गन्ध को लिए हिमालय की ओर दौड़ती है पर ऊचाईयों पर थक कर रुक जाती हैं। चीड़ और देवदारु का पुरुषार्थ हिम के पवित्र को मात्र स्पर्श कर सकता है। और अन्त में अकेले भोजपत्र ही रह जाता है।

हिमालय के प्राकृतिक सौन्दर्य से गहरे ढंग से प्रभावित होकर कवि अज्ञेय उसके प्रमुख पर्वत शिखर नन्दादेवी के नष्ट होते वनसंपदा या पर्यावरण की ओर आशंका प्रकट करते हैं। कवि कहते हैं –

"जहाँ तक दीठ जाती है
फैली है नंगी तलैटियाँ-
एक-एक कर सुख गये हैं
नाले नौले और सोते।"[2]

---

1. 'महाप्रस्थान' - नरेश मेहता - पृ.सं - 28
2. 'पहले मैं सन्नाटा बुनता हूँ कविताएं' - नन्दादेवी - अज्ञेय - पृ.सं - 64

हम अपनी अज्ञता, भूख मिटाने या कुछ लोभवश हिमालय के वनों को काटने या नष्ट करने का प्रयत्न करते हैं। वास्तव में हमारी सम्पदा को खोकर अपनी संस्कृति पर भारी ज़कम पहूँचाते हैं। आधुनिक कवि इन परिस्थितियों से यथावत् अवगत है। ये केवल हिमालय की प्रकृति रमणीयता पर नहीं नष्ट होते प्रकृति रमणीयता पर अपनी गहरी लगाव दिखाकर जनता को नष्ट होती वनसंपदा की ओर ध्यान आकृष्ट कराते है-

"नन्दा
बीस, तीस, पचास वर्षों में
तुम्हारी वन - राजियों की लुगदी बना कर
हम उस पर
अखबार छाप चुके होंगे;
तुम्हारे सन्नाटे को चींथ रहे होंगे
हमारे धुँधआते शक्तिमान ट्रक

नन्दा
जल्दी ही
बीस, तीस पचास बरसों में
हम तुम्हारे नीचे एक मरु बिछा चुके होंगे
और तुम्हारे उस नदी धौत सीढ़ीवाले मन्दिर में
जला करेगा
एक मरु दीप।"[1]

आधुनिक युग का मानव इतना बेचैन रहता है कि उसे प्रकृति के सम्बन्ध में सोचने या पर्यावरण की सुरक्षा पर विचार करने का समय नहीं है। वह अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति केलिए प्रकृति का हनन करता रहता है।हिमालय के वन भी इनकी आवस्यकताओं

---

1. 'पहले मैं सन्नाटा बुनता हूँ' कविताएं - नन्दादेवी - अज्ञेय - पृ.सं - 64

की पूर्ति के साधन बन गए हैं। कुछ सालों के बाद यहाँ की वन-राजियों की लुगदी बनाकर उस पर अखबार छाप चुके होंगे, इसके सन्नाटे को शक्तिमान ट्रक की धुँधआती आवाज़ कलुषित करेगी, यहाँ के झरने सुख चुके होंगे नदियों में बाद आएगी आँतों को उमेठनेवाली बीमारियाँ फैलेंगा तथा अतिस्वन विमानों के धूम-सूत्रों की गूँज आकाश में सुनाई देगी।

'बर्फ की झील' कविता में हिमालय के प्राकृतिक सौन्दर्य या प्रकृति के बदलते स्वरूप का चित्रण कर कवि ने सामाजिक व्यवस्था का इशारा किया है। चट चट शब्द के साथ हिमखंड तड़कर पास के छोटे तालाब में गिर गए जिससे उस धरती पर वसन्त का आगमन हुआ। सूर्य के किरणों के स्पर्श से शिखर स्वर्ण वर्ण बन गए। कवि कहते हैं कि नीचे के ये हिम शिखर जब सरोवर में स्वयं गलकर पिघल जाएंगे तभी में वसन्त के सामने अपना शीश झुका दूँगा।

"नीचे की हिम शिला पिघल कर जिस दिन
स्वयं मिलेगी सरसी जल में
नव वसन्त को उस दिन
उस दिन उस दिन
मेरा शीश झुकेगा।"[1]

इन पंक्तियों से यह भी ध्वनित होता है कि उच्चवर्ग तथा निम्न वर्ग दोनों के भेदभाव को मिटाना है तथा समाज में समता स्थापित करना है।

हिमालयीन प्रकृति का मानवीकरण यत्र-तत्र पाया जाता है। जगदीश गुप्त ने *'दृश्य-शिशु'* नामक कविता में हिम श्रृंगों को एक छोटे बच्चे के अध उगे दाँतों से तुलना की है।

---

1. 'इन्द्रधनु रौंदे हुए थें' - बरफ की झील - अज्ञेय पृ.सं - 89

"दूध के अधउगे दाँत-सी
कोर हिम-श्रृंग की
फूटी फिर
उस स्लेटी बादल की आट से
चलता हूँ
अरे ! तनिक ठहरो भी,
पहले मैं इस शिशु का
पूरा मुख तो निहार लूँ।"[1]

कवि कहते हैं कि हिमालय के सफ़ेद छोटे छोटे श्रृंग ऐसे लग रहे हैं मानो एक छोटे बच्चे के अधउगे दाँत हो। *'बादल भंवरे'* नामक कविता में हिमालय के शिखरों को कमल समझकर उसके ऊपर भ्रमर समान बादल के छा जाने का चित्रण हुआ है। बादलों का बार-बार टकराने का दृश्य देखकर कवि का मन मोर समान हर्षित हो जाता है। वे कहते हैं-

"खिले देख
शिखरों के इन्दीवर
परिचित कोमलता का भ्रम लेकर
बादल भँवरे आते,
हिम की चट्टानों से,
बार बार टकराकर
मन मोर उड़ जाते
नीली गहराई में
निर्मल आकाश की।"[2]

---

1. 'हिम-विद्ध' दृश्य-शिशु - जगदीश गुप्त - पृ.सं - 21
2. 'हिम-विद्ध' - बादल भँवरे - जगदीश गुप्त - पृ.सं - 48

हिमालय के वातावरण में पाए जानेवाले जीव-जन्तुओं के सम्बन्ध में कवि कहते हैं–

"*दिन भौंरे कर गए गुंजरित,*
रातों में झिल्ली ने
अनकथ मंगल गान सुनाए
साँझ सवेरे अनगिन
अनचिन्हे खग कुल की मोद-भरी क्रीड़ा काकलि।"[1]

हिमालय के प्राकृतिक वातावरण में भौरों, झिल्ली और खग-कुल का उल्लेख मिलता है। घनीरात में महुए की चुपचाप टपकना, चौके खग शावक की चिहूँकना शिलाओं को दुलारते वन झरने के द्रुत लहरीले जल का कल निनाद, पेड़ों का अररा कर टूट कर गिरना, हिम-तुषार के फाहों का धरती की घावों को चुपचाप सहलाना, वन पशुओं का गर्जन, धुर्धर चीख, भूँक, हुक्का चिचियाहट आदि नानाविध आतुर तप्त पुकारें घाटियों में भरती गिरती चट्टानों[2] की गूँज हिमालय के प्राकृतिक वातावरण को एक ओर मनमोहक बनाता है तो दूसरी ओर भयावह।

"*दूर पहाड़ों से काले मेघों की बाढ़*
हाथियों का मानो चिंघाड रहा हो यूथ।"[3]

हिमालय के पहाड़ों के ऊपर दिखाई देनेवाले मेघों को हाथियों के चिंघाडनेवाले यूथ माना गया है। मेघ का रंग हाथी के समान काला है साथ ही इसका गर्जन मानो हाथी का चिंघाड़ हो।

प्रयोगवादी नए कवि अज्ञेय ने '*असाध्य वीणा*' कविता में हिमालय के भौगोलिक एवं प्राकृतिक वातावरण की विशेषताओं पर खूब प्रकाश डाला है। भौगोलिक वातावरण एवं

---

1. 'आँगन के पार द्वार' असाध्यवीणा अज्ञेय - पृ.सं - 72
2. 'आँगन के पार द्वार' असाध्यवीणा - अज्ञेय - पृ.सं - 73
3. 'आँगन के पार द्वार' असाध्यवीणा - अज्ञेय - पृ.सं - 72

विशेषताओं का प्राकृतिक उपादानों पर अवश्य प्रभाव पड़ता है। भारत के दूसरे किसी प्रदेश से एकदम भिन्न है हिमालय का प्राकृतिक वातावरण। हिमालय का संपूर्ण क्षेत्र उत्तराखण्ड व हा गया है और यहाँ से लाया गया किरीटी तरु वक्ष की विशेषता को कवि ने काव्यात्मक ढंग से से प्रस्तुत किया है। यह वृक्ष अपनी विशालता, व्यापकता में हिम-शिखरों को स्पर्श करता है, बादल उसकी शाखाओं पर झूमते हैं, उसकी जडें पाताल तक प्रसारित है। उसकी शीतल मन्द सुगन्धि से अभिभूत होकर उसकी जड़ों का आश्रय लेकर शेष नाग भी विश्राम करता है।[1] हिम, वर्षा और आतप से पीड़ित वन्य जीव धारी उसकी विशाल शाखाओं के आश्रय में सुरक्षित रहते हैं। यह विशाल किरीटी तरु मन्त्रों से पवित्र तो था ही, आकाश, पृथ्वी और पाताल तक उसका विस्तार है। वह अपनी आकार में ही विराट् नहीं है अपितु वह आश्रयहीनों केलिए आश्रय दाता है। कवि कहते हैं-

"ओ पूरे झारखण्ड के अग्रज
तात, सखा, गुरू, आश्रय
त्राता महाच्छाय"[2]

अतः प्रयोगवाद और नई कविता में हिमालय के भौगोलिक एवं प्राकृतिक संदर्भ के अन्तर्गत पाटल, देवदारु, भोजपत्र, चीड़-फूल, औषधियों, याक, कस्तुरी-मृग, हंस से युक्त हिमालय की वन-संपदा का उल्लेख हुआ है। हिमालय के प्राकृतिक वातावरण को इतना मनभावना बताया है कि कवि अज्ञेय बार-बार यहाँ के वातावरण में लौट आना चाहता है। हिमालय के प्राकृतिक परिस्थितियों से यथावत् परिचित कवि इसके पर्यावरण पर आशंका

---

1. "उसके कानों में हिम शिखर रहस्य कहा करते थे अपने

उसकी गन्ध प्रवण शीतलता से फण टिका नाग वासकी शांत था।"

2. 'आँगन के पार द्वार' - असाध्यवीणा - अज्ञेय - पृ.सं - 74
3. 'आँगन के पार द्वार' - असाध्यवीणा - अज्ञेय - पृ.सं - 74

प्रकट करते हैं तथा नन्दादेवी के नष्ट होते वन-संपदा या वन कटौती पर भी प्रकाश डाला गया है। एक और हरियालियों एवं वनराजियों से भरे हिमालय के प्राकृतिक स्वरूप का चित्रण है तो दूसरी ओर *'हिम ही हिम'* या बरफ़ ही बरफ कहकर उस हिमाच्छादित वातावरण पर भी प्रकाश डाला गया है। हिमालय के शुभ्र-शिखरों को इन्दीवर (सफेद कमल) या छोटे बच्चे के अधउगे दाँतों से तुलना कर मानवीकरण भी हुआ है। प्रयोगवादी कवि हिमालय में बिताए गए क्षण, प्राकृतिक उपादानों से अपने मानासिक तनावों की तुलना तथा अपने वैयक्तिक अनुभवों को हिमालय के प्राकृतिक उपादोनों के ज़रिए व्यक्त करने में सक्षम रहे हैं।

प्रयोगवाद और नई कविता में हिमालय के धार्मिक संदर्भ

प्रयोगवाद और नई कविता में हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ के अन्तर्गत धार्मिक संदर्भ पर भी प्रकाश डाला गया है। देवताओं का वास स्थान होने के कारण प्राचीन काल से लेकर हिमालय की भूमि पवित्र बन गई है। इस पवित्रता का आभास हिमालय के कण-कण में पाया गया है। यहाँ के पर्वत, नदी, मिट्ठी, पत्थर, वक्ष आदि प्रकृति के एक-एक उपादान पुनीत बन गया है। अज्ञेय ने *'असाध्यवीणा'* कविता में किरीटी तरु वृक्ष की विशेषताओं पर प्रकाश डाला है। इसे उत्तराखण्ड (हिमालय) के गिरि प्रान्तर से लाया गया था जहाँ के घने वनों में ऋषिगण अपने व्रत का अनुष्ठान कर तपस्या करते हैं। इस अति प्राचीन किरीटी तरु से असाध्यवीणा को बनाया गया है। हिमालय के शिखर, नदी, वृक्ष सभी में दैवत्व का आभास आरोपित करनेवाले कवि कहते हैं कि-

"उसके कानों में हिम-शिखर रहस्य कहा करते थे अपने"[1] अर्थात् हिम-शिखरों में वास करनेवाले देवता इसके कानों में रहस्य कहते हैं। यहाँ के वन मंत्रों की ध्वनि से गूँजायमान रहता है।

---

1. 'आँगन के पार द्वार' असाध्यवीणा - अज्ञेय पृ.सं - 74

"केहरि उसके वल्कल से कन्धे खुजलाने आते थे"[1] अर्थात् इस वृक्ष के वल्कल से रगड़- रगड़ कर सिंह अपने कन्धे खुजलाने आते हैं।

हिमालय तथा उसके निकटवर्ती प्रदेशों में नाग पूजा की जाती है। कवि अज्ञेय ने हिमालय के अतल में नाग वासुकी का वास बताते हुए उसका धार्मिक स्वरूप स्पष्ट किया है। किरीटी तरु वृक्ष की स्वासियत यह है कि इसकी जड़ पाताल तक पहुँच जाती है यह वृक्ष सुगन्ध से युक्त है इसकी जड़ों में वह शीतलता है कि नाग वासुकी उसका फण टिकाकर सोता है। यह वृक्ष अपनी ऊँचाई और गहराई में अतुलनीय है। अनन्त ने अपने फणों से किस तरह इस भू प्रदेश को धारण किया था इसका संकेत कालिदास के कुमारसंभव के तृतीय तथा छठे सर्ग में मिलता है।[2] अज्ञेय *'असाध्यवीणा'* में हिमालय को नाग वासुकी का वास स्थान बताकर कहते हैं कि-

"और सुना है - जड़ उसकी जा पहुँची थी पाताल लोक
उसकी गन्ध प्रवण शीतलता से फण टिकाकर नाग वासुकी सोता था।"[3]

'तीर्थ तो है वही...' कविता में गंगा और मानसरोवर की तुलना करते हुए कवि साही हिमालय के मानसरोवर को ही प्रमुख तीर्थ मानते हैं। गंगा नदी तट पर खड़े कवि कहते हैं कि जिस तरह से जीर्ण वस्त्रों को त्याग देते हैं उसी प्रकार गंगा के मन्त्रोच्चारकों का आज वे त्याग देते हैं। कवि का मन निरुक्त शान्त है, न ही उसे भैरवनाद छू पाता, न बेताव लहरों का उछाल। कवि व हते हैं-

"अब तो सत्य चाहे मिले
ढालों पर विकम्पित
घने वन की फुनगियों से झाँकता सा

---

1. 'आँगन के पार द्वार' असाध्यवीणा - अज्ञेय - पृ.सं - 73
2. 'आँगन के पार द्वार' - असाध्यवीणा - अज्ञेय - पृ.सं - 73
3. 'आँगन के पार द्वार' असाध्यवीणा - अज्ञेय - पृ.सं - 74

चोटियों के मौन में

कुण्ड में चुपचाप बहते हुए जल की आरसी में

बादलों से भरे नभ को देखते खामोश पक्षी में

गुजरते हुए राही में

अकेले फूल में

पर ओ नदी अब तुम नहीं हो तीर्थ

तीर्थ तो है बर्फ का उजला सरोवर वही।"[1]

गंगा नदी तट पर खड़े कवि मानसरोवर की ओर लौटना चाहते हैं। बरफ का उजला सरोवर सहकर मानसरोवर का स्मरण करते हैं। हिमालय के ये दोनों तीर्थ गंगा और मानसरोवर धार्मिक दृष्टि से श्रेष्ठ है।

'महाप्रस्थान' में नरेश मेहता ने हिमालय को देवताओं का वास स्थान या महादेव का वास स्थान मानकर उसे स्वर्गद्वार माना है। हिमालय के धार्मिक महत्व पर प्रकाश डालनेवाले कवि ने हिमालय एवं शिव दोनों को अभिन्न नहीं बल्कि एक ही माना है। जैसे-

"हिम केवल हिम -

अपने शिव रूप में

हिम ही हिम अब।"[2]

हिम को शिव का पर्याय बनाते हुए कवि ने हिमालय के शिव रूप का वर्णन किया है।

"शिव की गौर-प्रलम्ब भुजाओं सी

पर्वतमालाएँ

नभ के नील पटल पर

पृथ्वी सूक्त लिख रहीं।"[3]

---

1. 'मछली घर' - तीर्थ तो है वही... - साही पृ.सं - 52
2. 'महाप्रस्थान' - नरेश मेहता - पृ.सं - 27
3. 'महाप्रस्थान' - नरेश मेहता - पृ.सं - 27

'हिम केवल हिम' कहकर सारे वातावरण को एक अपूर्व आभा प्रदान करनेवाले कवि समस्त हिम प्रकृति में सृष्टि का अनादि तत्व साकार देखने लगता है। हिमालय की अनन्त प्रकृति के माध्यम से शिव और अर्पणा पार्वती के वास को रूपायित किया गया है।

"केवल यहाँ अपर्णा पार्वती ही जाग्रत है
चन्द्रचूड़ इस हिम-शिवाङ्क में।"[1]

भगवान शंकर के जटाजूट से निःसृत होकर आनेवाली पवित्र गंगा नदी के सम्बन्ध में कवि कहते हैं कि-

"दवाधिदेव हिम-अभ्यंकर के जटाजूट से
जन्म ले रही गंगाएँ
हिमनद रूप में।"[2]

इतिहास से भी पुराना या पौराणिक, इतिहास को बनाने बिगाड़नेवाला भगवान शंकर यही विराजमान है। इस हिम-प्रकृति में सृष्टि का अनादि तत्व साकार हो उठता है।

देह भाव और तज्जन्य वृत्तियों में आबद्ध व्यक्ति का हिम *'एक पर्व'*, श्वेत फूलोंवाला एक स्वर्गोत्सव लगता है। वे अपने देह-बोध त्याग कर हिमालय का हिम गान सुन सकते हैं। कवि कहते हैं कि-

"हिम-
शिव की गोद में
पार्वती की देहवाली
सरस्वत वीणा है।
सुनोगे युधिष्ठिर इसका गान?"[3]

---

1. 'महाप्रस्थान' - नरेश मेहता - पृ.सं - 33
2. 'महाप्रस्थान' - नरेश मेहता - पृ.सं - 32
3. 'महाप्रस्थान' - नरेश मेहता - पृ.सं - 126

सारस्वत वीणा का गान सुनने केलिए देवताओं की जाज्वल्य पवित्रता को वरण करना पड़ता है। इसलिए युधिष्ठिर अपना मानवी देह बोध त्याग कर देवताओं के देह बोध अपनाता है-

"कभी देखी है युधिष्ठिर।
इससे अधिक
देवताओं की देहवर्ण सी
जाज्वल्य पवित्रता?
युधिष्ठिर वरण करो
युधिष्ठिर! वरण करो
अपनी आत्मा में
इस हिमालय को वरण करो!!"[1]

भीम पाण्डवता की वज्रदेह होकर भी देवताओं के देह बोध को न वरण करने के कारण स्वर्गारोहण तक पहुँचते-पहुँचते चुक गये। युधिष्ठिर ने '*पाण्डवता की देह*' को पीछे छोडकर नया देह-बोध वरण किया। युधिष्ठिर ने अपनी आत्मा में हिमालय का या देवताओं की मूर्त देह का वरण किया। हिम-अनुभवों से गुजरते हुए, हिमालय व्यक्तित्व गढ़ते हुए युधिष्ठिर की प्रज्ञा-करुणा को उत्तर-द्वार से स्वर्ग में प्रविष्ट होते चित्रित किया है। यहाँ सारी मनुष्य गन्ध समाप्त हो जाती है, एक नई गन्ध, देवताओं की देहगन्ध झरती आती है। हिमालय के दैवत्व स्वरूप के सम्बन्ध में कवि बताते हैं कि-

"बन्धु! देखो
हिमालय ने अपना उत्तर द्वार खोल दिया है
सुन रहे हो
देवताओं की पैरों की आहट,

---

1. 'महाप्रस्थान' - नरेश मेहता - पृ.सं - 127

यह गन्ध
किसी भी फूल की नहीं हो सकती
यह ही स्वाहा है
युधिष्ठिर !"[1]

व्यवस्था से ऊपर उठने की व्यक्ति की आकांक्षा लेकर युधिष्ठिर ने जो आंतरिव यात्रा शुरू की वह धर्मपथ की *'स्वाहा यात्रा'* में पूर्णता प्राप्त करती है।

अतः प्रयोगवाद और नई कविता में हिमालय सम्बन्धी कविताओं के अन्तर्गत हिमालय के पर्वत, वन, नदी, मिट्ठी, वृक्ष आदि एक-एक प्राकृतिक उपादानों में ईश्वरीय सत्ता का आभास पाया गया है। किरीटी तरु वृक्ष के कानों में हिम-शिखरों का रहस्य कहना वास्तव में हिमशिखरों में वास करनेवाले देवता का रहस्य कहना है। इस वृक्ष के जड़ को पाताल में नाग वासुकी तक पहुँचाकर नाग संस्कृति पर प्रकाश डाला है। हिमालय के शिव रूप का वर्णन करते हुए शिव की गौर प्रलम्भ भुजाओं से हिमालय की तुलना कर हिमालय की अनन्त प्रकृति के माध्यम से शिव एवं पार्वती के वास को रुपायित किया है। भगवान शंकर के जटाजूट से आनेवाली गंगा नदी के धार्मिक महत्व का उद्घाटन भी हुआ है। सांसारिक सम्बन्धों, उलझनों तथा देह बोध को त्यागने पर ही व्यक्ति हिमालय हो जाता है। हिमालय में मानव देह गंध नहीं देवताओं का देह गन्ध है कहकर उसे देवताओं का लोक होने का संकेत करते हैं।

प्रयोगवाद और नई कविता में हिमालय के आध्यात्मिक संदर्भ

प्रयोगवाद और नई कविता में हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ को उद्घाटित करने वे लिए हिमालय के आध्यात्मिक पक्ष पर भी विचार किया गया है। नरेश मेहता ने महाप्रस्थान के आरंभ में ही हिमालय की तपोमय भूमि का चित्र खिंचा है–

---

1. 'महाप्रस्थान' - नरेश मेहता - पृ.सं - 128

"रंग-गंध सब परित्याग कर
भोजपत्रवत हिमाच्छादिता
वनस्पति से हीन
धरित्री
स्वयं तपस्या।"[1]

ऋषि एवं तपस्वियों की तपोभूमि हिमालय से सदैव मंत्रों की गूँज सुनाई पड़ती है। हिमालय में बहनेवाली शीत हवा में भी इसकी गूँज ध्वनित है। कवि कहते हैं कि-

"कानों में बजती इन शीत हवाओं में
क्यों लगता
जैसे कोई किसी कन्दरा में बैठा
हिमालय-धर्म ग्रंथ का पाठ कर रहा।"[2]

पांडवों की हिमालय यात्रा में सब कुछ पीछे छूट जाता है बचता है एक कठोर तापसीय ठंडा सन्नाटा।

हिमालय की यह निर्विकार, सम्बन्ध हीन, पन्थहीम भूमि हिम भाषा में लिखित उपनिषद् समान लगता है। इस ऊर्ध्व यात्रा में किन्नर, गन्धर्व, यक्ष एवं देवलोक पीछे छूट जाता है।

'महाप्रस्थान' के स्वाहा पर्व के अन्तर्गत हिमपथ से गुजरते हुए पाण्डवता की शारीरिक शक्ति, क्षात्रतेज, सांसारिकता आदि का क्षय होने का चित्रण मिलता है। हिमालय के इस आध्यात्मिक वातावरण में पाण्डवों के गत वैभव का कोई तकाजा नहीं रहता। हिमपथ एकाकिपन को जन्म देता है उसमें मन के संबन्ध छिन्न जाते हैं। स्वयं अपनी देह-चेतना को भी वृक्ष-छाल सा उतार देना पडता है। मन अपनी सारी धूमायित चेतना निचली वृत्तियों को छोडकर तपस्तेज से धर्म को यज्ञ की तरह धारण करता है।

---

1. 'महाप्रस्थान' - नरेश मेहता - पृ.सं - 27
2. 'महाप्रस्थान' - नरेश मेहता - पृ.सं - 28

"जहाँ यह तन भी
वृक्षछाल सा उतार देना पडता है।
धूमवस्त्रों का परित्याग कर
ताम्रवर्णो अग्नि
जैसे आकाश में यज्ञ वहन करती है,
वैसे ही मन
सम्बन्धहीन, अबाध मात्रित हो
धर्मवहन करता है।"[1]

हिमालय पर चलते हुए भी कृष्णा (सांसारिकता का प्रतीक) का मन विगत की स्मृतियों में जकड़ा हुआ है। वह इतनी आसक्त है कि ऊर्ध्वकाश का कोई आमंत्रण उसे खींचता नहीं। कवि का कहना है-

"प्रभू के नील नेत्रों जैसा
यह सारंग आकाश
और योगियों के असंग मन जैसा
निर्वेद
प्रशान्त यह हिमालय-
ये तुम्हें कोई आमंत्रण नहीं देते कृष्णा?"[2]

युधिष्ठिर द्रौपदी से कहते हैं कि *"हम आधुनिकत की मरण धर्म वृत्तियों के 'मृत-संसार' को अब भी मकड़ी की तरह चारों ओर बुनते चले आ रहे हैं, इसलिए अंतर की देवभूमि जाग्रत नहीं होती और हम निर्भय नहीं हो पाते। हिमपथ हमें 'हिमालय' पर ले चलता है।"* जैसे-

---

1. 'महाप्रस्थान' - नरेश मेहता - पृ.सं - 65
2. 'महाप्रस्थान' - नरेश मेहता - पृ.सं - 68

"सारे वर्ण-गंध
जब मन पर से उतर जाते हैं
तब अन्तर के
देवतात्मा हिमालय की
श्वेत देवभूमि जाग्रत होती है कृष्णा।
निर्भय होना ही हिमालय होना है
और
अनासक्ति ही स्वर्ग है,
हिमालय ही आत्मा है।"[1]

युधिष्ठिर प्रिया कृष्णा के भीतर इसी *'श्वेत देवभूमि'* की निर्भय आत्म-चेतना जगाना चाहते हैं इसलिए उसे बार-बार प्रेरित करते हैं।

हिमालय के प्रमुख तीर्थ गंगा और मानसरोवर की तुलना करते हुए कवि साही मानसरोवर की ओर लौट जाना चाहते हैं। गंगा नदी तट पर खड़े कवि कहते हैं कि जिस तरह से हम जीर्ण वस्त्रों को त्याग देते हैं उसी प्रकार गंगा के मन्त्रोच्चारकों को भी वे त्याग देना चाहते हैं। आज कवि के मन को नहीं भैरवनाद छू पाता न ही लहरों का उछाल। कवि कहते हैं–

"अब तो सत्य चाहे मिले
ढालों पर विकम्पित
घने वन की फुनगियों से झाँकता सा
चोटियों के मौन में
कुण्ड में चुपचाप बहते हुए जल की आरसी में
बादलों से भरे नभ को देखते खामोश पक्षी में
गुजरते हुए राही में
अकेले फूल में
पर ओ नेदी अब तुम नहीं हो तीर्थ
तीर्थ तो है बर्फ का उजला सरोवर वही।"[2]

---

1. 'महाप्रस्थान' - नरेश मेहता - पृ.सं - 72
2. 'मछली घर' - तीर्थ तो है वही - साही - प.सं - 52-53

इस प्रकार बर्फ का उजला सरोवर कहकर मानसरोवर का पुनः स्मरण करते हैं। मानसरोवर के पवित्र तीर्थ के प्रति अपने मन के लगाव को इस कविता द्वारा प्रकट करता है कवि।

हिमालय के वातावरण में आकर यहाँ के शिखर, जलद, देवदारु, जैसे प्राकृतिक उपादानों को देखकर कवि जगदीश गुप्त आश्चर्यचकित होते हैं। कवि ने विधि द्वारा बनाए गए सब रूपों एवं आकारों को फिर से रचा या पुनः स्मरण किया। तूली की नोंक की तरह तीखी दृष्टि से कवि ने इन सुन्दर दृश्यों को मन में उतार दिया। हिमालय के एक-एक प्राकृतिक उपादान में ईश्वरीय सत्ता का आभास पानेवाले कवि कहते हैं कि-

"यह शिखर-जलद, देवदारु से पूरित दिशाकाश
जो भी है, सब कुछ तुम्हारी ही सृष्टि है।
पृथ्वी-आकाश लो, अनिल जल लो, तेज लो
जैसे सहेज मिले इसको सहेज लो।"[1]

हिमालय के प्रमुख पर्वत नन्दादेवी पर होनेवाले वन-कटौती तथा यहाँ के पर्यावरण पर होनेवाले अत्याचार की निन्दा करके अज्ञेय उसकी वर्तमान स्थिति पर प्रकाश डालते हैं। इसकेलिए हिमालय के औनित्य के दृढ़ आधार लेते हैं। यूथ (झुंड) से निकले हुए गजराज घनी वनराजियों का आश्रय छोड़कर पर्वत-शिखरों की ओर दौड़ता है। शिखर की ओर दौड़ने से कोई प्रयोजन नहीं होगा; वह मृत्यु की पुकार है। कवि कहते हैं कि-

"शिखर पर क्या है, गजराज?
मृत्यु
क्या मृत्यु ही है शिखर पर?
मृत्यु शिखर पर ही क्यों है?"[2]

---

1. 'हिम-विद्ध' - जगदीश गुप्त - पृ.सं - 38
2. 'पहले मैं सन्नाटा बुनता हूँ' - नन्दादेवी - अज्ञेय - पृ.सं - 74

नन्दादेवी के शिखरों की भयानक या भयंकर अवस्था पर प्रकाश डालते हैं। लेकिन इसी हिम-भूमि को प्राचीन काल से ही स्वर्ग का मार्ग माना जाता था। हिमालय की भूमि पर ऊर्ध्वगामी यात्रा करनेवाले पांडवों का कवि स्मरण करते हैं। मृत्युलोक में जाकर यम से ब्रह्मविद्या का ग्रहण कर अपने को सार्थक बनानेवाले नचिकेतस का स्मरण भी कवि करते हैं। हिमालय की इस आध्यात्मिक भूमि का सजीव चित्रण वे इस प्रकार करते हैं–

"शिखर से आगे क्या है?
त्वादृड़ ना भूयान्नचिकेत-प्रष्टा
शिखर से आगे क्या है?
क्या.....क्या.....? है, है.....
सा काष्ठ सा परा गति।"[1]

अतः प्रयोगवाद और नई कविता में हिमालय के आध्यात्मिक संदर्भ के अन्तर्गत तपस्वियों एवं ऋषियों की तपोभूमि हिमालय से मन्त्रों की गूँज, कठोर ठंढी तापस प्रशान्तता, उपनिषद सी हिम भाषा आदि का संकेत पाया गया है। महाप्रस्थान में सब कुछ त्याग कर केवल सन्यासी ·ोजपत्रवृत हिमाच्छादित चोटियों से होकर पांडवों की आध्यात्मिक यात्रा कराई गयी है।

प्रयोगवाद और नई कविता में हिमालय के नैतिक संदर्भ

प्रयोगवाद और नई कविता में हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ को उद्‌घाटित करने केलिए हिमालय के नैतिक आयाम पर भी प्रकाश डाला गया है। दूसरा सप्तक के कवि नरेश मेहता ने युधिष्ठिर को राजपाट, कुल, वंश, परंपरा और भाई-बन्धुओं के प्रति अनासक्त बताया है। उनका चरित्र हिमालयोन्मुखी है। इस प्रकार हिमालय और युधिष्ठिर के चरित्रों की तुलना की गई है। जिस प्रकार युधिष्ठिर का मन स्वच्छ, पवित्र और अनासक्त है

1. 'पहले मैं सन्नाटा बुनता हूँ' - नन्दादेवी - अज्ञय - पृ.स 74

हिमालय भी उसी प्रकार का है। युधिष्ठिर ने भौतिक संपन्नताओं की अपेक्षा आध्यात्मिक मूल्यों को अधिक महत्व दिया है। महाप्रस्थान का स्वाहा पर्व युधिष्ठिर के उस व्यक्तित्व को रूपायित करता है जिसमें वे व्यक्ति से प्रकृति और भौतिकता से प्रज्ञा भाव की ओर पदार्पण करते हैं।

"मैं यहाँ
व्यक्ति से प्रकृति बनने ही आया हूँ पार्थ।"[1]

जब मानव व्यष्टि से समष्टि और फिर ऊर्ध्वयात्रा में समष्टि से प्रकृति बन जाता है। तब वह हिमालय हो जाता है। हिमालय होना शिवत्व को प्राप्त करना है, क्योंकि काल या दोष का मूर्त या अमूर्त स्पर्श करने का तात्पर्य यह है कि शिव से पृथक कुछ भी नहीं। हिमालय को सभी सद्गुणों का भण्डार माना गया है हिमालय में सत्य, पवित्रता, सम्बन्धहीनता, तपशीलता, शान्ति, अनासक्ति तथा शिवता या दैवित्व का आभास पाया गया है। नरेश मेहता ने अपने खण्ड-काव्य में हिमालय में उपर्युक्त गुणों को दिखाकर हमारी संस्कृति को उजागर किया है। जगदीश गुप्त ने *'हिम नहीं यह'* कविता में हिमालय को दृढ़, पावन और स्नेहशील बताया है। कवि ने हिमालय को बर्फ का या हिम का पहाड़ न कहकर *'मनस्वी पत्थर'* कहा है जो उसके दृढ़ चित्त का संकेत करता है। हिमालय का सौन्दर्य निष्कलुषित है। हिमालय की घाटी सदैव शान्त रहती है। इसमें से पिघल कर बहनेवाला हिम अविराम पावनता का प्रतीक है। हिमालय की ऊँचाई से बहकर आनेवाली सरिता को देखकर ऐसा लगता है कि यह भूमि एवं आकाश को स्नेह के पाश से बाँधते हो। कवि कहते हैं-

"हिम नहीं यह
इन मनस्वी पत्थरों पर
निष्कलुष हो
जम गया सौन्दर्य।

---

1. 'महाप्रस्थान' - स्वाहा पर्व नरेश मेहता पृ.सं - 112

यह हिमानी भी नहीं-
शान्त घाटी में
पिघल कर बह रही
अविराम पावनता।
और यह सरिता कि जैसे
स्नेह का उद्दाम कोमल पाश
अनगिनत प्रतिबिम्ब रच कर
बाँधती हो भूमि से आकाश।"[1]

'*महाप्रस्थान*' में युधिष्ठिर के चरित्र को हिमालयोन्मुखी बताया गया है। हिम यात्रा कर अन्त में स्वर्गद्वार तक पहूँचने पर युधिष्ठिर के साथ सृष्टि का प्रतीक श्वान ही बच पाता है। पर युधिष्ठिर स्वर्ग में उसके सहयात्री श्वान का भी प्रवेश चाहते हैं। अतः युधिष्ठिर अन्त तक करुणा विवेक का प्रतिनिधित्व करने वाले मनुष्य बने रहते हैं। कवि कहते हैं-

"स्वर्ग का द्वार आ गया।
उत्तर दिशा की सांकल खटखटाओ
देवतागण दिशाओं की साँकलों की आवाज ही
सुनते हैं।
बन्धु! डरो नहीं
आओ
तुम्हीं इस अन्तिम क्षण के सहयात्री हो।
तुम्हीं सृष्टि के बन्धु!
तुम्हीं ने
युद्ध - वैभव से क्षति-विक्षत
युधिष्ठिर का
अगाध करुणा से साक्षात् करवाया।"[2]

---

1. 'हिम-विद्ध' - हिम नहीं यह - जगदीश गुप्त - पृ.सं. 32
2. 'महाप्रस्थान' - स्वाहा पर्व - नरेश मेहता - पृ.सं - 127

हिम-अनुभव से गुज़रते हुए, हिमालय व्यक्तित्व गढ़ते हुए युधिष्ठिर के चरित्र की महानता को दिखाने का प्रयास इसमें हुआ है।

संक्षेप में प्रयोगवाद और नयी कविता हिमालय के नैतिक संदर्भ के अन्तर्गत हिमालय जैसे श्रेष्ठ पर्वत के साथ युधिष्ठिर के चरित्र की तुलना कर दोनों में सत्य, पवित्रता, सम्बन्धहीनता, तपशीलता, अशान्ति, तथा अनासक्ति आदि सद्‌गुणों को पाने का संकेत हुआ है। हिमालय के समान ही यहाँ से बहकर आनेवाली नदियों को स्नेह स्वरूपा बताया गया है।

प्रयोगवाद और नई कविता में हिमालय के राष्ट्रीय संदर्भ

प्रयोगवाद और नई कविता में हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ को उद्‌घाटित करने केलिए हिमालय के राष्ट्रीय संदर्भ पर भी विचार किया गया है। प्रत्येक देश के पर्वत, नदी, वन, मिट्‌ठी आदि उस राष्ट्र की उन्नति में अपना अनन्य सहयोग देता है। मातृभूमि के एक-एक प्राकृतिक उपादान इस दृष्टि से पूजनीय है। नए कवि जगदीश गुप्त हिमालय के एक-एक कण की स्तुति इस प्रकार करते हैं–

"नमन मेरा हिम-जलद-अभिषिक्त श्रृंगों को।
नमन मेरा शान्त सन्ध्यातीत रंगों को।
इन्द्रधनु के गुच्छ जिन पर तेरते रहते,
नमन मेरा अलकनन्दा की तरंगों को।"[1]

इस प्रकार हिमालय के राष्ट्रीय संदर्भ में सबसे पहले नमन एवं वन्दना का स्वर सुनाई देता है।

कवि जगदीश गुप्त हिमालय के सीमाहीन तथा महास्वरूप को उजागर करते हुए

कहते हैं कि –

"नीचे से ऊँचे को देखा
हम नमित हुए;

1. 'हिम-विद्ध' - नमन की चार पंक्तियाँ - जगदीश गुप्त पृ.सं - 23

सुषमा के भार से -
झुक गया हमारा उन्नत दर्शन।
हुए उद्ग्रीव,
किन्तु पतली निर्झरिणी भी
नाप नहीं पाए एक दृष्टि में;
अभ्रकंश हिम क्षिप्त शिखरों के रूप को
बाँधे भी तो कैसे-
टूक-टूक शब्दों की डोर में।"[1]

हिमवान का स्तवन करते हुए कवि उसकी ऊँचाई को देखकर नतमस्तक होते हैं। हिमालय की विशालता, विराटता तथा सौन्दर्य को नापने में कवि के शब्द पर्याप्त नहीं रहे। हिमालय की एक पतली निर्झरिणी को भी एक दृष्टि में कवि नाप नहीं पाते।

भारत के राष्ट्रीय महत्व को उजागर करने केलिए दूसरा सत्तक के कवि रामशेरबहादूर सिंह चीन के भारत आक्रमण की निन्दा करते हैं। चीन ने भारत से मित्र बनने का नाटक रचकर उसे धोके में डाल दिया। कवि पूछते हैं कि-

"कोई हिमालय पर कालिख पोत सकता है?
क्या बुद्ध का नाम हिमालय के पार भी लोग लेते हैं?
हिमालय कोई चीन की दीवार तो नहीं जिसे लाँघ जाओ।"[2]

माओ की निन्दा करते हुए कवि कहते हैं कि, माओ ने सब कुछ सीखा एक बात नहीं सीखी कि झूठ के पाँव नहीं होते, सत्य की ज़बान बन्द होने पर भी गरजती है, सत्य की कसी हुई मुट्ठियाँ जब खुलती है तो आँधियाँ आती है इस युद्ध के संदर्भ में हिमालय जैसे अटल, अविचल पर्वत को सम्मुख रखते हुए कवि कहते हैं--

---

1. 'हिम-विद्ध' - जगदीश गुप्त - पृ.सं - 36
2. 'चुका भी हूँ नहीं मैं' सत्यमेवजयते रामशेर बहादूर सिंह - पृ.सं - 39

"अब हम ज़रा तेज़ी से बढ़ रहे हैं
जैसे पहाड़ों की नदियों की रौ हो
जैसे एक संग गोलियों की बाढ़ हो
क्योंकि हम सब जहाँ भी है
अब मोर्चे पर हैं
एक ही धुन है एक ही ध्यान है
एक ही ज्ञान
कि हम उत्तुंग हिमालय हैं
और हम उत्तर को बढ़ रहे हैं
यह धरती करवट ले रही हैं।"[1]

भारत के राष्ट्रीय महत्व पर विचार करते हुए कवि कहते हैं कि शिव-लोक या हिमालय में चीनी दीवार न उठाओ वहाँ सब कुछ गल जाता है केवल सच्चाई की उज्वलता ही बनी रहती है। यहाँ सत्य ही सदियों से बना रहता है। असत्य की हार होती है। भारतीय संस्कृति ने सत्य की महता को प्रधानता दी है हमारी शक्ति आकार में नहीं बल्कि सत्य में है।

भारत के ज्योर्तिमय तुषार किरीट हिमालय पर आनेवाले शत्रु को मकोड़े से तुलना की जो भारत को निराक्रमणकारी मानकर उस पर रेंगते आए हैं। अपने सर को दायें बायें झटक देने से ये धरती पर गिरकर मर जाएंगे।[2]

पौराणिक या अतीतकालीन घटना को ताज़ा करते हुए कवि जगदीश गुप्त वर्तमान राष्ट्रीय रूप पर प्रकाश डालते हैं। महाभारत युद्ध के पश्चात् चिन्ताकुल मन को शान्त करने केलिए युधिष्ठिर हिमालय की ओर गए थे। हिमालय शान्त पावन भूमि थी जिसे *'मोक्ष द्वार'* या *'स्वर्ग द्वार'* माना जाता था वही भूमि पर आज युद्ध हो रहा है। आज के युग

---

1. 'चुका भी हूँ नहीं मैं' - सत्यमेवजयते - शमशेरबहादूर सिंह - पृ.सं - 41
2. 'हिम विद्ध' - जगदीश गुप्त - पृ.सं - 94

के चिन्तित धर्मराज शान्ति लाभ हेतु कहाँ जाऐंगे। इस बात को लेकर आशंका प्रकट करते हुए कवि कहते हैं कि-

"गये महाभारत के बाद
शान्ति पाने को
जहाँ-
गहन चिन्ताकुल धर्मराज
आज वहीं
उसी शुभ्र, हिम-पावन,
जलदोन्नत भूमि पर
नये महाभारत का सूत्रपात!
अब इससे ऊँची
इससे पावन
कौन भूमि होगी जहाँ
युद्ध जयी होने के बाद
पुनः पाने को शान्ति - लाभ
जायेंगे
आगत युग के चिन्तित धर्मराज?"[1]

शमशेर बहादूर सिंह की कविता *'सत्यमेव जयते'* में कवि ने हिमालय का भौगोलिक वातावरण तथा राष्ट्रीय महत्व को प्रतिपादित करते हुए हिमालय की युद्ध भूमि की ओर जनता का ध्यान आकृष्ट कराया है। चीन ने भारत का दोस्त बनने का ढोंग करते हुए उसे धोखे में डाला है। हिमालय पर आक्रमण कर चीन ने अपना असली रूप दिखाया है। चीन के इस दुर्व्यवहार का व्यंग्य करते हुए कवि लिखते हैं कि–

'हिमालय कोई चीन की दीवार तो नहीं
जिसे लाँघ जाओ!"[2]

---

1. 'हिम विद्ध' - जगदीश गुप्त - पृ.सं - 94
2. 'चुका भी हूँ नहीं मैं' - सत्यमेवजयते - शमशेरबहादूर सिंह - पृ.सं - 39

कवि चीन की निन्दा करते हुए कहते हैं कि माओ ने सब कुछ सीखा एक बाद नहीं सीखी की झुठ के पाँव नहीं होते, सत्य का ज़बान बन्द होने पर भी गरजता है सत्य व ी कसी मुट्ठियाँ खुलती है तो आधियाँ आती हैं। यह धरती सत्य पर चल रही है दुराभिमानियों को यहाँ स्थान नहीं है। भारतीय अब इस धोखेबाज़ी से अवगत हो गए हैं1 यहाँ के वीर सैनिकों की आवाज़ में पहाड़ों की नदियों की रौ है तथा गोलियों का बाढ़ है। भारतीयों के मन में देश रक्षा का भार अटल हो गया है कि कवि स्पष्ट करते हैं–

"क्योंकि हम सब जहाँ भी हैं
अब मोर्चे पर हैं
एक ही धुन है एक ही ध्यान है
एक ही ज्ञान
कि हम उत्तुंग हिमालय हैं
और हम उत्तर को बढ़ रहे हैं
यह धरती करवट ले रही है।"[1]

चीन के प्रमुख नेता माओ से कहते हैं कि शिव-लोक या हिमालय में चीनी दीवार न उठाओ वहाँ सब कुछ गल जाता है केवल सच्चाई की उज्वलता ही बनी रहती है। यहाँ सत्य ही सदियों से बना रहता है। असत्य की हार होती है। भारतीय संस्कृति ने सत्य की महत्ता को प्रधानता दी है। हमारी शक्ति आकार में नहीं बल्कि सत्य में है।

गिरिजाकुमार माथुर का *'बरफ़ का चिराग'* नामक कविता राष्ट्रीय दृष्टि से महत्वपूर्ण है। काश्मीर पर चीन के आक्रमण को लेकर लिखी गयी प्रस्तुत कविता में काश्मीर को धरती का कमल माना गया है। यहाँ के झील, खेत, केसर की झाँई, चीनार के पेड़ से युक्त काश्मीर वास्तव में धरती का स्वर्ग है। इस सुन्दर काश्मीर से आज आग या भयंकर

---

1. 'चुका भी हूँ नहीं मैं' - सत्यमेवजयते - शमशेरबहादुर सिंह - पृ.सं - 42

ज्वाला उठ रही है। इस सुन्दर देश पर चीन जैसा दुघर्ष नाग घुस आया है हिमालय जो भगवान शंकर का वास स्थान रहा है उसके तन पर लगा आघात वास्तव में भगवान शंकर के मन को लगा है। इस विष को भी भस्मीभूत कर शान्त करने की शक्ति भगवान शंकर को है। जैसे

"आघात हुआ यह
अचल हिमालय के तन पर
जन उन्नायक प्रलयंकर
शंकर के मन पर।"[1]

हिमालय की भूमि पर घटित अतीत घटनाओं का स्मरण करते हैं कवि। भगवान शिव ने कालकूट विष का पान करते हुए इस संसार का नाश होने से बचाया था वह आज भी भव कल्याण केलिए तैयार है। प्रलय पश्चात् बचे आदि पुरुष मनु ने हिमालय को ही शरण स्थान बनाया था आज हिमालय पर होनेवाले अत्याचार को देखकर उसकी आत्मा भी सिंहनाद कर उठती है-

"गिरि में निमग्न मनु की आत्मा
जब उठ आई कर सिंहनाद।"[2]

हिमालय का सफेद आँचल अब युद्ध भूमि बन गयी है- अर्थात् लाल हो गई है।

संक्षेप में प्रयोगवाद और नई कविता में हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ को उद्घाटित करने केलिए उसके राष्ट्रीय पक्ष पर भी प्रकाश डाला गया है। हिमालय के प्राकृतिक उपादानों को पूजनीय माननेवाले कवि उसकी विशालता, विराटता तथा वैभव के सम्मुख नतमस्तक हो जाता है। चीन आक्रमण की भर्सक निन्दा भी गयी है। हिमालय रूपी इस शिव-लोक पर सच्चाई के सिवा सब कुछ गल जाएगा। काश्मीर की सीमा पर धुस आनेवाले

---

1. 'धूप के धान' - बरफ़ का चिराग - गिरिजाकुमार माथुर पृ.सं - 64
2. 'धूप के धान' - बरफ़ का चिराग - गिरिजाकुमार माथुर पृ.सं - 66

चीन को दुघर्ष नाग मानकर हिमालय की युद्ध-भूमि का चित्र खींचा गया है। पौराणिक तथा ऐतिहासिक पात्रों का दृढ़ संबल लेकर हिमालय से मनु का सिंहनाद तथा भगवान शंकर का प्रलयंकारी रूप दिखाकर इस कठोर वातावरण को अनावृत किया है।

प्रयोगवाद और नई कविता में हिमालय सम्बन्धी कविताओं का सृजन एवं उद्देश्य

प्रस्तुत अध्याय में सप्तकों के कवियों की तथा नए कवि जगदीश गुप्त की हिमालय सम्बन्धी कविताओं के सांस्कृतिक संदर्भ का विस्तृत अध्ययन हुआ है। हिमालय के वातावरण में आकर वहाँ के भौगोलिक एवं प्राकृतिक परिवेश का प्रत्यक्ष दर्शन करने का अवसर मिलने के कारण अज्ञेय, विदयदेवनारायण साही तथा जगदीश गुप्त आदि कवियों की कविताओं में हिमालय में बिताए गए प्रत्येक क्षण का स्मरण, अपने मन को हठात् आकर्षित करने के कारण यहाँ पुनः आने का आग्रह तथा अपने वैयक्तिक अनुभवों, अनुभूतियों तथा मानसिक तनावों को हिमालय के ज़रिए अभिव्यक्त करने की प्रवृत्ति देखी जा सकती है।

अज्ञेय की *'असाध्यवीणा'*, *'दूर्वांचल'*, *'नन्दादेवी'*, *'बरफ की झील'* आदि कविताएं हिमालय की नैसर्गिक सुषमा से भरपूर है। हर एक कविता में हिमालय के प्राकृतिक चित्रण में वैविद्यता है। *'असाध्यवीणा'* में हिमालय में ही दिखाई देनेवाले किरीटी तरु की खासियत उत्तराखण्ड का भौगोलिक परिवेश वहाँ की वन संपदा का प्रतिपादन किया है। हिमालय में उगनेवाले किरीटी तरु ने जिस तरह इस वातावरण से समझौता किया था उसी प्रकार इससे बनाए गए असाध्यवीणा को बजानेवाले साधक को भी हिमालय के परिवेश से पूर्णतः तादात्म्य होना है। यह क्षेत्र धार्मिक दृष्टि से श्रेष्ठ है। इसका संकेत भी हुआ है जैसे किरीटी तरु के कानों में हिम-शिखरों का रहस्य कहना तथा किरीटी वृक्ष के जड़ को पाताल लोक या नाग वासुकी के पास पहूँचना कहकर कवि ने हिम - शिखरों को भगवान शिव माना है जो

इस किरीटी तरु के व ानों में रहस्य कहता है या हिमालय के पवित्र वातावरण में तपस्या करनेवाले ऋषियों की मन्त्र-ध्वनि को हिम-शिखरों से टकराकर प्रति ध्वनित होने से रहस्य समान लगता है। इस प्रकार हिमालय के आध्यात्मिक महत्व पर प्रकाश डाला गया है। इस कविता में अज्ञेय ने हिमालय में दिखाई देनेवाले किरीटी तरु, हिमालय का पवित्र वातावरण तथा हिमालय के प्राकृतिक सौन्दर्य का चित्र खींचा है।

'दूर्वाचल' कविता में हिमालय के नैसर्गिक सुषमा से प्रभावित होकर कवि पुनः उस वातावरण में लौट आना चाहता है। अपने मन को गहरे रूप से प्रभावित करनेवाले हिमालय को बार-बार देखना चाहता है कवि। *'नन्दादेवी'* हिमालय का प्रमुख पर्वत शिखर है जो अपनी हरितिमा तथा प्राकृतिक वैभवों से संपन्न थी। लेकिन आज इसकी वन-संपदा का हनन हो रहा है। हिमालय के पर्यावरण के प्रति जनता का ध्यान आकर्षित करना चाहता है कवि। हरियालियों पर बिखरे रेवड़, गड़रिया की बाँसुरी की तान तथा नदी के मोड़ में लहराते शिशु धान के जगह आज यहाँ नंगी तलैटियाँ, सुखे नाले-नौले, ही दिखाई दे रहे हैं। भूख, अज्ञान तथा लोभ वश लोग इसकी सम्पदा को नष्ट करते हैं। हिमालय के वैभव, संपन्नता की केवल यहाँ के लोकगीत संजोकर रखेंगे। यहाँ के पर्यावरण की भयानक स्थिति पर भी प्रकाश डाला गया है - यहाँ की वनराजियों का लुगदी बनाना, उन पर अखबार छापना, सन्नाटे को चिंथनेवाले शक्तिमान ट्रक, सूखे हुए झरने एवं सोते आदि इसे मरुभूमि बनाएंगे। नन्दादेवी के शिखरों के आध्यात्मिक महत्व पर प्रकाश डालकर नचिकेतस तथा पांडवों केलिए स्वर्गद्वार बने हिमालय के शिखर की ओर जाना आज मृत्यु का वरण करना कहा है। प्रस्तुत कविता में हिमालय की वर्तमान स्थितियों का सुन्दर चित्रण कर भविष्य में होनेवाले भयानक परिवर्तनों के सम्बन्ध में आशंका प्रकट की है। *'बरफ की झील'* कविता में कवि ने चट-चट-चट कर सहसा तड़कनेवाले हिम खंड, सूर्य किरणों के छूने से श्वेत हिम शिखरों का स्वर्णमय होना तथा हिमशिला का पिघलकर नीचे तालाब में गिरना परिवर्तन या

बदलाव को द्योतित करता है। प्राचीन रुढ़ियों को तोड़कर नए आदर्शों को स्थापित करना चाहते हैं कवि। हिमालय के प्राकृतिक उपादानों में परिवर्तन लाना वास्तव में समाज में परिवर्तन लाना है।

नेमिचन्द्र जैन ने *'सुनो, चीड़ के पेड़'* कविता में अपनी मन की व्यथा को चीड़ वृक्ष से सुनने का अनुरोध किया है। हिमालय में अतल की गहराईयों को झाँक कर गर्व से सिर तानकर खड़े होनेवाले चीड़ वृक्षों को तथा बादलो के हृदय को चीर खुलनेवाले बरफ से घिरे अडिग माना है। कवि में भी बहुत कुछ पाने की महत्वाकांक्षा थी, आग्रह था। ये सब अब टूट गया है या झुलस गया है। वह केवल जलता हुआ मरुस्थल बन गया है। आज का मानव बहुत कुछ हाज़िल करना चाहता है।

गिरिजाकुमार माथुर की *'बरफ़ का चिराग'* कविता राष्ट्रीय दृष्टि से महत्वपूर्ण है। काश्मीर की युद्ध भूमि की ओर जनता का ध्यान आकृष्ट कराया है। शमशेर बहादुर सिंह की सत्यमेवजयते कविता में हिमालय पर आक्रमण करनेवाले चीन की निन्दा की गई है। हिमालय को शिव-लोक माना है जहाँ सच के सिवा सब कुछ गल जाता है। हिमालय पर युद्ध केलिए जानेवाले सैनिकों की प्रशंसा करते हुए कवि कहते हैं कि *"अब हममें एक ही धुन एक ही ध्यान एक ही ज्ञान है कि हम उत्तुंग हिमालय हैं"* । इस कविता में राष्ट्र-रक्षा पर बल दिया गया है।

नरेश मेहता ने उषस् कविता में सूर्य किरणों के आगमन से हिमालय के प्राकृतिक वातावरण में होनेवाले बदलाव को चित्रित किया है हिमालय के रमणीय स्थानों का संकेत भी हुआ है। अश्व की वल्गा थामे उषा का हंसों से भरे मानसरोवर ग्राम, खेत, यमुना तट, क्षिप्रा आदि को देखते हुए आने का चित्रण है। *'महाप्रस्थान'* में नरेश मेहता ने हिमालय की ऊर्ध्वगामी चोटियों की ओर पांडवों की यात्रा कराई है। महाप्रस्थान में तीन पर्व है - यात्रा पर्व, स्वाहा पर्व तथा स्वर्ग पर्व। यात्रा पर्व हिम पथ से होकर चलता है। समूचे पर्व में हिम

का वातावरण है कहीं हिमभित्तियों का, कहीं हिमाधियों का, कहीं हिमनद का। ठोस, तरल, वायवी सभी रूपों में हिम संज्ञा मूर्तिमान होती चलती है। यात्रा पर्व हिमाच्छादित है। इससे हिमालय एक धर्म ग्रंथ सा लगता है। हिम की निस्संग तापसता में काव्य का शैव व्यक्तित्व अंकित हुआ है। इस ऊर्ध्वयात्रा में प्रवृत्त पाँडवों को मानव की विविध वृत्तियों एवं चरित्रों के प्रतीक रूप में उपस्थित किया गया है।

हिमालय पर चलते हुए पाण्डवता की शरीरिक शक्ति, क्षात्रतेज़, सांसारिकता आदि का क्षय होने लगता है या निस्तेज़ पड़ने लगता है। यह यात्रा सांसारिकता को उस बिन्दु पर ले आती है जब कुछ संबन्धहीन लगने लगे, एकाकीपन शिरा उपशिरा को दग्ध करने लगे। हिमालय या हिमपथ एकाकीपन को जन्म देता है, यहाँ आकर मन के संबन्ध छिन्न जाते हैं, स्वयं अपनी देह चेतना को भी वृक्ष छाल सा उतार देना पड़ता है। ऊर्ध्वता की ओर गमन करते हुए मन निचली वृत्तियों को छाल सा उतार कर धर्म वहन करने में सक्षम हो जाता है। धर्म के उदार हिमराज्य में आकाश और दिशाओं के अतिरिक्त ओर कोई आवरण नहीं रहता। केवल हिमालय ही व्यक्ति मन को आकर्षित करता रहता। वर्ण, गन्ध की परतों के उधड़ जाने पर देवतात्मा हिमालय की श्वेत भूमि का अनुभव जाग उठता है। र्निभयता हिमालय है तथा अनासक्ति स्वर्ग है। हिमाधियों के बीच चलती हुई द्रौपदी के मन में यह प्रश्न उठता है कि जिस तरह से सीता की अग्नि- परीक्षा की गई है उसी प्रकार मेरी हिम-परीक्षा क्यों हो रही है। हिमालय की और अग्रसर होते हुए भी भीम के मन में अन्तरद्धन्द चलता है। हिम समाधि में गलते हुए भी, अतीत के वैभव एवं स्मृतियाँ प्रश्न चिन्ह बनकर उपस्थित होती है। वह हिमालय में रहकर भी हिमालय से दूर चले जाते हैं। लोकिन युधिष्ठिर हिमालय पर व्यक्ति से प्रकृति बनने आये हैं इसलिए वह निर्भीक है। हिमालय की ऊर्ध्वमुखी चोटियों का गमन करते वक्त शिव संकल्प का ही वहन करना है।

विजयदेवनारायण साही की *'हिमालय की याद में एक पत्र'*, *'क्या करूँ'*, *'अर्धभस्म देवदारु'*, *'तीर्थ तो है वही.......*, हिमालय के आँसू आदि कविताओं में हिमालय

के प्रति अपने लगाव को अभिव्यक्त करने के साथ ही अर्धभस्म देवदारु को आम जनता का प्रतीक माना है। आधुनिक मानव के दर्द एवं पीड़ा को *'हिमालय के आँसू'* कहा है।

जगदीश गुप्त ने *'हिम-विद्ध'* काव्य-संग्रह में हिमालय के पर्वतीय प्रदेश मं कवि के अनुभवों का चित्रण है। यह काव्य संग्रह सात छोटे खण्ड में विभक्त है। हिमालय के वातावरण ने उन्हें इतना प्रभावित किया कि उसके वैभव एवं सौन्दर्य को शब्दबद्ध न कर पाते हैं। हिमालय के मनस्वी पत्थरों पर जमा बर्फ सौन्दर्य का प्रतिरूप है, शान्त घाटी में पिघल कर बहनेवाली हिमानी अविराम पावनता का प्रतिरूप है। अपने अन्तर मन एवं बाह्य वातावरण के परिवर्तनों को हिमालय के प्राकृतिक परिवेश के माध्यम से कवि ने व्यक्त किया है।

निष्कर्ष

प्रयोगवाद और नई कविता में हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ को उद्‌घाटित करने केलिए इस युग के हिमालय सम्बन्धी प्रमुख कविताओं के भौगोलिक, प्राकृतिक, धार्मिक, आध्यात्मिक, नैतिक एवं राष्ट्रीय आयामों का विस्तृत अध्यायन हुआ है। प्रस्तुत युग के कवियों ने अपने मन की पीड़ा, दर्द, विह्वलता को हिमालय के ज़रिए व्यक्त किया है। नन्दादेवी के नष्ट होते वनसंपदा तथा पर्यावरण पर आशंका प्रकट की है। हिमालय के उत्तराखण्ड से लाए किरीटी तरु के भौगोलिक, प्राकृतिक महत्व पर प्रकाश डालकर हिमालय की पुनीत भूमि पर विचार हुआ है। हिमालय के ऊर्ध्वमुखी शिखरों की ओर से पांडवों का प्रस्थान कराकर इसकी तपोमय भूमि को निर्विकार, सम्बन्ध हीन एवं पन्थहीन बताया है। हिमालय में सत्य, पवित्रता, सम्बन्धहीनता, तपःशीलता, शान्ति, अनासक्ति, शिवता तथा दैवित्व, दृढ़, पावन एवं स्नेहशील बताकर उसके नैतिक महत्व पर प्रकाश डाला है। युधिष्ठिर जैसे आदर्श पुरुष के व्यक्तित्व को हिमालयोन्मुखी बताया गया है। हिमालय के हर एक प्राकृतिक उपादान को पूजनीय माननेवाले देश-सुरक्षा पर आशंका प्रकट करते हैं। चीन आक्रमण का विरोध, माओ की निन्दा, काश्मीर की युद्ध-भूमि आदि के राष्ट्रीय महत्व पर भी प्रकाश डाला गया है।

उपसंहार

उपसंहार

भारतीय संस्कृति का गौरव स्तम्भ हिमालय चिरकाल से भारतीय साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त करता आया है। कालिदास ने इसे देवतात्मा, नगाधिराज, शैलाधिराज आदि कहा है। भारतीय संस्कृति को महिमान्वित करनेवाले भौगोलिक, प्राकृतिक, आध्यात्मिक, धार्मिक, नैतिक एवं राष्ट्रीय आयाम हिमालय से संबन्धित है। हिमालय भारत के प्रहरी रहा है जो उत्तर दिशा में पूर्व से पश्चिम की सीमाओं तक फैला पड़ा है। भारतीय साहित्य में चित्रित काम्यकवन, कैलास, अलकापुरी आदि स्थान हिमालय के ही प्रसाद हैं। हिमालय के भौगोलिक एवं प्राकृतिक उपादानों के महत्व को स्पष्ट करने केलिए उसके विस्तार, स्वरूप, उत्पत्ति, पर्वतश्रेणियाँ, नदियाँ, सरोवर, वनसंपदा, खनिज-संपदा, रमणीय स्थान आदि का अध्ययन आवश्यक है। हिमालय भारत के ही नहीं संसार का ही ऊँचा पर्वत है। इसका विस्तार लम्बाई में लगभग 2,500 किलोमीटर और चौड़ाई में लगभग 300 किलोमीटर है। हिमालय असंख्य पर्वत-शिखरों से बना एक विशाल पर्वत है। कैलास यहाँ का प्रमुख पर्वत है जिसे हिन्दू लोग प्रमुख तीर्थ मानते हैं। यह रजतश्रृंग भी है और देवाधिदेव महादेव का वासस्थान भी है। कुबेर द्वारा बनाई गई अलकापुरी इसकी विशेषता है जिसका वर्णन विस्तार से कालिदास के मेघदूत में मिलता है। यह अलकापुरी यक्ष, गन्धर्व, किन्नर तथा नागों का वास स्थान है। मैनाक पर्वत को हिमालय और मेना का पुत्र माना गया है। हिमालय की पर्वत-श्रेणियों को लेकर पुराणों में कई कथाएं प्रचालित हैं। इन पौराणिक कथाओं में हमारा सांस्कृतिक आयाम छिपा हुआ है। गन्धमादन, इन्द्रकील, क्रौंच, मेरु पर्वत, एवरेस्ट, कारकोरम, कांचनजंघा, लोप्से, मकालू, नन्दादेवी, नन्दाकोट, मन्सालू तथा अन्नपूर्ण आदि पर्वतों से संपन्न हिमालय का हर एक पर्वत शिखर किसी न किसी पौराणिक घटना का साक्षी रहा है। ये स्थान हिन्दुओं केलिए तीर्थ रहे हैं। हिमालय पर इस प्रकार के कई स्थान है। हिमालय

से निसृत होकर आनेवाली नदियाँ इसके भौगोलिक वातावरण को रूपायित करने तथा भारतीय संस्कृति को प्रवाहमान करने में सक्षम रही हैं। इनमें गंगा, यमुना, सरस्वती, तमसा, मन्दाकिनी, अलकनन्दा आदि उल्लेखनीय हैं। ये नदियाँ भारतवासियों केलिए जीवनदायिनी हैं। गंगा का तो भारतीय संस्कृति से गहरा सम्बन्ध है। भारतीय जीवन में जन्म से मृत्यु तक भिन्न संस्कारों में गंगा, गंगाजल एवं गंगा से सम्बन्धित तीर्थस्थानों का विशेष स्थान रहा है। हिमालय का सबसे प्रमुख तीर्थ मानसरोवर ब्रह्मा के मानस से उत्पन्न माना जाता है।

हिमालय की वनस्पतियाँ उसके प्राकृतिक एवं भौगोलिक स्वरूप को उद्घाटित करने में सहायक हैं। हिमालय की उपयोगी वानस्पतिक संपदा में औषधि निर्माण हेतु वनस्पतियाँ, रंगाई निर्माण हेतु वनस्पतियाँ तथा फल देनेवाली वनस्पतियाँ मिलती हैं। संजीवनी बूटी का वर्णन तो रामायण में मिलता ही है। इसके अतिरिक्त चीड़, बुरास, बाँस, देवदारू, भोज, साल, सोमलता आदि भी बहुत मात्रा में हिमालय में पाया जाता है। हिमालय के पशुओं में सफ़ेद रीछ, चीता, शेर, लंगूर, कस्तूरी-मृग, तेंदुवा, मोनाल आदि प्रमुख हैं। हिमालय के पर्वतीय प्रदेश में गिरते हुए ओस कणों ने हमारी संस्कृति का संवर्धन किया है। उसकी वनसंपत्ति ने भारत की अर्थिक समृद्धि में अपना अलग भाग प्रस्तुत किया है। हिमालय के क्रोड़ में तरह-तरह के पत्थर, धातुएँ, रत्न एवं बहुमूल्य वस्तुएँ पायी जाती हैं। माणिक्य, नीलम, गोमेदक, पुखराज जैसे रत्न भी यहाँ पाए जाते हैं। महाभारत के अनुसार अश्वमेध यज्ञ केलिए युधिष्ठिर को यज्ञ संपत्ति हिमालय से प्राप्त हुई थी। कालिदास ने हिमालय को 'यज्ञांगयोनि' कहा है।

हिमालय ज्ञानभूमि है। हिमालय की प्राकृतिक छटा उसकी गगनचुम्बी पर्वतमाला कल-कल निनाद करते प्रपात मनन और चिन्तन की प्रेरणा देते हैं। भारतीय संस्कृति को गतिमान बनानेवाले अनेक आचार्यों ने इसी की कन्दरा में बैठकर साधना की है। महर्षि गर्ग, कपिल, कश्यप, माण्डव, अगस्त, वशिष्ठ, गौतम, पराशर, परशुराम, व्यास सभी ने इसे अपनी

तपोभूमि बनाया है। व्यास गुफा, कण्वाश्रम, परशुराम मंदिर, लक्ष्मण झूला ये सब हिमालय से संबन्धित है। बुद्ध, महावीर, पाण्डव, शंकराचार्य, रामानुचार्य, माधवाचार्य सभी हिमालय के दर्शन से धन्य हुए। हिमालय का सत् व्यवहार पुराण साहित्य केलिए नया नहीं है। इन आदर्शों का पालन करते हुए हिमालय आज भी भारतीयों के सम्मुख खड़ा है। भारतीय साहित्य में हिमालय का पालन करते हुए नैतिक आयामों में आबद्ध रहकर तपःशीलता, जनमंगल आदि का प्रमाण प्रस्तुत करता है। राष्ट्ररक्षा केलिए आत्मबलिदान एवं करुणा तथा त्याग को महत्व देकर सदाचरण करता हिमालय की अपनी विशेषता रही है। वेद, पुराण, उपनिषद्, रामायण, महाभारत जैसे भारत के प्राचीन साहित्यिक ग्रंथों में हिमालय के कई संदर्भ मिलते हैं। ये ग्रंथ हिमालय की महिमा से ओतप्रोत हैं। पाण्डवों का महाप्रस्थान एवं युधिष्ठिर का हिमशिखरों से होकर स्वर्ग प्रवेश हिमालय की पवित्रता एवं श्रेष्ठता को दिखाता है। हिमालय भारतीय संस्कृति के आध्यात्मिक एवं धार्मिक पक्ष को अनावृत करता है। हिमालय के बहुआयामी महत्व ने भारतीय साहित्यकारों को अवश्य प्रभावित किया है। कालिदास इसमें सर्वप्रथम हैं। उन्होंने हिमालय को *'पृथ्वी का मानदंड'* कहा है। भारत की उत्तरी सीमा पर छाया हुआ यह पर्वत रत्नाकर भी है।

हिमालय अपनी नैसर्गिक सुषमा एवं बहुमुखी आयामों के कारण भारतीय कवि तथा साहित्यकारों केलिए प्रेरणा देता आया है। आधुनिक हिन्दी काव्य में भी हिमालय काव्य-विषय रहा है। आधुनिक हिन्दी कवियों ने युगीन परिवेश के अनुरूप काव्य-सृजन करने का प्रयत्न किया है। हिमालय को भारतीय संस्कृति का सशक्त प्रतीक माननेवाले कवियों ने युगीन परिवेश तथा युगीन समस्याओं को इनकी हिमालय सम्बन्धी कविताओं में प्रस्तुत कर वर्तमान परिस्थितियों के प्रति जनता का ध्यान आकृष्ट कराया है। भारत के भौगोलिक, प्राकृतिक, धार्मिक, आध्यात्मिक, नैतिक एवं राष्ट्रीय आयाम हिमालय से संबन्धित हैं। इन्हीं सांस्कृतिक आयामों को आधार बनाकर प्रस्तुत शोध प्रबन्ध का अध्ययन हुआ है। प्रस्तुत

शोध प्रबन्ध में द्विवेदीयुग, छायावाद, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद और नई कविता में हिमालय के सांस्कृतिक संदर्भ का विश्लेषण हुआ है। हर युग की कविता की अपनी अलग खासियत रही है। द्विवेदीयुगीन कवियों ने युगीन माँग को ध्यान में रखकर हिमालय के राष्ट्रीय महत्व को प्रमुखता दी क्योंकि भारत अंग्रेज़ों का गुलाम था भारतीयों में स्वतन्त्रता की चाह थी। इसलिए कवियों ने 'हिमालय' जैसे सांस्कृतिक प्रतीक को आधार बनाकर भारत के अतीतकालीन उत्कर्ष को प्रस्तुत कर वर्तमान व्यवस्था की झाँकी दिखाई है। अधिकांशतः हिमालय का प्राकृतिक सौन्दर्य राष्ट्रीय संदर्भ में प्रयुक्त हुआ है। सैनिकों के गौरव की प्रतिष्ठा पहली बार हुई है। लेकिन द्विवेदीयुगीन हिमालय की राष्ट्रीयता की जगह छायावादी कविता में इसका प्रकृति-चित्रण मुख्य रहा है। छायावादी कविताओं में पग-पग पर हिमालय की मनोहारिणी प्रकृति के हृदयहारी सौन्दर्य का अंकन हुआ है। प्रस्तुत युग की कविताओं में हिमालय के मानवीकरण का वैविध्यपूर्ण चित्रण पाया गया है। हिमालय की प्रकृति के कण-कण में ईश्वरीय चैतन्य का अंश पाने के कारण इनके प्रकृति-चित्रण में हिमालय को भगवान शिव, कृष्ण, ब्रह्मा आदि अनेक रूपों में देखा गया है। हिमालय को इतना गौरवान्वित बताया है कि यहाँ से बहनेवाली नदियाँ झर-झर कर उसके गौरव का गान करती है पवन चारण सदृश्य इसके गौरव का प्रचार करता है तथा पक्षी-गण हिमतनया पार्वती के शैशव का वर्णन करते हैं। इनकी हिमालय संबन्धी कविताओं में कहीं-कहीं काल्पनिकता का सहयोग भी रहा है। छायावादी प्रकृति चित्रण से भिन्न होकर प्रगतिवादी कविता में हिमालय को राष्ट्रीयता तथा देश-प्रेम का सशक्त उपादान माना है इनकी हिमालय सम्बन्धी कविताओं में क्रान्ति एवं आक्रोश का तीव्र स्वर सुनाई देता है। जो इनकी परिवर्तन के प्रति जो आकांक्षा है उसका फल है। हिमालय सम्बन्धी कविताओं में छायावादी काल्पनिकता का स्थान यथार्थ ने ले लिया है। पौराणिक तथा ऐतिहासिक आख्यानों को नए ढंग से प्रस्तुत किया है तथा हिमालय के गत वैभव पर गौरव किया है। प्रयोगवाद और नई कविता में अपने वैयक्तिक अनुभवों तथा

अनुभूतियों को हिमालय के माध्यम से व्यक्त करने की प्रवृत्ति से साधक के तादात्म्य का महत्व, पर्यावरण के प्रति आशंका, आम जनता का प्रतीक हिमालय तथा हिमालय का कुछ एक कवियों के मानासिक धरातल से गहरे सम्बन्ध का चित्रण हुआ है।

द्विवेदीयुगीन कविताओं में हिमालय का सांस्कृतिक पक्ष जो किसी न किसी रूप में प्रस्तुत रहा है उसी को उद्घाटित करने का प्रयास हुआ है। हिमालय की सबसे प्रमुख नदी गंगा के सांस्कृतिक पक्ष का निर्धारण कर वैभव, ज्ञान, श्रेष्ठता, साहस को दोनों किनारों पर डालकर चलनेवाली गंगा को भारतीय अपनी माता मानते हैं जिसका वास्तविक श्रेय हिमवान को है। द्विवेदीयुगीन कवि हिमालय को सदैव भारतीय कवियों एवं साहित्यकारों केलिए प्रेरक मानते है इस सम्बन्ध में कवि माखनलाल चतुर्वेदी कहते हैं कि–

"नहा नहा भारत की कविता यहीं अपनापा वार रही है,
सरोवरों के दर्पण लख कर अपना रूप संवार रही है।"

द्विवेदीयुगीन कवि जब कभी हिमालय का उल्लेख करते हैं तो हिमालय के प्रशंसक कालिदास का स्मरण अवश्य करते हैं। द्विवेदीयुगीन कवि हिमालय की प्रकृति को एक ओर सुन्दर बताते हैं तो दूसरी ओर भयानक। हिमालय के कारण होनेवाले प्राकृतिक नाश में भी एक नवनिर्माण छिपा रहता है। हिमालय से बहकर आनेवाली नदियाँ हमारी संस्कृति को गौरवान्वित करती हैं। भारतीय संस्कृति को आगे बढ़ानेवाली ये नदियाँ भारतीय संस्कृति की जीव धारा हैं। हमारी संस्कृति को कायम रखनेवाली इन नदियों के साथ हमारे अतीत की स्मृतियाँ और वर्तमान तथा भविष्य का नवनिर्माण भी जुड़ा रहता है।

हिमालय के शिखरों में विराजमान भगवान शंकर के लोकमंगलकारी स्वरूप को 'विषपान' के पौराणिक संदर्भ में प्रस्तुत किया है। हिमालय के हरेक प्राकृतिक पदार्थ जैसे तरु, लता, पल्लव, गुल्म में चिन्ता के छा जाने का चित्रण कर हिमालय के प्राकृतिक वातावरण

को मानव के सुख-दुःख का भागीदार बताया है। तीर्थ जननी गंगा का धार्मिक महत्व रहा है। हरेक भारतवासी के मन में आपसी प्रेम पैदा करनेवाली भारतीय संस्कृति की अन्तरधाराएं हिमवान से जुड़ी हैं। गंगा के ज़रिए जिन सांस्कृतिक निधियों को भारत ने पाया है जिसका वास्तविक श्रेय हिमवान को है। ऋषि एवं तपस्वियों की तपोभूमि अगम वेद से निगम शास्त्र तक की देन, हिमालय की गुफाओं से उठनेवाली मन्त्र ध्वनि, यहीं वेदों की वाणी की गूँज हिमालय की आध्यात्मिक संस्कृति को उज्जवल बनाता है। हिमालय से निसृत, वेद, मन्त्र, ज्ञान यहाँ की जनता के हृदय, कंठ, मस्तिष्क में काव्य-भावना, सौन्दर्य-बोध तथा चिन्तन-पद्धतियों व ो पैदा करते हैं। ये ऐसे भाव है जो मानव मन को स्वच्छ बनाते हैं और सद्गति की ओर चलने की प्रेरणा देते हैं। हिमालय के नैतिक आयाम भी इसके सांस्कृतिक पक्ष को उजागर करता है। हिमालय को अविचल, स्थिर दृढ़ बताकर जनता से समस्याओं का डटकर मुकाबला करने का आह्वान दिया है। बाह्य रूप से दृढ़ एवं अविचल दिखाई देनेवाला हिमालय करुणा की दृष्टि से असंख्य धाराओं को बहाता है जो जन जीवन को कायम रखता है। करुणा रूपी इस सद्व्यवहार से हिमालय अपने आप को ऊँचों से भी ऊँचा साबित करता है। मौन एवं साधना में मग्न हिमालय से कवि गण मौन त्यागकर गौरव वाणी सुनाने का आग्रह करते हैं। हिमालय से निसृत निर्झरों का स्वर इसके अन्तस् का संवाद ही है। प्रेम तत्व के महत्व पर भी प्रकाश डाला गया है। हिमशैलों में बसनेवाली नारियों को पार्वती माना है जो गगर लेकर झरनों के किनारे आती हैं और अपने मनरूपी घट में प्रेम रूपी पानी लेकर जाती है। भारतीय संस्कृति के कर्मण्यता, आदर आदि नैतिक प्रसंगों को हिमालय के संदर्भ में प्रकाश डाला गया हैं।

हिमालय सम्बन्धी राष्ट्रीय कविताओं द्वारा मातृभूमि की स्तुति, अतीत का गौरव गान, उद्बोधन की प्रवृत्ति, सैनिकों को बलिदान की प्रेरणा, राष्ट्र संपत्ति पर गर्व तथा राष्ट्रीय एकता के महत्व आदि सामने आ जाता है। हिमालय जैसे पुण्य शैल पर विवश होकर आज हमें भी अस्त्र चलाना पड़ता है कहकर उस युद्ध-भूमि की ओर इशारा किया गया है।

कामायनी महाकाव्य का आरंभ तथा परिसमापन हिमालय की गोद में करते हुए प्रसाद ने इसे मानव-संस्कृति का आरंभिक स्थान माना है। कैलास, मानसरोवर, गन्धर्वों का देश, सरस्वती नदी, कश्यपाश्रम तथा पाटल, ताम्र, बाँझ, चीड़, इन्दीवर, हिमखग आदि हिमालय के भौगोलिक एव प्राकृतिक उपादान छायावादी कवियों की कविताओं में यथावंत् मिलते हैं। इन कविताओं में हिमालय की प्रकृति का मानवीकरण हुआ है प्रसाद ने यहाँ से निःसृत नदियों को इसकी हँसी की परिणति माना है। हिमालय की ऊँचाई का मानवीकरण कर आकाश को छूने केलिए मचल उठना, फूलों रूपी नेत्रों से पर्वत का नीचे जल रूपी दर्पण में अपना प्रतिबिम्ब देखना, प्रलय पश्चात् पृथ्वी तल से बर्फ की तहों का पिघलना जैसे मुख धोना आदि का चित्रण हुआ है। हिमालय से निसृत नदियों की तुलना समाधि में तल्लीन हिमालय के स्वेद-बिन्दु से की है। किसी गहरी पीड़ा की आशंका से पृथ्वी में जो सिकुड़न है वही हिमालय के रूप में दृष्टिगोचर हो रहा है। मानव के मन की विविध अनुभूतियों को हिमालय के प्राकृतिक माध्यम के ज़रिए चित्रित करते हुए हिमालय की प्रकृति को मानव के सुख-दुःख का भागीदार बताया है। श्रद्धा-मनु तथा सारस्वत निवासियों के महा मिलन के आनन्दमय वातावरण में कैलास पर्वत की प्रकृति को भी इनके साथ आनन्द, उमंग और उल्लास का भागीदार बनते दिखाया है। हिमालय की प्रकृति पर नारी भाव का आरोप लगाते हुए इसे, पार्वती वन प्रकृति अप्सरा ही सी सुन्दर कहा है। प्रसाद ने हिमालय की हिमवती पाषाणी प्रकृति को रक्त-मांस मज्जा की सुन्दर नारी बताया है, जो लास्य रास में तन्मय होकर मधुर हँसी फैला रही है। एक ओर हिमालय की प्रकृति को नृत्य निरता पार्वती के रूप में देखा गया है तो दूसरी ओर कैलास की प्रकृति को रास निरता गोपिका के रूप में चित्रित कर पौराणिक रूप विधान का कार्य किया है। कहीं सन्ध्याकालीन हिमालय प्रकृति की छींट रूपी वस्त्र ओढ़कर बर्फ का मुकुट पहने हुए रानी के रूप में देखा गया तो कहीं चंचल बाला के रूप में देखा गया है। छायावादी कविता में हिमालय की प्रकृति नाना रूप, रंग, वर्ण के साथ सुसज्जित हुई है।

छायावादी कवि हिमालय में कोई न कोई देवता का आभास अवश्य पाते हैं। भारत के श्रेष्ठ महा पुरुष भगवान कृष्ण के साथ भारत के श्रेष्ठ महा पर्वत हिमालय की तुलना कर दोनों की स्तुति एवं वन्दना की गई है। हिमालय के शुभ्र अंचल के ऊपर छाए नीले आकाश का प्रतिफलन अनेक रंगों के मेघों से घिरे शिखर को मोर के पंख, पीली धूप को पीताम्बर, हवा के मर्मर रव को वंशी की ध्वनि बताकर हिमालय को कृष्णा के रूपक में बांधा है। छायावादी कवियों ने पुराण प्रसिद्ध हिमालय से पौराणिक घटनाओं को ताज़ा करते हुए भारतीय जन मानस में हिमालय के प्रति गहरी आस्था दिखाकर उसके सांस्कृतिक महत्व का प्रतिपादन किया है। मदन-दहन, पार्वती-तपस्या का स्मरण कर, पक्षी गणों द्वारा पार्वती की स्तुति आदि घटनाओं को पुनः प्रस्तुत किया है। कैलास पर्वत को संसार का सबसे पवित्र तीर्थ स्थान माननेवाले कवि प्रसाद ने कैलास पर्वत को भगवान शंकर तथा मानसरोवर को पार्वती मानकर उसके धार्मिक महत्व पर प्रकाश डाला है। शिव, विष्णु से हिमतनया गंगा का सम्बन्ध होने के कारण वह तीर्थ स्वरूप बन गयी है। समाधिस्थ शिव से हिमालय के ऊर्ध्वगामी देवदारु वृक्ष की तुलना करते हुए यहाँ के प्राकृतिक उपादानों में ईश्वरीय चैतन्य का अंश देखा गया है।

छायावादी कविता में हिमालय के आध्यात्मिक वातावरण में मनु द्वारा पाक यज्ञ संपन्न करने तथा किलात एवं आकुलि द्वारा पशु वध कर यज्ञ संपन्न कराने का चित्रण हुआ है। हिमालय को परमात्मा बताकर उसके दृढ़ एवं स्थिर रूप पर प्रकाश डाला गया है जबकि हिमतनया गंगा को आत्मा मानकर उसके चंचल रूप को उजागर किया है। हिमालय को निर्विकल्प चेतना श्रृंग माननेवाले कवि पंत ने हिमालय एवं सागर की तुलना की है। हिमालय को गंभीर, स्थिर ऊर्ध्वमुखी एवं निरभिलाषी बताया गया है जब कि सागर तरंगायमान है दुःख, आशा तथा आकांक्षा से पूरित है। हिमालय को स्वर्ग सीढ़ी या मोक्षद्वार बताकर उसकी आध्यात्मिक गरिमा को उजागर किया है। हिमालय में मानव सहज सद्‌गुणों का चित्रण

प्रस्तुत युगीन कविता में पाया गया है। हिमालय में ममता, सहानुभूति, करुणा, आत्माभिमान परोपकार, जनमंगल,त्याग, दानशीलता आदि गुण पाए गए हैं।

हिमालय के भौगोलिक एवं प्राकृतिक उपादानों का विस्तृत नदियों का जल देश की मिट्ठी को उर्वर बनाता है और नई संस्कृतियों को जन्म देता है। कवि नागार्जुन ने सिन्धु नदी के सांस्कृतिक महत्व पर प्रकाश डाला है। बादलों से घिरे अमल धवल गिरि, हंस, चव वा-चकई से युक्त हिमालय के वन, सिन्धु नदी तट पर चरनेवाली कपिला गायें, घन-निबिड़ शाखाओं वाला देवदारु का वृक्ष आदि यहाँ के प्राकृतिक परिवेश को ओर अधिक सुन्दरता प्रदान करता है। हिमालय की प्रकृति का मानवीकरण भी यहाँ हुआ है। छायावादी कविता से भिन्न होकर इस युग के कवि अपने आन्तरिक दुःख तथा पीड़ा को हिमालय के ज़रिए व्यक्त करने की कोशिश की गई है। अपने मन की व्यथा का, हिमालय के हृदय से उठनेवाले धूएँ के साथ तुलना की है। हिमालय शैल को धरती की हथेली पर उबलता चाय का प्याला माना है जिससे उड़नेवाली भाप अपने अन्तर में घमड़नेवाली व्यथा है। आज की युग का इनसे बढकर सच्चा सांस्कृतिक चित्र और कहाँ मिल सकता है। कौसानी की हरी भरी घाटी की युवती के साथ तुलना करते हैं यहाँ की ऊर्वर घाटियाँ हरे रेशमी दामन ओढ़े स्थित युवती जैसे दिखायी देती हैं, जिसकी नील अलकें है यहाँ की निर्झरणियाँ। कालिदासकालीन प्रकृति का पुनः सृजन इस युग के काव्य में पाया जाता है। पावस ऋतु में हिमालय के नील गगन में उडनेवाले बलाका को देखकर धवल गति से बहनेवाले श्वेत सहस्र पत्र-पद्मों से तुलना करते हैं। हिमालय के निवासी किन्नर-किन्नरियों की वेष-भूषा तथा जीवन पद्धति को दिखाकर उनकी विशेष संस्कृति को उभारा है।

हिमालय के धार्मिक तीर्थों तथा पौराणिक धार्मिक सदर्भों का उल्लेख भी इस युग की कविता में पाया जाता है। यहाँ हरेक व्यक्ति के उहं, कलुष-खोर के नष्ट होने पर ही

भगवान शंकर प्रसन्न हो जाते हैं। धनुर्धारी अर्जुन को भगवान शंकर ने प्रसन्न होकर पाशुपतास्त्र दिया था। हिमालय को शिव एवं पार्वती की तपस्थली बताने के साथ-साथ कामदेव के धनुष से शर छूटने तथा शिव की तीसरी आँख से निकली महाज्वाला में घृतमिश्रित सूखी समिधा सम कामदेव के भस्म होने का चित्रण करते हैं। परशुराम की प्रतीक्षा कविता में हिमालय के लोहित में स्थित ब्रह्मकुण्ड को सबसे पावन तीर्थ माना गया है। मातृहत्या के पाप से छुटकारा पाने केलिए परशुराम ने यही पर स्नान किया था। इस प्रकार अतीत की गौरवमय घटनाएं जो हमारी सांस्कृतिक धरोहर से संबन्धित है, हिमालय की आड में चित्रित हुई हैं।

प्रगतिवादी कवि हिमालय को युग-युग से अजेय, निर्बन्ध, मुक्त, साकार, दिव्य एवं विराट मानते हैं। इन्होंने हिमालय को जन्म एवं मृत्यु के प्रश्नों का उत्तर खोजनेवाला तपस्वी माना है। जिसने पृथ्वी पर दार्शनिक मुद्रा में खड़े होकर चिन्तन-मनन से प्राप्त आध्यात्मिक तत्व-ज्ञान भारत को दिया है। कूर्माचल को स्वर्ग सीढ़ी तथा ऋषि मुनियों की तपस्थली बताकर उसके आध्यात्मिक महत्व पर भी प्रकाश डाला है। हिमसुता सिन्धु नदी तट पर ऋषियों की सन्ध्या वन्दना, ऋषिगणों द्वारा स्तोत्र पाठ, इसकी धारा में बहाए जानेवाले फूल आदि धार्मिक रिवाज़ हिमालय की आध्यात्मिक संस्कृति को द्योतित करते हैं। भारत ही आध्यात्मिक संस्कृति को समन्वयात्मक बताकर सिन्धु नदी से इसका संबन्ध बताया है। छायावादी कविता से भिन्न होकर हिमालय के नौतिक संदर्भ में हिमालय का दुहरा व्यक्तित्व प्रगतिवादी कविता में उभर आता है। एक ओर हिमालय को स्वयं गलकर जल बनकर जगती का प्यास बुझानेवाला लोककल्याणकारी माना है तो दूसरी ओर इसे अकर्मण्य या उच्चवर्ग का प्रतिनिधि माना है; जो अडिग है। लेकिन हिमतनया गंगा को कर्मण्य बताया है। हिमालय के राष्ट्रीय संदर्भ में हिमालय पर पहरा देनेवाले सैनिकों की स्तुति, भारत के उत्तर में पृथ्वी के मानदण्ड समान खड़े हिमालय पर आक्रमण करनेवाले चीन के विरोध आदि का चित्रण भी हुआ है।

प्रयोगवादी कविताओं में अधिकांश रूप में हिमालय के गिरि प्रान्तर के सुन्दर सुहावने वातावरण का चित्रण पाया जाता है। जंगली पाटल, देवदारु, चीड़, औषधियाँ, पाखीदल, ब्रह्मी कस्तूरी-मृग, वृषभ, हंस से युक्त हिमालय के वनश्री को देखकर कवि पुनः इसी के वातावरण मे पुनः लौट आना चाहता है। साही जैसे कवि को ये प्राकृतिक सौन्दर्य इतना आकर्षित करता है कि हिमालय के सम्बन्ध में एक पत्र लिखते हैं। एक ओर हिमालय के वन, नदी, जंगली पाटल, पत्थरों से फूटता पानी के मन भावने दृश्य है तो दूसरी ओर सब कहीं हिम ही हिम या बरफ की बरफ़ देखा गया है। हिमालय के सुन्दर वातावरण में भी कवि का मन बेचैन रहता है। अपने मन की पीड़ा या दर्द के कारण प्राकृतिक सौन्दर्य एवं शीतलता का कवि मन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। हिमालय के शुभ्र शिखरों को उँगलियों तथा उन पर पड़नेवाले सूरज के अरुण पीत किरणों को मेहंदी बताया है। हिमालय के ऊपर छाए अकेले शुभ्र बादलों की धौरी उजली गायों तथी चाँदी के हिरन से तुलना की है। अज्ञेय ने नन्दादेवी के नष्ट होते वनसंपदा या पर्यावरण पर आशंका प्रकट हैं। अपनी अज्ञता, भूख या लोभवश हिमालय के वनों को काटने या नष्ट करने का प्रयत्न करते हैं। वास्तव में हमारी सम्पदा को खोकर अपनी संस्कृति पर ज़कम पहुँचाते हैं। यहाँ पर हिमालय की प्रकृति का मानवीकरण भी हुआ है। हिम श्रृंगों को छोटे बच्चे के अधउगे दाँतों तथा हिमालय के शुभ्र शिखरों को इन्दीवर (सफ़ेद कमल) माना है। हिमालय के उत्तराखण्ड की भौगोलिक एवं प्राकृतिक वातावरण पर भी प्रकाश डाला गया है।

इन कविताओं में हिमालय के उत्तराखण्ड प्रदेश के धार्मिक महत्व पर भी विचार हुआ है। हिमालय में उगनेवाले किरीटी तरू के कानों में हिम शिखरों का रहस्य कहना वास्तव में यहाँ वास करनेवाले देवताओं का रहस्य कहना है। हिमालय के ऋषियों एवं तपस्वियों के मन्त्रों की गूँजी को भी हिमालय द्वारा बताए गए रहस्य के रूप में देखा गया है। हिमालय के अतल में वास करनेवाले नाग वासुकी का संकेत भी मिलता है। नरेश मेहता

जैसे कवि ने हिमालय को शिव का पर्याय ही माना है हिमालय की अनन्त प्रकृति के माध्यम से शिव और पार्वती के वास को रूपायित किया है। हिमालय के शिव रूप का वर्णन करते हुए हिम रूपी शिव की गोद में मानव को वर्जित बताया है।

इस प्रकार देखा जाए तो प्राचीन काल से हिमालय हमारी संस्कृति से अभिन्न सम्बन्ध रखता आया है। हिमालय के बहुआयामी सांस्कृतिक स्वरूप ने भारतीय चिन्तन-पद्धति, रहन-सहन, आचार-विचार को बहुत अधिक प्रभावित किया है। हिमालय के वैविध्यपूर्ण स्वरूप भारतीय कवियों केलिए भी प्रेरणादायक रहा। इन्होंने अपनी कविताओं द्वारा हिमालय के बहुआयामी महत्व को चित्रित करने का प्रयास किया है। हिन्दी काव्य जगत् में अधिकांश सभी प्रमुख कवियों ने भारत के गौरव स्तम्भ हिमालय को अपना काव्य विषय अवश्य बनाया है। हिमालय को युगीन परिवेश के अनुरूप देखने की प्रवृत्ति इनकी कविताओं में पायी जा सकती है। इस प्रकार हिमालय को भारतीय संस्कृति, भारतीय सभ्यता, भारतीय इतिहास तथा भारतीय साहित्य से सम्बद्ध बताकर उसके महत्व को प्रकट किया गया है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

संदर्भ ग्रंथसूची

परिशिष्ट - 1

काव्य-संग्रह

1. अपरा - सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला , साहित्यकार संसद , प्रयाग , 1963
2. अभिषेकता - सुमित्रानन्दन पन्त , राजकमल प्रकाशन , दिल्ली , प्रथम संस्करण 1960
3. आँगन के पार द्वार - अज्ञेय , भारतीय ज्ञान पीठ , बी 45/46 कनाट प्लेस , नयी दिल्ली- 110 001 , सप्तम संस्करण 1981
4. इन्द्र धनु रौंदे हुए ये - अज्ञेय , सरस्वती प्रेस , इलाहाबाद , सम्मेलन मुद्रणालय , प्रयाग
5. उत्तर कबीर तथा अन्य कविताएँ - केदारनाथ सिंह , राजकमल प्रकाशन - 1 , नेताजी सुभाष मार्ग , नई दिल्ली - 110 002 , प्रथम संस्करण 1995
6. उत्तरा - सुमित्रानन्दन पंत , भारती भंडार , लीडर प्रेस , इलहाबाद , द्वितीय संस्करण 1955
7. एकान्त - नेमिचन्द्र जैन , भारतीय ज्ञान पीठ , बी 45/46 कनाट प्लेस , नयी दिल्ली - 110 001 , प्रथम संस्करण 1973
8. काश्मीर सुषमा - श्रीधर पाठक , रामदयाल अग्रवाल , इलाहाबाद , दूसरा संस्करण
9. कामायनी - जयशंकर प्रसाद , भारती भण्डार , लीडर प्रेस, इलाहाबाद , द्वादश आवृत्ति संवत् 2022
10. खण्डित सेतु - शम्भूनाथ सिंह समकालीन प्रकाशन , 14/160 सत्याग्रह मार्ग, वाराणासी - 2 , प्रथम संस्करण 1966
11. गन्धवीथी - सुमित्रानन्दन पन्त , राजकमल प्रकाशन , 8, फौज़ बाज़ार , दरियागंज, नई दिल्ली - 6 , प्रथम संस्करण 1973

12. गीत भी अगीत भी - नीरज , राजपाल एन्ड सन्स , दिल्ली , प्रथम संस्करण 1963

13. चिदम्बरा - सुमित्रानन्दन पन्त , राजकमल प्रकाशन प्र.लि. , दिल्ली , दूसरा संस्करण 1966

14. चुका भी हूँ नहीं मैं - शमशेरबहादुर सिंह राधाकृष्ण प्रकाशन 1-अन्सारी रोड़ दरियागंज , दिल्ली , प्रथम संस्करण 1975

15. तारा पथ - सुमित्रानन्दन पन्त , लोकभारती प्रकाशन , इलाहाबाद-1 , 1972

16. तीसरा अंधेरा - कैलाश वाजपेयी , राजकमल प्रकाशन प्र.लि. , 8, फौज़ बाज़ार दिल्ली-6

17. दीपशिखा - महादेवी वर्मा , भारती भंडार , लीडर प्रेस , इलाहाबाद , छठा संस्करण 1962

18. दूसरा सप्तक - अज्ञेय , 9, अलीपुर पार्क प्लेस , कलकत्ता-27 , द्वितीय संस्करण 1970

19. धूप के धान - गिरिजाकुमार माथुर , भारतीय ज्ञान पीठ , दुर्गाकुड रोड़ , वाराणासी द्वितीय संस्करण 1958

20. नये पत्ते - सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला , निरुपमा प्रकाशन , 50, शहरारा बाग , प्रयाग 1946

21. नीरज की पाती - नीरज , आत्माराम एन्ड सन्स , काश्मीरी गेट , दिल्ली-110 006, 1990

22. नीलकुसुम - रामधारी सिंह दिनकर , उदयाचल , आर्य कुमार रोड़ , पटना-4 , दूसरा संस्करण 1956

23. परशुरराम की प्रतीक्षा - रामधारीसिंह दिनकर , जनवाणी प्रिण्डर्स एन्ड , पब्लिशर्स , 178, स्वीन्द्र सारणी , कलकता - 3 , प्रथम संस्करण 1963

24. परिधि - महादेवी वर्मा , जयभारती प्रकाशन लालजी मार्केट , माया प्रेस रोड़ इलाहाबाद-3 , प्रथम संस्करण 1995

25. पलाश वन - नरेन्द्र शर्मा , भारती भंडार , लीडर प्रेस , इलाहाबाद , प्रथम संस्करण 1946

26. पहले मैं सन्नाटा बुनता हूँ - अज्ञेय , राजपाल एन्ड सन्ज़ , काश्मीरी रोट , दिल्ली , दूसरा संस्करण 1976

27. प्रसाद ग्रंथावली - जयशंकर प्रसाद , खण्ड-1 काव्य , भारतीय ग्रंथ निकेतन , 27/3, कुचा चेलान , नई दिल्ली - 110 002 , 1988

28. पुरानी जूतियों का कोरस - नाग्रार्जुन , वाणी प्रकाशन , 61. एफ. कमला नगर दिल्ली-110 007 प्रथम संस्करण 1983

29. भारत-गीत - श्रीधर पाठक , गंगा पुस्तक माला , द्वितीय संस्करण

30. भारत-भारती - मैथिलीशरण गुप्त , साकेत प्रकाशन , झाँसी , चौथा संस्करण 1983

31. भूमि - भाग - मैथिलीशरण गुप्त , साहित्य प्रेस , चिरगाँव, झाँसी , प्रथम आवृत्ति 1953

32. मरण-ज्वार - माखनलाल चतुर्वेदी , हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय , पिशाचमोचन, वाराणासी-1 , 1963

33. माखनलाल चतुर्वेदी रचनावली - भाग 6 , वाणी प्रकाशन , 61 एफ कमला नगर दिल्ली - 110 007 , प्रथम संस्करण 1983

34. माखनलाल चतुर्वेदी रचनावली - भाग 7 , वाणी प्रकाशन , एफ. कमला नगर, दिल्ली - 110 007

35. माता - माखनलाल चतुर्वेदी , भारती भंडार , लीडर प्रेस , इलाहाबाद , द्वितीय संस्करण 1961

36. मुकुल - सुभद्राकुमारी चौहान अमृतशय, हंस प्रकाशन , इलाहाबाद , आठवाँ संस्करण 1959

37. ये कोहरे मेरे है - भवानी प्रसाद मिश्र , राजकमल प्रकाशन प्र.लि. , 1-बी नेताजी सुभाष मार्ग , नई दिल्ली - 110 002 , प्रथम संस्करण 1993

38. युग धारा - नागार्जुन , यात्रि प्रकाशत , C-3/169 यमुना विहार , दिल्ली - 110 053

39. रश्मिलोक - रामधारी सिंह दिनकर स्टार पब्लिकेशन , आसफ अलीरोड़ नई दिल्ली - 110 001 , प्रथम संस्करण 1974

40. राष्ट्र कवि मैथिलीशरण गुप्त अभिनन्दन ग्रंथ - श्री ऋषि जैमिनी कैशिक बरुआ , तरुण प्रकाशन , शान्ति निकेतन , शास्त्री नगर , मेरठ 1959

41. रूपाम्बरा (आधुनिक हिन्दी के प्रकृति काव्य का संकलन और विवेचन) - अज्ञेय , भारतीय ज्ञान पीठ , काशी , प्रथम संस्करण 1960

42. विन्ध्य - हिमालय - शिवमंगल सिंह सुमन , आत्माराम एन्ड सन्ज़ , दिल्ली-6 , प्रथम संस्करण 1966

43. शंख-ध्वनि - सुमित्रानन्दन पन्त , राजकमल प्रकाशन , दिल्ली , 1971

44. संघर्ष के स्वर - हरिकृष्ण प्रेमी , रवीन्द्र प्रकाशन , ग्वालियर , अगरा , प्रथम आवृत्ति 1968

45. संप्रति - भवानी प्रसाद मिश्र , किताब घर , मेन रोड़, गाँधी नगर , दिल्ली-110 031 प्रथम संस्करण 1962

46. संवाद तुमसे - विजयदेवनारायण साही , भारतीय ज्ञान पीठ , 18, इन्स्टीट्यूशनल एरिया लोदी रोड , नई दिल्ली - 110 003 , प्रथम संस्करण 1990

47. सतंरगे पंखोंवाली - नागार्जुन , वाणी प्रकाशन , 61. एफ कमला नगर , दिल्ली - 110 007, प्रथम संस्करण 1984

48. साखी - विजयदेवनारायण साही , ईस्टन मीडिया सर्विसेज , सातबाहन पब्लिकेशन , नई दिल्ली - 110 065 , प्रथम संस्करण 1983

49. सान्ध्य गीत - महादेवी वर्मा , भारती भंडार , लीटर प्रेस , इलाहाबाद , पाँचवाँ संस्करण 1962

50. सियारामशरण गुप्त रचनावली खण्ड एक - ललित शुक्ल , किताब घर , दरियागंज, अन्सारी रोड़ , प्रथम आवृत्ति , नई दिल्ली - 110 002

51. सुनहले शैवाल - अज्ञेय , अक्षर प्रकाशन प्र.लि , दिल्ली , प्रथम संस्करण १९६६

52. सोहनलाल द्विवेदी ग्रन्थावली - राकेश गुप्त , ग्रन्थायन सर्वोदय नगर, सासनी रोट अलीगढ़ , प्रथम संस्करण 1986

53. हज़ार हज़ार बाहोंबाली - नागार्जुन , राधाकृष्ण प्रकाशन , 2. अन्सारी रोड़ , दरियागंज, नई दिल्ली , प्रथम संस्करण 1981

54. हिम-विद्ध - जगदीश गुप्त , प्रधान कार्यालय , 9 अलीपुर , पार्क प्लेस , कलकत्ता-27 , प्रथम संस्करण 1964

55. हिमालय - महादेवी वर्मा , लोक भारती प्रकाशन , महात्मा गान्धी मार्ग , इलाहाबाद, 1963

56. हिमालय साक्षी है - महावीर प्रसाद गौरोला , सत्साहित्य प्रकाशन , 15-बी चावडी बाज़ार , दिल्ली-6 , प्रथम संस्करण 1994

57. हूँकार - दिनकर , उदयाचल , आर्यकुमार रोड़ , पटना - 4

परिशिष्ट - 2

आलोचनात्मक पुस्तकें

1. अज्ञेय की काव्य चेतना - डॉ० कृष्ण भावुक , अशोक प्रकाशन , नई दिल्ली , प्रथम संस्करण 1995

2. आधुनिक कवि - विश्वम्भर मानव , लोक भारती प्रकाशन , इलाहाबाद-1 , प्रथम संस्करण 1963

3. आधुनिक कवि रामनरेश त्रिपाठी - गोपाल चन्द्र सिंह , हिन्दी साहित्य सम्मेलन , प्रयाग 1964

4. आधुनिक कविता की प्रवृत्तियाँ (द्विवेदीयुगोन्तर हिन्दी कविता की प्रवृत्तियाँ एवं वर्णन शैली) - डॉ० प्रेमप्रकाश गौतम सरस्वती पुस्तक सदन आगरा. 3 प्रथम संस्करण 1972

5. आधुनिक जीवन बोध की मार्मिक कविताएं - रामेश्वर खण्डलवाल तरुण , नाश्नल पब्लिशिंग हौस , नई दिल्ली - 110 006

6. आधुनिक हिन्दी कविता में राष्ट्रीय चेतना - डॉ० शुभा लक्ष्मी , नचिकेता प्रकाशन , दिल्ली-9 प्रथम संस्करण 1986

7. आधुनिक हिन्दी के प्रकृति काव्य का संकलन और विवेचन - अज्ञेय भारतीय ज्ञान पीठ, काशी , प्रथम संस्करण 1960

8. आधुनिक हिन्दी साहित्य की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि - डॉ० भोलानाथ , प्रगति प्रकाशन, बातुल बिलडिंगस , आगरा , प्रथम संस्करण 1969

9. आधुनिकता से आगे श्री नरेशमेहता - मीरा श्रीवास्तव , लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद-1, प्रथम संस्करण 1989

10. आर्यों का आदि निवास मध्य हिमालय - भजन सिंह 'सिंह' , रचना प्रकाशन , इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 1968

11. उत्तर हिमालय चरित - प्रबोध कुमार सन्याल , हंस कुमार तिवारी , राजकमल प्रकाशन प्र. लि. , नई दिल्ली , प्रथम संस्करण 1978

12. कामायनी इतिहास और रूपक - सुशीला भारती , मिलिन्द प्रकाशन , 155 कोकर वाडी हैदराबाद-2 , प्रथम संस्करण 1966

13. कामायनी की कथा गवेषणात्मक अनुशीलन - डॉ० वीर सिंह , आशा प्रकाशन ग्रह , 30 करोल बाग , नई दिल्ली , प्रथम संस्करण 1966

14. कालिदास का प्रकृति चित्रण - निर्मल उपाध्याय , नीलम प्रकाशन 5, खुसरो बाग रोड़, इलाहाबाद , प्रथम संस्करण 1968

15. कालिदास की कृतियों में भोगोलिक स्थलों का प्रत्याभिज्ञान - डॉ० कैलाशनाथ द्विवेदी, साहित्य निकेतन , कानपुर , प्रथम संस्करण 1970

16. कालिदास की ललित्य योजना - हज़ारी प्रसाद द्विवेदी , नैवेद्य निकेतन , वाराणासी-5, 1965

17. कालिदास चर्चित बृहत्तर भारत - भवानी शंकर त्रिवेदी , आर्य भारती , दिल्ली , प्रथम संस्करण 1986

18. कुटज और अन्य निबन्ध - हज़ारी प्रसाद द्विवेदी , लोक भारती प्रकाशन , इलाहाबाद-1 1970

19. कैलास-मानसरोवर की कहानी - हंसराज दर्शक , सन्मार्ग प्रकाशन , 16 यू. बी. बैंगलो रोड़ , जवाहर नगर , दिल्ली-110007 , 1997

20. गंगा अतीत एवं वर्तमान - वरदा वसुन्धरा , विद्या विहार , दरियागंज , नई दिल्ली - 2, प्रथम संस्करण 1995

21. गत दो दशकों के काव्य में राष्ट्रीय चेतना (1948-1967) - नरेन्द्र नाथ चतुर्वेदी , अनुराग प्रकाशन , अजमीर

22. चन्द्रगुप्त - जयशंकर प्रसाद , लोकभारती प्रकाशन , 15-A महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद-1, द्वितीय संस्करण 1993

23. छायावाद से नई कविता तक - डॉ० रमेशचन्द्र शर्मा , भारती प्रकाशन मन्दिर , अलीगढ़ प्रथम संस्करण 1980

24. छायावादी कवियों का काव्यादर्श - डॉ० कृष्ण चन्द्र गुप्त , फूलबाग कालनी , सैराज कुण्ड रोड़ , मेरठ-3

25. छायावादी काव्य में लोकमंगल की भावना - डॉ० अम्बादत्त पांडेय , प्रेम प्रकाश मन्दिर, 3012, बल्लीमारान , दिल्ली-6 , प्रथम संस्करण 1973

26. छायावादी बिम्ब विधान और प्रसाद - डॉ० एन.पी. कुट्टन पिल्लै , किरण प्रकाशन, रिसाला , हैदराबाद 500001 , प्रथम संस्करण 1983

27. जयशंकर प्रसाद के काव्य में बिम्ब विधान - डॉ० सरोज अग्रवाल , ऋषभ चरण जैन एवं संतति , 4697/5.21 ए दरियागंज , नई दिल्ली - 100002

28. तपोवन से स्वर्गारोहण - प्रेमलाल भट्ट राजेश प्रकाशन , B.7/46, कृष्ण नगर, दिल्ली-51 प्रथम संस्करण 1987

29. देश एक कलाएं अनेक - डॉ० वंशीराम शर्मा , आर्य प्रकाशन मण्डल , दिल्ली-31 , प्रथम संस्करण 1988

30. नया हिन्दी काव्य - डॉ० शिव कुमार मिश्र , अनुसन्धान प्रकाशन , कानपुर - 1962

31. नरेश मेहता के काव्य का अनुशीलन - प्रतिभा मुदालियार , सार्थक प्रकाशन , 100-B गौतम नगर , नई दिल्ली - 110 049 , 1997

32. नरेश मेहता कृत महाप्रस्थान - विष्णु प्रभाकर शर्मा , आशा प्रकाशन गुह , 30 नाईवाला करोलबाग , नई दिल्ली - 110 005 , 1985

33. निबन्ध माला - डॉ० लक्ष्मी सागर वाष्णौय , लोक भारती प्रकाशन , 15-B महात्मा गाँधी मार्ग , इलाहाबाद - 1; 1992

34. पंत एवं निराला के काव्य का तुलनात्मक अध्ययन - डॉ० मृदुला जैन , चिन्तन प्रकाशन, कानपूर

35. पंत काव्य में बिम्ब योजना - डॉ० एन. पी. कुट्टन पिल्लै , दक्षिण प्रकाशन , गाँधी बाज़ार, हैदराबाद - 500 002 , प्रथम संस्करण 1974

36. पंत काव्य में सौन्दर्य भावना - डॉ० अन्नपुरेड्डी , हिन्दी साहित्य भंडार , 55, चौपटिया रोड , लखनऊ-3

37. पंत के काव्य में कल्पना का कर्तव्य - डॉ० ब्रिजरानी भारगव , बाफना प्रकाशन , चंदा रास्ता , जयपुर-3

38. पथ के साथी - महादेवी वर्मा , भारती भंडार , प्रयाग , प्रथम संस्करण

39. पूर्व स्वतन्त्रता कविता में राष्ट्रीय एकता - डॉ० कृष्ण भावुक , शारदा प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली , प्रथम संस्करण 1995

40. प्रयोगवादी काव्य - डॉ० पवनकुमार मिश्र , मध्यप्रदेश हिन्दीग्रन्थ अकादमी , भोपाल , प्रथम संस्करण 1977

41. प्रसाद की दार्शनिक चेतना - डॉ० चक्रवर्ती , ग्रंथम, रामबाग , कानपुर 1965

42. प्राचीन भारतीय संस्कृति - बी.एन. लूनिया , लक्ष्मी नारायण अग्रवाल , पुस्तक प्रकाशन, आगरा - 3 , प्रथम संस्करण 1966

43. प्रसाद : भाररतीयता के प्रतिमान - सत्यपाल चुध , विद्या विहार , दरियांगज , नई दिल्ली, 1985

44. प्रसाद साहित्य की संस्कृतिक पृष्ठभूमि - डॉ० प्रेमदत्त शर्मा , जयपुर पुस्तक सदन , चंदा रास्ता , जयपुर , प्रथम संस्करण 1968

45. भारत की सांस्कृतिक चेतना - डॉ० गणेश खरे , शांति प्रकाशन , 84/1/संस्करण 1989

46. भारत के त्योहार - सुरेशचन्द्र शर्मा , आत्माराम एण्ड सन्स , दिल्ली-६ , 1983

47. भारतीय भूतत्व की भूमिका - डॉ० एम.एस. कृष्णन , वसन्त माल्लिका वारन रोड़ , मैलापुर मद्रास , प्रथम संस्करण 1955

48. भारतीय मेलों और उत्सवों का दिग्दर्श - वेद प्रकाश गुप्त , जीवन ज्योति प्रकाशन , दिल्ली - 110 006 , प्रथम संस्करण 1995

49. भारतीय संस्कृति आधार और परिवेश - कलानाथ शास्त्री , शीतल प्रिन्टर्स , फिल्म कालोनी , जयपुर - 302 003

50. भारतीय संस्कृति का प्रवाह - इन्द्रविद्या वाचस्पति , भारतीय साहित्य मन्दिर , फव्वारा, दिल्ली 1959

51. भारतीय संस्कृति की महिमा - डॉ० कृष्ण भावुक प्रेम प्रकाशन मन्दिर , 301, बल्लीमारान , दिल्ली - 110 006 , प्रथम संस्करण - 1992

52. भारतेन्दुकालीन हिन्दी साहित्य सी संस्कृतिक पृष्ठभूमि - डॉ० कमला कनेडिया , विश्व विद्यालय प्रकाशन , विशालाक्षी चौक , वाराणसी , प्रथम संस्करण 1971

53. महादेवी वर्मा के श्रेष्ठ गीत - गंगा प्रसाद पाण्डेय , राजपाल एन्ड सन्ज़ , काश्मीरी गोट दिल्ली - 6 , प्रथम संस्करण 1968

54. महाभारत भाषा टीका - सबल सिंह चौहान , ठाकुर प्रसाद एण्ड सन्स , राजा दरवाजा शाखा , वाराणासी

55. मानसरोवर और कैलास - श्री सुशीलचन्द्र भट्टाचार्य , नागरी प्रचारणी सभा , काशी

56. रामनरेश त्रिपाठी और उनका साहित्य - डॉ॰ राममूर्ति शर्मा , आर्या बुक डिंपोट, करोलबाग

57. विविध साहित्यिक वाद - डॉ॰ रामसजन पाण्डेय , अभिनव प्रकाशन , बड़ा बाज़ार, रोहतक , प्रथम संस्करण 1990

58. श्रीधर पाठक तथा हिन्दी का पूर्व स्वच्छन्दतावादी काव्य (1875 - 1925) - डॉ॰ रामचन्द्र मिश्र रंजीत प्रिटंर्स एन्ड पब्लिशर्स, चाँदनी चौक, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1959

59. स्कन्द गुप्त (नाटक) - जयशंकर प्रसाद , भारती भंडार , इलाहाबाद , 1997

60. संकल्पिता - महादेवी वर्मा , सेतु प्रकाशन , झाँसी , पञ्चम संस्करण 1969

61. सुमित्रानन्दन पंत जीवन और साहित्य - शान्ति जोशी , राजकमल प्रकाशन प्र.लि. , 8, फौज बाज़ार , दिल्ली-6 , प्रथम संस्करण 1970

62. सुमित्रानन्दन पंत मूल्यांकन - इन्द्रनाथ मदान , लोक भारती प्रकाशन , 15-B महात्मा गाँधी मार्ग , इलाहाबाद , प्रथम संस्करण 1975

63. हमारे व्रत तथा त्योहार - डॉ॰ शुकदेव दुबे , पराग प्रकाशन , 3/114 कर्ण गली , विश्वास नगर , शाहदरा दिल्ली - 32 , प्रथम संस्करण 1983

64. हज़ारी प्रसाद द्विवेदी ग्रंथावली-9 - राजकमल प्रकाशन प्र.लि. , 8, नेताजी सुभाष मार्ग, नयी दिल्ली-2 , 1981

65. हिन्दी के प्रतिनिधि कवि - गंगा प्रसाद पाण्डेय , महादेवी वर्मा के सम्बन्ध में, राजपाल एन्ड सन्ज , काश्मीरी गेट, दिल्ली , 1979

66. हिन्दी में लम्बी कविता अवधारणा स्वरुप एवं मूल्यांकन - कमलेश्वर प्रसाद , भारतीय जलन्धर , प्रथम संस्व रण

67. हिन्दी साहित्य और उसकी प्रमुख प्रवृत्तियाँ - गोविन्द राम श्रमा , हिन्दी साहित्य संसार, पटना - 4 , प्रथम संस्करण 1961

68. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ० नगेन्द्र , मयूर पेपर बोक्स , B-15, सेक्टर-5 , नोइडा 201 301 , प्रथम संस्करण 1973

69. हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास - बच्चन सिंह , राधाकृष्ण प्रकाशन , 2/38 अंसारी मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली - 110 002 , प्रथम संस्करण 1996

70. हिमगिरि विहार - सुधांशु चतुर्वेदी , स्वामी तपोवनम जी महाराज , वासुदेव प्रकाशन , उत्तर काशी , दिल्ली

71. हिमाचल गौरव - डॉ० हरिराम जसटा , सन्मार्ग प्रकाशन , दिल्ली-7 , प्रथम संस्करण 1972

72. हिमाचल प्रदेश की झाँकी - डॉ० हरिराम जसटा , राजपाल एन्ड सन्ज , काश्मीरि गेट , दिल्ली , प्रथम संस्करण 1989

73. हिमाचल प्रदेश के लोक नृत्य - डॉ० हरिराम जसटा , सन्मार्ग प्रकाशन , 16. यू.बी. बैंगलो रोड़ , दिल्ली - 110 007 , प्रथम संस्करण 1978

74. हिमाचल में पूजित देवी देवता - मौलूराम ठाकुर , दिग्दर्शन चरण जैन , ऋषभ चरण जैन एवं संतति , नई दिल्ली - 110 002 , 1981

75. हिमालय की संपदा - डॉ० प्रेमस्वरुप सकलानी , हिमाचल पुस्तक भंडार , गाँधी नगर , दिल्ली - 110 031 , प्रथम संस्करण 1983

76. हिमालय के खानाबदोश - श्याम सिंह शशि , राजपाल एन्ड सन्स , काश्मीरी गेट, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1978

77. हिमालय में भारतीय संस्कृति - डॉ० विश्वम्भर सहाय प्रेमी , रंगदुलारी वाजपेयी , चैतन्या, कानपुर 1965

78. हिमालयी संस्कृति के मूल्याधार - प्रो. डी.डी. शर्मा, इरा प्रकाशन, पंत कुटीर, लक्कड बाज़ार सोलन, हिमाचल प्रदेश 173 212

परिशिष्ट - 3

अंग्रेज़ी पुस्तकें

1. A critical study of Bhagavatha Purana - R.T.S. Rukmani, The Chowkhamba Sanskrit Series Office, Varanasi-1, First Edition 1970

2. Every man's Encyclopaedia (Volume 6) - E.F. Bozman Inertial Navigation Ghana, Fifth Edition 1967.

3. Geology of India - Wadia D.N., Mac Millian, London 1961

4. Himalayam -The King of Nepal - Arnold Toynbee, Sir Emund Hillary Introduction, Harry N. Abrams, New York.

5. In the Lap of Himalayas - Swami Akhandananda, Sri Rama Krishna Math 16, Ramakrishna Math Road, Madras - 600 004, India

6. India In Kalidasa - Bhagavat Sharan Upadyaya, Chand & Co, Delhi, 1968

7. Kailas - Manasarovar - Swami Pranavananda, S.P. League Ltd, Calcutta 1949

7. Mineral Wealth of Jammu and Kashmir - G.S.I. Wide, Directors Report, Volume 26 (2), 1972

8. Student's Britannica - Volume Two (D-H), Encyclopaedia Britannica, India, New Delhi

9. The Bhagavath Gita - Swami Chidbhavananda Srirama Krishna Tapovanam, Tirupparaitturai - 639 116, 1984

10. The Discovery Of India - JAWAHARLAL NEHRU, Asia Publishing House, Bombay, 1961

11. The Encyclopaedia Indica - Nagendranath Vasu, B.R. Publishing Corporation, Delhi-110 052, First Printed 1919

12. The message of Upanishads - Swami Ranganathananda Bharatiya Vidya Bhavan Chowpatty Bombay-17, 1968

13. The New Book of Knowledge - H. Volume 8 Copy Right 1972 by Grolier incorporated, Philippines

14. The World Book Of Encyclopaedia - H. Volume 9 , Copy Right 1970 , U.S.A. Field Enterprises , Educational Corporation , London

15. The Voice Of Himalayas (Poetry Collection) - R.S. DINAKAR , Sri hourange Press Ltd , 5, Chintamani Das Lane , Calcutta-9

परिशिष्ट - 4

कोश

हिन्दी

1. पुराण संदर्भ कोश - पद्मिनी मेनन , रामबाग , कानपुर-12

2. बृहत हिन्दी पर्यायवाची शब्द-कोश - गोविन्द चातक , तक्षशिला प्रकाशन, अन्सारी रोड़ , दरियागंज, नई दिल्ली , प्रथम संस्करण 1969

3. संस्कृति - हिन्दी कोश - वामन शिवराम आप्टे, मोतीलाल बनासीदास, दिल्ली 1966

मलयालम

1. पुराण निघण्डू (भाग 3) - वेट्टम माणि , नाश्नल बुक स्टाल , कोट्टयम, प्रथम संस्करण 1967

2. सरस्वती हिन्दी शब्द कोश - शिवकुमार शर्मा अनिल प्रकाशन , न्यू मार्कट, नई सड़क , दिल्ली-110 006 , प्रथम संस्करण 1990

परिशिष्ट - 5

मलयालम

1. कालिदास सर्वस्वम् - डॉ० सुधांशु चतुर्वेदी , सुधा पब्लिकेशनस , त्रिशूर-1 1975
2. काश्मीरीन्टे कथा - के. शिवशंकरन नायर , करन्ट बुक्स , कोट्टयम - 1999
3. पुरी मुतल नासिक वरे - वेट्टूर रामन नायर , डी. सी. बुक्स, कोट्टयम १९९६
4. पद्मपुराण - भाग II , अनुवादक : वी. बालकृष्णन तथा आर लीला देवी , बेकर रोड़, कोट्टयम , पहला संस्करण 1977
5. सर्वविज्ञानकोशं - डॉ० वेल्लायणी अर्जुनन , (भाग 5, भाग 8, भाग 9) स्टेट इन्स्टीट्यूट आप एन्सैक्लोपीडिक पब्लिकेशनस् , तिरुवनन्दपुरम् , प्रथम संस्करण 1987
6. मत्स्य पुराणम् - अनुवाद वी बालकृष्णन तथा आर लीला देवी बेकर रोड़, कोट्टयम पहला संस्करण 1976
7. हिमालय तीर्थगल - डॉ० दानानन्द स्वामिकल , श्री रामकृष्णादैवताश्रम , कालडी - 683 579, प्रथम संस्करण 1988
8. हिमवान्टे मुक्लतट्टिल - राजन काकनाडन , डि.सी. बुक्स, कोट्टयम 1980

परिशिष्ट - 6

संस्कृत पुस्तकें

1. कुमारसंभव भाषान्तरण - महाकवि कालिदास रचित , विराज एम.ए. राजपाल एन्ड सन्ज तीसरा संस्करण दिल्ली 1961
2. कूर्मपुराणम् (हिन्दी अनुवाद) - आचार्य तारिणीश झा, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग - 12, सन्मार्ग मार्ग , इलाहाबाद

3. किरातार्जुनियम् - महाकवि भारविप्रणीतं , चौरवम्बा संस्कृत सीरिज़ , वाराणासी-1 चतुर्थ संस्करण 1961

3. रघुवंश महाकाव्य - महाकवि कालिदास विरचितं , पण्डित पुस्तकालय , काशी

4. मेघदूतम् - महाकवि कालिदास विरचितं , चौखम्बा संस्कृत सीरीज , वाराणासी-1 षष्ट संस्करण 1962

5. शिवमहापुराणम् (समाहात्म्यम्) - भाग 1, संपादक पं. रामतेजपाण्डेय चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन , 37/117 गोपाल मंदिर लेन , वाराणासी पुनमुद्रित 1986

6. श्री मन्महाभारतम् - महर्षि श्री कृष्णद्वैपरायन प्रणीतं , गीता प्रेस, गोरखपुर , प्रथम संत्करण